[illegible]

[illegible]

विषय सूची

क्रमांक	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	प्राक्कथन	
2.	भूमिका	
3.	सत्संग	1-177

द्वितीय संस्करण – जून, 2005 – 3000 प्रतियां

संकलनकर्त्री : डा0 कमला
प्राध्यापिका,एम0एम0कॉलेज,फतेहाबाद

पताः
जयमल सिंह, एडवोकेट
कोठी नं0 332, सैक्टर 15-A
हिसार 125001 (हरियाणा)
✆ 01662-244725

सर्वाधिकार सुरक्षित

इस पुस्तक का कोई भी अंश किसी भी माध्यम से प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना प्रकाशित करना अविद्यिमान्य होगा।

मूल्य : 20.00 रूपये

(यह पुस्तक कैप्टन लाल चन्द जी के सत्संगों पर आधारित है)

सहज-योग

सत्संग संग्रह

मानव उत्थान के लिए
कैप्टन लाल चन्द जी
द्वारा दिये गये सत्संगों का
पुस्तक रूपान्तरण

राधास्वामी

प्राक्कथन

आज के वैज्ञानिक युग में जहां मानव एक ओर विज्ञान के क्षेत्रा में उन्नति के चरम शिखर पर पहुंच रहा है तो दूसरी ओर उस पर भय, निराशा व अशान्ति के काले बादल मंडरा रहे हैं। ऐसे समय में संसार में शान्ति का वातावरण लाने के लिए सन्त रूपी देदीप्यमान सूर्य भी उन घनघोर काले बादलों की घटाओं को मिटाने के प्रयास में लगे हुए हैं। सभी सन्तों का सन्देश एक ही है, चाहे वे किसी देश, जाति या समय में क्यों न आए हों। उनका उद्देश्य अपने सार–गर्भित वचनों से दुखी जीवों के अज्ञान को दूर कर उन्हें शान्ति प्रदान करना है। उनकी अमृतवाणी से गृहस्थियों के घर संसार की जटिल समस्याओं का समाधान व अशान्त हृदयों में शान्ति का संचार सहज में ही हो जाता है। अतः मनुष्य का वास्तविक कल्याण सत्संग में ही निहित है और यह सत्संग राम कृपा के बिना नहीं मिलता। जैसा गोस्वामी तुलसीदास जी ने कहा है –

''बिन सत्संग विवेक न होई, राम कृपा बिन सुलभ न सोई''

ऐसी ही राम की अपार कृपा मुझ पर उस समय हुई, जब मैं वर्षों की भटकन के बाद हजूर महाराज कैप्टन लालचन्द जी के सम्पर्क में आई। इनकी दया दृष्टि से मेरे धर्म सम्बन्धी सभी भ्रम दूर हो गए और मेरा मन ठहर गया। इन्होंने मुझे वह अमूल्य रत्न प्रदान किया, जिसकी मैं व्याख्या कर ही नहीं सकती।

प्रस्तुत पुस्तक 'सहज योग' हजूर महाराज कैप्टन लालचन्द जी के उन सत्संगों का संकलन है, जिसमें सन्तमत व राधास्वामी मत की अत्यन्त सरल शब्दों में व्याख्या की गई है। इसमें सुमिरन, ध्यान व भजन के माध्यम से अपने इसी जीवन में सहज तरीके से जीवन्मुक्त अवस्था को प्राप्त करने की सरलतम विधि बताई गई है और साथ ही इस बात पर भी प्रकाश डाला गया है कि मनुष्य इस संसार में गृहस्थ के सब काम करते हुए, उनमें लिप्त न होते हुए कैसे सुखी रह सकता है?

इन सत्संगों में हजूर महाराज जी की रहनी, विचारों व अनुभवों की झलक स्पष्ट देखी जा सकती है। इनमें लिखी गई सभी बातें शास्त्राों पर आधारित न होकर हजूर महाराज जी के जीवन में उतरी हुई एवं अनुभव की कसौटी पर कसी हुई हैं। इन सत्संगों में वह अमूल्य उपदेश है जो हर क्षण मोती में पिरोकर स्मरण किए जाने योग्य है। परन्तु आज का बुद्धि जीवी तर्क–वितर्क व कांट–छांट का आदी हो गया है। वह हर महापुरुष को अपनी बुद्धि की कसौटी पर तराशता है। लेकिन यह बुद्धि का विषय नहीं है। सन्त की पहचान में मानव की तुच्छ बुद्धि बहुत पीछे रह जाती है। यह ज्ञान तो वह तभी प्राप्त कर सकता है, जब वह सन्तों का संग करे, उनकी अमृत वाणी का श्रवण करे और उसे अपने अन्तर घट में ले जाकर उस पर अमल करे। अतः यदि मनुष्य अपनी आत्मिक उन्नति के लिए इन उपदेशों को अपने आचरण में ले आए तो उसका कल्याण निश्चित है।

इन सत्संगों को पुस्तक का रूप देने का श्रेय सबसे पहले सन्तूराम खर्ब (ऑडिटर) को जाता है जिन्होंने अपने अथक प्रयास से टेपरिकार्ड से इन सत्संगों को लिपिबद्ध किया। उनके कठिन परिश्रम से ही ये सत्संग पुस्तक का आकार ले सके हैं। अतः मैं उनके प्रति अपना आभार व्यक्त करती हूं।

जनकल्याण के लिए इस पुस्तक को प्रकाशित करवाने में वकील साहब जयमल सिंह जी का योगदान तो अविस्मरणीय ही है। उन्हीं के मार्ग निर्देशन में यह सब कार्य सम्पन्न हुआ है। अतः मैं तहदिल से उनका धन्यवाद करती हूं।

पुस्तक को प्रकाशित करवाने में अपना आर्थिक सहयोग देने वाले कार्यकारी अभियन्ता आचार्य श्री जिले सिंह सांगवान जी का मैं हार्दिक धन्यवाद करती हूँ, जिनके सहयोग से यह पुस्तक प्रकाशित हुई। इसके साथ ही अपना आंशिक योगदान देने वाले पूर्व सरपंच श्री शेरसिंह जी किरतान वाले व के.एस.सूद जी के प्रति मैं आभार व्यक्त करती हूँ। आशा है इस पुस्तक के सार–तत्त्व से सभी लाभान्वित होंगे।

– **डा0 कमला,** प्राध्यापिका, एम.एम. कॉलेज, फतेहाबाद
दूरभाष : 01667-225520, मोबाइल 94164-75568

भूमिका

प्रस्तुत पुस्तक का उद्देश्य अपने गुरू परम दयाल प्रातः स्मरणीय पण्डित फकीरचन्द जी महाराज का इस शताब्दी में जो सच्चाई उन्होंने अपने मस्तिष्क में खोज करके मनुष्य जाति के भ्रम, शंका व अन्धविश्वास को दूर करने के लिए बताई, उसका प्रचार करना है जिससे जीवन के हर पहलू में सुख–शान्ति और आनन्द से इस जीवन का रस लेकर मनुष्य जी सके।

पहले मुझे मानवदयाल जी महाराज (डा0 आई.सी. शर्मा) ने कई बार कहा कि लालचन्द, तुम अपना अनुभव कुछ लिखकर भेजा करो जो मानव–मन्दिर पत्रिका में छपवाया जा सके। मैंने कई बार इसे लिखने की कोशिश की परन्तु जब मैं लिखने बैठता तो मेरी सहज में समाधि लग जाती और मेरा लिखने को दिल ही नहीं करता। मेरे मन में यह विचार आता कि आज तक बहुत महापुरूष हुए हैं, जिन्होंने बहुत कुछ लिखा है। जैसे – रामायण, गीता, बाईबल, कुरान शरीफ इत्यादि। उनको लोग पढ़ते हैं, परन्तु मैं तो किसी को शान्त नहीं देखता। इसलिए मुझे फिकाई थी कि मेरी चार लाईनों से क्या होगा? टिटहरी की आवाज कारखाने में कौन सुनेगा?

परन्तु मेरी यह इच्छा अवश्य थी कि मेरे गुरू परम दयाल जी ने अति परिश्रम करके इस धर्म के विषय में जो इस युग में नई बात कही है, जिसे आज का बुद्धिमान् मानव जानना चाहता है, उसको मैं मनुष्य जाति तक फैलाऊं। क्योंकि जो उन्होंने कहा और अनुभव किया, उस सच्चाई को आज के समय के अनुसार कोई महात्मा नहीं कह रहा है, केवल पिछलों की कथा और शास्त्रों की बात ही सत्संगों में कही जा रही है। जो अब खोज कर रहे हैं या इसका अनुभव कर रहे हैं, उसके विषय में कोई चर्चा नहीं कर रहा है। इसलिए मैं चाहता था कि यह युग पुरुष जो धर्म में नई बात साफ शब्दों में कह गए, उसका प्रचार हो और इस विषय पर आगे खोज की जाए और मुक्ति व शान्ति का सुख इसी जीवन में अनुभव किया जाए।

मेरे इस उद्देश्य को पूरा करने में डा0 कमला का महत्वपूर्ण योगदान है, जो मेरी विशेष शिष्या है और पूर्ण अनुभवी है तथा जो सन्तों के सुरत–शब्द योग का तथा आत्म पद का अनुभव करती है। यह चाहती हैं कि इस ज्ञान को समाप्त न होने दिया जाए। इसको बुद्धिजीवियों में फैलाया जाए ताकि मनुष्य जाति का कल्याण हो सके। अतः इस पुस्तक को लिखने का परिश्रम डा0 कमला का है। मैंने तो केवल सत्संग दिए थे जो इसने रिकार्ड कर लिए थे और अब इनको लेखनी–बद्ध कर पुस्तक का रूप दे रही हैं।

मैं अभी अस्सी साल का हो गया हूँ, यह काम मैं अब अधिक नहीं कर सकता हूं। अतः यह कार्य मैं डा0 कमला को सौंप रहा हूँ कि यह सच्चाई जो परम दयाल प0 फकीरचन्द जी महाराज ने इस समय में मनुष्य जाति को अज्ञान, भ्रम से निकालने के लिए अपने अनुभव में बतायी है, उसे यह आगे जारी रखेगी। मेरे सत्संगों का रिकार्ड सब इसके पास है। जो भाई–बहन किसी प्रकार की शंका का समाधान करना चाहें, डा0 कमला, संस्कृत प्राध्यापिका, एम.एम. कालिज, फतेहाबाद से मिलाप कर सकते हैं।

इन सत्संगों में मेरे जीवन का अनुभव है और वह सच्चाई जो मेरे परम गुरू महाराज ने बताई थी, मैंने अनुभव करके जिस बात को देखा, वही लिखा है। कोई भी सुनी सुनाई बात नहीं है।

कैप्टन लालचन्द
गांव दांदू, जिला चूरू (राजस्थान)
दूरभाष : 01562-283121

(1)

राधास्वामी

स्थान : दांदू
दिनांक : 3.5.98

प्यारे सत्संगी भाई और बहनों,

सत्संग से पहले डा0 कमला आपको राधा–स्वामी मत की विनती गाकर सुनाएगी –

करूं विनती दोउ कर जोरी,अर्ज सुनो राधास्वामी मोरी।
सतपुरूष तुम सतगुरू दाता,सब जीवों के पिता और माता।
दयाधार अपना कर लीजे,काल जाल से न्यारा कीजे।
सतयुग त्रोता द्वापर बीता,काहू न जानी शब्द की रीता।
कलयुग में स्वामी दया विचारी परगट करके शब्द पुकारी।
जीव काज स्वामी जग में आए,भवसागर से पार लगाए।
तीन छोड़ चौथा पद दीन्हा,सतनाम सतगुरू गत चीन्हा।
जगमग जोत होत उजियारा,गगन सोत पर चन्द्र निहारा।
सेत सिंहासन छत्रा विराजे, अनहद शब्द गैब धुन गाजे।
क्षर अक्षर निः अक्षर पारा, विनती करे जहां दास तुम्हारा।
लोक अलोक पाऊँ सुख धामा, चरन सरन दीजे विसरामा।

आपने यह राधास्वामी मत की विनती सुनी, जो सतगुरू के सामने प्रार्थना की गई है। लम्बा पूरा योग गाया है इसके अन्दर। भक्त और योगी लोग अन्दर क्या–2 नजारे देखते हैं? जो प्रकाश और शब्द का खेल हैं, वह सब पूरा बतलाया। अन्त में प्रार्थना की है–

लोक अलोक पाऊं सुख धामा।
चरण शरण दीजे विश्रामा।

हे गुरूदेव, इस लोक में जब तक मैं जीता हूँ, मुझे सुख शान्ति मिले। जब शरीर छोड़ कर मैं जाऊं, वाहि लोक में, वहां पर मुझे चैन और शान्ति मिले। आप मेरे रक्षक बनें। यह असली प्रार्थना है तो सन्त मत में निज घर जाने की बात है। सत्संग में तो सन्तों ने यह कहा है कि हां लौट चलो, लौट चलो आसमानी। उनका कहना है कि इस लोक में कोई सुखी रह नहीं सकता, चाहे राजा हो, चाहे

गरीब हो, चाहे अमीर हो। इस लोक में जीव दुःखों के अन्दर रहता है, जन्मता है। जब से उसे होश आता है तो शरीर की चिन्ता, जब समझदार होता है तो मन की चिन्ता फिर धन की और बुढ़ापे में शरीर में तरह–2 के रोग की चिन्ता। मतलब यहां कोई सुखी नहीं रह सकता। तो सन्तों ने कहा भाई, तुम सतगुरू के पास जाओ। वो दयालु, कृपालु है। वो आपको अपने निज घर जाने का रास्ता सहज में बता देगा। उसके बताए रास्ते पर चलने से तुम इसी जिन्दगी के अन्दर मुक्त हो जाओगे। शान्ति, आनन्द की अवस्था को जान लो। यह उत्तम मार्ग है। तो सत्संग में जो कुछ प्राप्त होता है, जीव को वह पता नहीं। अलग–2 अपनी अवस्था है। मुझे क्या प्राप्त हुआ? क्या मिला इस सत्संग से? पहले तो सत्संग है कि सत् के साथ संग किया जाए। सत् कहां है? जो अन्दर बोल रहा है। मेरे अन्दर, आपके अन्दर, सबके अन्दर वो सत् है। उसका संग करना है और वो अपने आप करना है, पर जीव को ज्ञान नहीं। इसलिए इसका संग करने के लिए वह बाहर भटकता है, जंगलों में जाता है, पहाड़ों में जाता है, देवी–देवताओं के पास जाता है। तरह–2 की व्यवस्था करता है। कोई सूरज को पानी देता है, कोई व्रत करता है, कोई नियम करता है, कोई कर्म करता है, कोई दान करता है। अपने–2 संस्कारों के अनुसार जीव इस धर्म का पालन करता है। तो सतगुरू ने कहा भाई, ये जो तुम कर रहे हो, इससे तुमको शान्ति और परम सुख नहीं मिलेगा इसलिए तुम सतगुरू खोजो। तो क्या मैंने सतगुरू खोजा? मुझे क्या मिला? मैं राजस्थान में पिछड़े हुए इलाके का रहने वाला था। साधारण जमीदार परिवार में पैदा हुआ था। वहां पर कोई विशेष धर्म–कर्म की बात नहीं थी। दिन भर काम और रात को आराम। पिता जी जमीदार आदमी थे, छोटा सा गांव था, 15-20 घर का, उसमें मैं पैदा हुआ। कोई संस्कार नहीं था। बस यही थोड़ा खेलना, खाना, फिर छोटी आयु में सेना में चला गया, बहुत जल्दी कमीशन मिल गया, कोई तकलीफ न थी। मेरे ऊपर संस्कार पड़े कि

मैं कहीं बाहर जाऊं, तो किसी ने कहा उस जगह पर कोई महात्मा है। मैं पूना स्कूल में सिगनल में रहा। सेना में लेक्चरार था, जे.सी. ओ.। तो वहां पर रामटेकरी में एक महात्मा रहते थे। प्राणायाम के योगी, जो गुफा में रहते थे और शाम के समय एक घण्टे के लिए बाहर आक्सीजन लेने के लिए आते थे। वहां बहुत लोग जाते थे। मुझे किसी ने कहा, मैं भी वहां चला गया। महात्मा जी आए और आंख बन्द करके बैठे रहे और बैठ के थोड़ी देर बाद नीचे चले गये। किसी की तरफ आँख खोल के देख लिया और चले गये। कोई कहता था बाबा जिसकी तरफ नजर करता है – ये होता है, वो होता है, अपने–2 ख्यालों से उसकी बात करते थे। फिर मैं महुआ गया। वहां पर मैं स्कूल ऑफ सिगनल में था। वहां पर भी एक महात्मा था, जो अमेरिका से आया था और जिसका नाम महेश योगी था। उसने बहुत बड़ा मन्दिर बना रखा था। नए–2 चमत्कार कर रखे थे। मैं भी वहां पर गया। महात्मा जी गुफा में नीचे बैठे हुए थे। घंटी बजाई। महात्मा जी ने आँख बंद करी और अन्दर ही अन्दर कुछ कर रहे थे। मैंने प्रश्न किया कि – महाराज जी आप क्या करते हैं? कहने लगे – भाई, यह तो गुप्त बात है। मैं भजन करता हूँ। फिर मैंने पूछा – आप ने इतना–2 काम कर रखा है। इतनी बड़ी–2 पत्थर की मूर्तियां कहां से कैसे लाए? कहने लगे यही तो चमत्कार है। प्रभु करे तो क्या नहीं हो सकता ? उन्होंने बात रहस्य में कही, समझ नहीं आई। लेकिन मेरी जिज्ञासा बढ़ गई। इसी तरह से काफी दिन गुजर गए। एक बार मैं पंजाब में था। कोई युद्ध की अभ्यास चल रहा था, मिलिट्री का। वहां पर मुझे मेरे साथ वालों ने शिकायत की कि एक सूबेदार धर्म सिंह है, जो रात को सोता नहीं है और कम्बल ओढ़ कर बैठा रहता है। तो मैंने सूबेदार धर्म सिंह को शाम को बुलाया और पूछा आप रात को क्या करते हो? उसने कहा – साहब, मैं भजन करता हूँ। मैंने कहा – बेटा, वो क्या होता है? उसने कहा – यह बात तो मैं बता नहीं सकता हूँ। उसका आनन्द आपको कह नहीं

सकता हूँ। दुनिया में ऐसा कोई आनन्द नहीं है,जो उसके मुकाबले में हो। यह तो गुरू ही बता सकता है। इस तरह मैं उसे रोज बुला लेता और उससे बातें करता। उसकी बातों के प्रति मेरी जिज्ञासा बढ़ती गई। कोई खास चीज है – भजन, जो मुझे करना चाहिए और जानना चाहिए। पांच दस दिन हम Exercise में रहे और उसके बाद व्यास राधास्वामी डेरे के पास जाकर के हमने कैम्प किया। सूबेदार धर्मसिंह हजूर सावन सिंह जी महाराज के शिष्य थे, लेकिन उस समय सावन सिंह जी महाराज ने समाधि ले ली थी और बाबा चरणसिंह जी काम कर रहे थे। हम डेरे में गए। हमने वहां अफसर से इजाजत ली और मैं सूबेदार धर्मसिंह जी के साथ गया और वहां महाराज चरण सिंह जी का सत्संग सुना। सत्संग तो मुझे कुछ समझ में आने की बात नहीं थी, पर प्रेम था। मैं बैठा रहा। जब वह उठकर के अपनी कोठी पर गए तो मैं भी उनके साथ–2 चला गया। वहां जाने पर धर्मसिंह तो बड़े प्यार से रोने लगे और महाराज जी ने उनको बड़े प्यार के साथ समझाया, उसके बाद उन्होंने मेरी तरफ दृष्टि की और कहने लगे–कहिए साहब, आप क्या चाहते हैं? मैंने कहा महाराज जी, धर्मसिंह जी कहते हैं कि भजन, गुरू बताता है, गुरू नाम देता है। अतः आप कृपा करके मुझे भी वह नामदान और भजन बताइये कि वह क्या होता है? महाराज जी हंस पड़े और कहने लगे – नाम तो आपके अन्दर है। आपको सुन भी जाएगा। आप आए ही इसी काम के लिए हैं। फिर मैने कहा – मुझ पर आज ही कृपा कर दीजिए। महाराज जी कहने लगे आज तो कोई प्रोग्राम ही नहीं है, दूसरा आप कुछ दिन तक सन्तों का सत्संग सुनो, कबीर, गुरूनानक, राधास्वामी किसी का भी। उसके बाद आप मेरे पास आ जाओ, फिर आपको बहुत जल्दी समझ आ जाएगी। मुझे लगन थी, जिसको कहते हैं –

''आर्त्त के मन रहे न चेतु, फिर–2 कहत अपना हेतु''।

मैंने कहा महाराज जी! आज ही कृपा करो। कल का क्या पता और

मैं फिर मिलट्री का आदमी हूँ, पता नहीं आ सकूं ना आ सकूं। उन्होंने मुझको काफी समझाया कि यह एक दिन की बात नहीं है। आप जल्दी मत करो, कहने के मुताबिक सत्संग सुनके फिर आओ। इनके समझाने बुझाने पर भी जब मैंने ज्यादा जिद्द की तो उन्होंने बड़े–2 आदमियों जैसे सेना के जनरैल, ब्रिगेडियर, सेठ साहूकार आदि की तरफ इशारा करके कहा कि अगर नकट्टों में शामिल होना है तो आप भी आ जाओ, नहीं तो जैसा मैं कहता हूं, वैसा करो। पहले आप सत्संग सुन कर आओ और फिर बाद में आपके लिए नामदान या भजन का तरीका ठीक रहेगा। मैं वापिस आ गया और वहां हमेशा 15 दिन के बाद पत्रा लिखता रहा कि नामदान के लिए वहां कब आऊँ? पत्रा में यही जवाब आता कि नामदान आपको जरूर मिलेगा। अब आगे सावन का भण्डारा है, तब आ जाना। इसके साथ ही मैं 15-20 दिन अम्बाला शहर में बाबा खन्ना जी के सत्संग सुनता रहा और मेरे यह समझ आई कि आंख बन्द करके अन्दर की तरफ कुछ बाजे वगैरा, कई तरह के राग सुनते हैं और अन्दर जो राग होता है, उसी का नाम भजन है। जब मैं व्यास गया, वहां बहुत ज्यादा भीड़ थी। बहुत सत्संगी आए हुए थे। मिट्टी की सेवा चली हुई थी। उनमें एक रिटायर्ड बाबू लाल जज थे, जो डेरे का प्रबन्ध करते थे। उनकी तरफ संकेत करके महाराज जी ने मेरे बारे में कहा कि इनको ले जाओ और देखभाल करो। वे मुझे ले गए और उन्होंने मुझे रहने की जगह दी। मैं वहां दो तीन दिन तक सुबह शाम महाराज जी की कोठी के आगे जाता रहा। मुझे पूरी आशा थी कि महाराज जी मुझे अपने पास अवश्य बुलायेंगे और कहेंगे कि तू बड़ा प्यारा है, तू बहुत दिन से तड़फ रहा है। लेकिन मुझे वहां कोई अन्दर नहीं जाने देता था, क्योंकि वहां संगत बहुत थी। एक दिन मिट्टी की सेवा हो रही थी। मैं भी मिट्टी की सेवा कर रहा था। सिर पर टोकरी थी। महाराज जी पास में ही बैठे थे तभी मैंने एक सत्संगी को कहा कि भाई क्या आप महाराज जी से यह पूछेंगे कि एक

सत्संगी उनसे बात करना चाहता है। उसने जाकर महाराज जी के कान में धीरे से कहा कि महाराज जी एक सत्संगी आपसे बात करना चाहता है। महाराज जी ने जोर से कहा कि यहां पर क्या बात करेगा? यहां सब सत्संगी इकट्ठे हो जायेंगे और सेवा रुक जायेगी। इसलिए कोठी में आ जाए, वहां पर मिल लूंगा। जब उन्होंने कहा कि कोठी में आ जाए और बात करे तो बस मेरा विश्वास खत्म हो गया कि महाराज जी कोई अन्तर्यामी नहीं हैं। मैं समझता था कि गुरू बड़े अन्तर्यामी हैं। वो मन की बात जानते हैं, इसलिए वो मुझे बुलायेंगे और कहेंगे कि तू बड़ा प्यारा बेटा है। लेकिन इनको तो ज्ञान ही नही है कि मैं रोज इनकी कोठी के पास जाता हूँ और वहां मुझे कोई अन्दर जाने नहीं देता। बस मेरा जो भ्रम या अन्धविश्वास था, वह टूट गया। मैंने वापिस आकर टोकरी फेंक दी और सीधा उस मकान में गया, जहां मेरा सामान रखा था। मैंने सामान को बांधा और चलने के लिए तैयार हुआ तो बाबू लाल जी कहने लगे कि आप गलती कर रहे हो। आप ठहर जाओ। कल जोड़ों के नाम से पहले महाराज जी से स्पेशल प्रार्थना करके आपको नाम दिलाऊंगा। मैंने कहा भाई। मैं तो नहीं रुकूंगा। उन्होंने कहा आपको काल ले जा रहा है। मैंने कहा मैं तो जहन्नुम में जाऊंगा, लेकिन अब ठहरूंगा नहीं ओर मैं वहां से चल दिया। मैं व्यास आया और जी.टी.रोड पर बैठ गया। वहां से किसी बस में बैठकर जलन्धर की तरफ चल दिया। रास्ते में मुझे ख्याल आया कि जिस चीज के लिए मैंने छुट्टी ली थी, वो मुझे प्राप्त न हो सकी। न नाम ही मिला, न घर में बाल बच्चों को सम्भाला। तब पोस्ट ऑफिस के ऑफिसर जो मेरे साथ अम्बाला में रहते थे, उनका दिया हुआ संस्कार मेरे ध्यान में आया कि होशियारपुर में पण्डित फकीरचन्द जी नाम के बहुत बड़े महात्मा हैं। अतः मैंने जलन्धर से सीधे होशियारपुर जाकर उनसे मिलने का विचार किया और मैं आकर रेल में बैठकर सुबह–2 होशियारपुर पहुंच गया। उतरते ही मैंने रिक्शा वाले से पूछा कि यहां पर कोई महात्मा रहते

हैं तो वह कहने लगा, हां जी इधर रहते हैं। तुसी बैठो और मुझे बैठाकर घुमा फिरा कर 18, रेलवे मण्डी प0 फकीरचन्द जी के घर के आगे उतार दिया जब वह चला गया तो प0 फकीरचन्द जी बाहर आए और कहने लगे – कौन है? सुबह–2 अन्धेरा था। मैंने कहा मैं भजन वगैरा पूछने के लिए आया हूँ। वह कहने लगे – आप व्यास गए थे – वहां क्यों नहीं पूछा? मैंने कहा – व्यास में मेरा मन नहीं माना। कहने लगे – कितने आदमी थे। मैंने कहा – आदमी तो लाखों थे। सेना के ब्रिगेडियर, जैनरल वगैरा तथा बड़े–2 सेठ साहूकार व धनी लोग थे। मुझसे काफी अच्छे थे। कहने लगे – उनको कुछ मिलता होगा, तभी आए होंगे। उनको मिलता होगा, मुझे मालूम नहीं। मेरा तो मन नहीं माना। कहने लगे – भाई । मैं तो कोई गुरू पीर नहीं हूँ। बूढ़ा आदमी हूँ। बुढ़ापे के दिन गुजार रहा हूँ। कोई नामदान नहीं देता हूँ। आखिर मैं निराश होकर चलने लगा तो कहने लगे – ऐसा करो कि 10 बजे आ जाना। मैं वहां से वापिस आकर एक धर्मशाला में ठहरा। नहा धोकर 10 बजे मैं महाराज जी के मकान पर गया तो उन्होंने बुला लिया। महाराज जी एक कमरे में बैठे हुए थे। मुझसे कहने लगे कुर्सी पर बैठो। मैंने कहा नहीं महाराज । क्या आपके सामने कुर्सी पर बैठूंगा? मैं नीचे ही बैठ गया। उन्होंने बहुत सी बातें कही पर मेरे को जो अभी याद है वे इस प्रकार हैं। उन्होंने कहा – सामने देखो। सामने उनके गुरु महाराज महर्षि शिवव्रत लाल जी की संगमरमर की मूर्ति रखी हुई थी। कहने लगे यह मूर्ति वाले महात्मा जब मनुष्य शरीर में थे तो मैने इनको पूर्ण ब्रह्म का अवतार माना और घर या बाहर का जो भी काम किया, इनकी सलाह लेकर किया और अब जब मैं इनका ध्यान करता हूँ तो पूर्ण में पूर्ण हो जाता हूँ और जब मैं वापिस शरीर में आता हूँ तो Ordinary (साधारण) आदमी बनके काम करता हूँ। लेकिन अगर तुम इस मूर्ति के ऊपर कूड़ा–कर्कट डाल दो या कोई अपशब्द बोल दो तो मूर्ति तुम्हारा कोई नुकसान नहीं करेगी। क्या समझे? मैंने

कहा – महाराज। मैं तो कुछ भी नही समझा। मेरी तो समझ जीरो है, क्योंकि धर्म कर्म की बात पहले कभी सुनी नहीं थी, न किसी शास्त्रा का पता था। कहने लगे – भाई ! मेरा विश्वास था कि ये पूर्ण हैं, पूर्ण ब्रह्म का अवतार हैं। इसलिए बच्चा। मैं पूर्णता में पहुंच गया। अगर तुम्हारा विश्वास नहीं तो यह तुमको कोई नुकसान नहीं देगा। धर्म केवल विश्वास का विषय है और यह सब विश्वास का खेल है। इतनी कहकर हुक्के की दो चार घूंट लेकर वे पूर्ण समाधि में चले गए। जब वे समाधि में चले गए तो मुझे ख्याल आया कि इन्होंने कहा है कि धर्म विश्वास का विषय है। मैंने इनको मान लिया कि ये पूर्ण ब्रह्म के अवतार हैं, मालिके कुल हैं और आज मैं वही पूर्ण बन गया हूँ। मैंने सोचा बूढ़े ब्राह्मण बात सही कह रहे हैं। मैं भी कई जगह महात्माओं के पास धक्के खाकर आया हूँ, अतः इन्हीं को पूर्ण गुरू मान लेता हूं। यह मन का फैसला मैंने दो चार मिनट में जब वह हुक्का बन्द करके समाधि में चल गए, तब किया। यह विचार कर न तो मुझे बैठने का पता था कि किस आसन पर बैठूं ? न मुझे नाम का पता था कि क्या नाम लूं? मैं आँख बन्द करके उनके सामने बैठ गया और वह समाधि में चले गए। 10-15 मिनट के बाद मेरी हालत यह हुई कि मेरे अन्दर वो नाम प्रकट हो गया, जिसकी चर्चा गीता में, रामायण में, भागवत में, ग्रन्थ साहिब में व अन्य शास्त्राों में कर रखी है। जब उन्होंने दोबारा हुक्का बजाया और समाधि से शरीर में आए तो मुझसे रुका नहीं गया और मैं खड़ा हो गया। खड़े होकर हाथ जोड़कर कहा कि मैं ऐसा–2 सुन रहा हूं। क्या यही है नाम? कहने लगे नाम तो यही है और यही तेरे को सुनना है, लेकिन शर्त यह है कि तुम इसे केवल सुबह शाम घण्टा–आधा घण्टा सुनोगे, सारा दिन नहीं सुनोगे। दूसरी बात तुम गृहस्थी हो। तुम ब्रह्मचर्य का पालन करोगे और तुम ऐसी–2 खुराक खाओगे। एक समय भोजन करोगे तथा और कई बातें बताई। बताने के बाद कहने लगे – अगर तुम मेरी आज्ञा का पालन करो तो फिर मेरे पास आ जाना और मेरी आज्ञा

का पालन नहीं हो तो दोबारा मेरे पास मत आना। इतनी बात सुनने के बाद मैं वहां से उनको नमस्कार करके आ गया। तो भाईयो, मैं तो जानता नहीं था कि इस नाम के बदले गुरू को क्या देना है? गुरू को तो तन–मन– धन अर्पण किया जाता है। इस नाम की कोई कीमत नहीं है। लेकिन मुझे ज्ञान नहीं था, मैं अज्ञानी था। जिन महात्माओं को, जिन लोगों को पता है, जिन्होंने धर्म शास्त्रा पढ़े हैं, जिन्होंने महिमा गाई है सतगुरू की, उन्होंने नाम की कीमत दी है। जैसे राजा जनक, जिन्होंने अपने गुरू अष्टावक्र को अपना तन–मन–धन सब अर्पण किया। इसी तरह गोपीचन्द भरथरी का नाम लेते हैं। उनकी जवानी की उम्र थी। वह अपनी सुन्दर रानी त्याग करके अपनी मां के कहने से गुरू गोरखनाथ के पास चले गए। इस तरह राजाओं ने इस नाम के लिए अपना तन, अपना मन, अपना धन और अपना राज तक दे दिया। लेकिन मेरी हालत यह थी कि मुझे अज्ञान था और मुझे ऐसे जबरदस्त नाम की बख्शिश हो गई, जिसके लिए लोग कान में अंगुलिया डाल कर बैठते हैं, धूना तपते है, कुछ पूजा – पाठ करते हैं, भेंट चढ़ाते हैं, मन्दिर में जाते हैं। परन्तु मुझे कुछ ज्ञान नहीं था, इसलिए मैं तो केवल नमस्कार करके आ गया। आने के बाद मेरी बदली कोटा बूंदी हो गई और मेरी यूनिट श्रीनगर से आगे पहाड़ों में चली गई कोटा बूंदी में मेरी हालत यह रही कि सुबह शाम नाम के साधन से बड़ी मस्ती रहती थी। मैं चाहता नहीं था कि नाम को छोड़ू, लेकिन गुरू आज्ञा यह थी कि तुम पहले अपने कर्त्तव्य का पालन करना, धर्म का काम बाद में करना। Duty first, Religion after तो मुझे सुबह–शाम Company की और Centre की गार्ड डयूटियों की रिपोर्ट मिलती थी, जो मेरे भजन का समय था और इससे मेरे भजन में बाधा पड़ती थी। अतः मैंने महाराज जी को पत्रा लिखा कि महाराज जी अब मेरी पैन्शन 100 रूपये हो जाएगी। मेरे को खाने–पीने के लिए बहुत है। आप कृपा करें तो मैं नौकरी से इस्तीफा दे दूं। उन्होंने कहा – बिल्कुल नहीं।

तेरे को यह किसने कहा है? तुम नौकरी मन लगा कर करो और सुबह शाम अपना काम कर लिया करो। आठ नौ महीने बाद मुझे छुट्टी मिली और मैं महाराज जी के पास गया, मुझे एक शंका थी जिसे मैंने पत्रा द्वारा नहीं पूछा। मैंने सोचा मैं साक्षात् दण्डवत् करके सामने जाकर पूछूंगा। मुझे शंका यह थी कि जिस नाम की इतनी बड़ाई है, वह नाम मुझे प्राप्त है, फिर महाराज जी ने कहा कि तुम इस नाम को ज्यादा नहीं सुनोगे। इसका क्या कारण है? जब नाम ही मिल गया है तो मुझे और क्या चाहिए? जब मैं महाराज जी के पास गया तो वह बहुत खुश हुए और मेरे द्वारा उपरोक्त प्रश्न पूछने पर उन्होंने कहा सुनो बात कुछ ऐसी है कि तुम्हारा अन्दर का शब्द या नाम खुल गया है। अगर तुम उसकी तरफ ज्यादा ध्यान दोगे तो तुम्हारी दुनिया बिगड़ जायेगी, धर्म तो सुधर जाएगा। तुम्हारी जय–जयकार होगी। बहुत लोग आयेंगे। तुम्हारी पूजा होगी, सब कुछ होगा। लेकिन तुम्हारी दुनिया बिगड़ जायेगी। तो मैं चाहता हूं कि जो तुम्हारा दुनिया का कर्जा है, तुम्हारे बच्चों का, तुम्हारी बीबी का व तुम्हारे परिवार का और तुम्हारा जिसका लेना–देना हो, वह भी चलता रहे साथ–2 और साथ–2 तुम पिछला कर्जा भी चुका कर अपना सुधार कर लो। दूसरी मिसाल उन्होंने रेडियो की दी कि तुम्हारे पास रेडियो है। तुमने गाना सुना या खबर सुनी और सुनने के बाद स्विच ऑफ करके गहरी नींद में चले गए व सो गए। अगर रात को भी रेडियो टां–2 करता रहे तो तुम्हें नींद नहीं आएगी, चैन नहीं मिलेगा। इसलिए तुम्हारा नाम पर कन्ट्रोल होना चाहिए। तुम अन्दर का नाम तो सुनो, जब चाहो उसका आनन्द ले लो। जब चाहो स्विच ऑन कर दो और जब चाहो स्विच ऑफ करके दुनियां का काम करो। यानी तुम्हारी दीन और दुनिया दोनों बन जायें। एक बन जायेगा तो ठीक नहीं। बात समझ मे आ गई। मैंने कहा आ गई तो भाइयों और बहनों ! मैंने अपनी पूरी जिन्दगी में गुरू महाराज जी से बस एक ही प्रश्न किया और कोई प्रश्न नहीं किया। जब भी महाराज जी के पास

जाता और वह पूछते बोलो – कोई शंका? नहीं महाराज। कोई नाम में रुकावट? नहीं महाराज। कोई तुम्हारी नौकरी में तकलीफ? नहीं महाराज। आपकी कृपा से सिद्धियां मिलती जा रही हैं। वाह–2 हो रही है। आपकी कृपा से मैं कुछ नहीं करता फिर भी मेरा नाम ही नाम होता रहता है। इस प्रकार मैं गुरू महाराज जी के पास जाकर बैठ जाता और उनके दर्शन करता रहता। हर सत्संग में वह एक नयी चीज़ बताते थे। इसलिए रामचरित मानस में कहा गया है कि –

''बिन सत्संग विवेक न होई, राम कृपा बिना सुलभ न सोई''।

सत्संग में विवेक होता है कि सही क्या है? गलत क्या है? हम एक बात को पकड़ लेते हैं और उसी में बह जाते हैं, तो सतगुरू के दरबार में जब हम सच्चे बन कर जाते हैं तो हमें हर सत्संग में एक नई बात मिलती है, जिन्दगी बनाने के लिए। ऐसा ही मेरे साथ होता गया। एक दिन मैं सत्संग सुन रहा था तो महाराज जी ने बताया कि भाई इस नाम को प्राप्त करने के लिए ऋषि–मुनियों ने बहुत से रास्ते बताये हैं। उन्होंने कहा कि पतंजलि बहुत बड़े योगी हुए हैं, जिन्होंने बहुत सी योग की क्रियाएं बताई कि ऐसा साधन करो, वैसा साधन करो। उसका अनुभव करने के लिए, परमात्मा से मिलने के लिए ऐसा करो तथा और बहुत से तरीके बताये। लेकिन अन्त में उन्होंने कहा कि अगर तुम कुछ नहीं कर सकते तो किसी वीतराग पुरूष को अपनी खोपड़ी में रखो, तुम्हारे सब साधन सहज में बन जायेंगे। यह बात मेरी समझ में आ गई। मैंने कोई जोर नहीं लगाया, किसी चीज पर। शब्द तो पहले दिन से ही प्रकट था। मैं महाराज जी के स्वरूप को अपनी खोपड़ी में रखता था, हालांकि मेरे को रूप नहीं रहा। मैं रूप से आगे निकल गया। राधास्वामी वाणी में केवल शब्द की महिमा है और नाम की महिमा है। शास्त्रों में भी नाम की महिमा है।

''कलि केवल एक नाम आधारा, श्रुति स्मृति वेद मत सारा''।

कलयुग में केवल नाम का साधन बनेगा। वो नाम मुझे मिल

गया और मैं उसमें मस्त था। एक मात्रा परमदयाल जी के स्वरूप को अपनी खोपड़ी में रखता रहा। उससे दुनिया भर के शब्द, दुनिया भर का विवेक, दुनिया भर का ज्ञान सबका सब अपने आप आ गया और आखिरी मंजिले मकसूद शान्ति है। मरने के बाद कौन सी शान्ति मिलेगी, मुझे मालूम नहीं। मुझे विश्वास है कि यदि अन्त समय में मुझे यह ज्ञान रहा, जिसका मैं अनुभव कर रहा हूँ, तो दोबारा इस लोक में नहीं आऊंगा। लेकिन दावा नहीं है। सिद्धान्त यह कहता है कि ''अन्त मति सो गति''। मुझे यहां किसी से कोई लगाव नहीं है और न ही मेरी कोई इच्छा बाकी है। कोई काम शेष नहीं रह गया है तो अन्त समय में अगर वही धारा रही तो उस धारा में मिल जाऊँगा और उसी में समा जा ऊंगा और अगर कुछ ओर काम लेना है तो दावा कुछ नहीं है। मौज का खेल है। इसलिए मुझे शान्ति व तसल्ली है।

तो आपने सुना कि नाम गजब की चीज है जिसके तुल्य कोई चीज नहीं। नाम दिया नहीं जाता, नाम लिया जाता है। उससे क्या लाभ मिलेगा? यह मैं आपको बाद में बताऊंगा। अभी आप डा0 कमला से एक शब्द सुन लें –

बहा सत्संग का दरिया, नहा लो जिसका जी चाहे।
जिगर से दाग पातक के, छुड़ा लो जिसका जी चाहे।
.....

क्या यह गाने में आया है? अच्छा बोलने के लिए सभ्यता है या महात्माओं ने अपनी गुड्डी चढ़ाने के लिए कहा है। मेरा क्या अनुभव है इस विषय में। भाईयों और बहनों। मैंने अपने जीवन में इसका अनुभव किया है। मैं जानना चाहता था कि ये महात्मा आँख बन्द करके क्या करते हैं? नाम या भजन क्या होता है? मेरे मन में सच्चाई थी। एक चीज की चाह थी। इसलिए व्यास से मेरे को सन्तुष्टि नहीं मिली। सिद्धियां मिल सकती थी। मैं चाहता था कि गुरू के पास बैठूं, उनकी मुट्ठी चप्पी करूं, उनकी सेवा करूं, उनके

पास बैठकर ज्ञान लूं। व्यास में संगत अधिक होने से ऐसी सुविधा नहीं थी। इसलिए कुदरत दयालु होती है। परमात्मा अन्तर्यामी है। मेरे मन की सच्चाई मुझे वहां ले गई, जहां पर मेरी प्यास बुझनी थी और जहां से मुझे तसल्ली व शान्ति मिलनी थी तो सत्संग का दरिया बह रहा था। कहां से ? परम्दयाल पण्डित फकीरचन्द जी महाराज सत् में थे और उनके अन्दर से सत् की धारा निकलती थी। वह जब समाधि में जाते थे तो अन्दर से जबरदस्त रेडियेसन निकलती थी सत् की और मैं उनके सामने जाकर बैठ गया और मुझे सहज में परम शान्ति तक पहुंचने वाले नाम की अनुभूति हो गई। तो कोई ऐसा महापुरुष जो वास्तव में उस सत् में रहता है, सहज समाधि की अवस्था में रहता है, उसके पास जाकर बैठना, उसके दर्शन करना, वचन सुनना, सेवा करना काफी है। तो मैंने आप लोगों से अर्ज की थी कि मैं गुरू की सेवा नहीं कर सका। आज यह डा0 कमला आई हुई हैं सेवा करने के लिए, यह कहती है कि मैंने जब आपको मनुष्य रूप में पूर्ण मान लिया और मेरा विश्वास बैठ गया है तो मैं आपकी सेवा करूंगी। मैं सोचता हूं कि लालचन्द क्या तूने सेवा की? यह पढ़ी–लिखी बेटी है। घर–बार छोड़कर यहां आई हुई है और कहती है कि मैं आपकी सब सेवा करूंगी। मैं सोचता हूं कि मुझे क्या हक है इसकी सेवा लेने का ? मैं तो सहज में गया हूँ। मुझे तो नाम की बख्शिश मिली। मुझे तो नमस्कार भी नहीं करना आता था। केवल एक नजर से मुझे देखा और बिना किसी भेंट चढ़ावे के मुझे वह नाम बख्शिश हो गया। यही कारण है कि मैं उस दयाल का एहसानमन्द हूँ। मेरी तबीयत भी ठीक नहीं रहती, फिर भी मैं बार–2 जाता हूं और चाहता हूं कि वह ज्ञान, जिसकी मेरे प्यारे गुरू ने बड़ी दया करके मुझ पर वर्षा की, उसको मैं बांट जाऊं। तो यह जो सत्संग का दरिया बहता है, वह महापुरुष जो जीता जागता है, उसके अन्दर भी बह रहा है। परन्तु अन्दर वाले तक हर आदमी नहीं पहुंच सकता। पहले बाहर जो सत् में रहने वाला महापुरुष है, उसकी संगत

करना, दर्शन करना व वचन सुनना है। उससे फायदा क्या होगा? शब्द है – ''भरे हैं रत्न बेकीमत, बड़े आला से आला हैं''। जब आदमी की समाधि लग जाये, गोता मार जाए तो बड़े रत्न भरे हुए हैं, कैसे? मेरी समाधि तो नहीं लगी थी। मैं बाबा जी के सामने यह ख्याल करके बैठ गया कि यह पूर्ण ब्रह्म के अवतार हैं और गोता लग गया तथा नाम प्रकट हो गया। वह नाम ऐसा प्रकट हुआ कि सोता हूं तो मेरे साथ है, जागता हूं तो साथ है, रेल, गाड़ी या हवाई जहाज में जाता हूं तो साथ है। जहां–जहां जाता हूं, वह धार साथ रहती है। इससे फायदा क्या हुआ ? कहा है –– ''जिगर से दाग पातक के छुड़ा लो, जिसका जी चाहे''।

हमारे दिलों पर भाइयो – बहनो तरह–2 के संस्कार पड़े हुए हैं और वो धब्बे पड़े हुए हैं, जिनको हमने सत् माना हुआ है और यही हमारे कर्म बन जाते हैं तो सत्संग में गोता लगाने से, उस नाम के साथ जुड़ने से हमारे वह दाग धुल जाते हैं। अब सवाल यह है कि क्या मेरे धुल गए? तो भाईयो, सच यह है कि ये जो तरह–2 के संस्कार दाग पड़े हुए थे, वह मेरे को नहीं भासते (तंग नहीं करते)। हां कभी–2 इस नाम को भूल जाता हूं तो मैं भी गिर जाता हूं। अधिकतर मेरी स्थिति यह है कि ये संकल्प–विकल्प जितने आते हैं, ये मुझे व्यापते नहीं हैं, क्योंकि नाम की कृपा से वह संस्कार धुल गए। कोई ओर थोड़े बहुत हैं, वह भी धुल जायेंगे। तो इस सत्संग से मुझे यह लाभ रहा कि एक तो इस लोक में मुझे अभी कोई अभाव नहीं है, कल की तो मैं कह नहीं सकता। कल की लीला वह जाने। अब आज के दिन सत्संग का प्रभाव यह है कि मुझे इस लोक में खाने–पीने का, इज्जत का कोई अभाव नहीं है। जिस इज्जत के लिए लोग लाखों रुपये लगाते हैं, नेता बनते हैं, एम.एल.ए., एम.पी. बनते हैं और पता नहीं क्या–2 करते हैं? कितनी हेरा–फेरी करते हैं? कितना झूठ बोलते हैं? वह इज्जत इतनी प्राप्त हुई कि जिसका कोई हिसाब नहीं। जहां जाता हूं, लोग मेरे पैर धोते हैं और पी जाते

हैं। जबकि मैं जानता हूं कि पैर गन्दे हैं, यह कोई उपयोग की बात नहीं। लेकिन उनका विश्वास होता है कि इनके पैर धो लिए अब हमारा रोग कट जाएगा। कोई कहता है कि इससे हमे यह लाभ हो गया। कोई कहता है कि विदेशों में हमारे बच्चे रहते हैं। उनके पास बोतलों में डालकर यह प्रसाद भेज देते हैं और उनके दुःख दूर हो जाते हैं। यह कोई अहंकार की बात नहीं है। मैं बहुत साधारण आदमी हूँ। मैं कोई गुरू पीर नहीं हूँ। मैं तो गुरूओं का चपरासी हूँ, उनका पैगाम लाता हूँ। किन गुरूओं का? व्यास वाले, आगरा वाले, धन–धन सतगुरू तथा और जितने भी महापुरूष हैं, जिनके सत्संगी मुझे मिलते हैं, मेरे सत्संग में बैठते हैं, उनको विशेष शान्ति मिल जाती है। तो मेरी हालत क्या हुई कि ''इस चाह की मुझको चाह नहीं, इस चाह को चाह में डाल दो।'' चाह कहते हैं इच्छा को और कुएं को। भाव समझ गए होंगे कि मुझे किसी प्रकार की इच्छा नहीं रही।

तो आज मैंने इस छोटे से सत्संग में बताया कि मेरे साथ यह बीती। अगले सत्संगों में अपनी जिन्दगी के भिन्न–2 अनुभव बताऊँगा। लेकिन यह कोई दावा नहीं है कि जो मैंने अनुभव किया, वह ठीक है। मैं चाहता हूं कि आपको गुरू भक्ति के प्रति कोई भ्रम न रहे और मालिक के प्रति श्रद्धा व विश्वास से आपकी अपनी जिन्दगी इस लोक व वाहि लोक में सुख–शान्ति से गुजरे। आज का सत्संग इतना ही काफी है।

राधास्वामी।

(2)

स्थान : दांदू
दिनांक : 4.5.98

राधास्वामी

प्यारे सत्संगी भाई और बहनों। आज का सत्संग गुरू कबीर के शब्द से शुरू करते हैं। यह मैंने आपको पहले कहा है कि अपनी जिन्दगी में मुझे क्या अनुभव हुआ? इसे प्रमाणित करने के लिए महापुरुषों का वचन जो मेल खाता है, जरूर बताया जाता है। बगैर बताए बात पूरी नहीं होती, समझ में नहीं आती। तो आज गुरू कबीर का सूक्ष्म, सबसे ऊँचा शब्द, जब वह अन्तिम मंजिल पर गए हुए थे, उस वक्त का शब्द है। इसे आप डा0 बेटी कमला से सुनिए –

जहां से मैं आयो, अमर वो देशवां

.....

तो आपने यह शब्द सुना। इसमें कहा है जिस जगह से मैं आया हूं या मेरी सुरत आई हुई है, वह अमर देश है। बहुत कुछ कहा है इस शब्द में। जैसे वहां पर धरती भी नहीं है, आकाश भी नहीं है, चांद – सूरज भी नहीं है क्योंकि साधक शुरू से जो साधना करते हैं तो तरह–2 के जैसे संस्कार पड़े हुए हैं, इस जन्म के या पूर्व जन्म के, वे सब के सब रंग–रूप–रेखा अपने–2 विचारों के अनुसार, संस्कारों के अनुसार अनुभव करते हैं। कोई तो सूरज देखता है, कोई चांद देखता है। तो यहां पर कबीर जी कहते हैं कि वहां न चांद है न कोई सूरज है, न वहां पर कोई योगी है, न कोई जंगम है तथा न कोई दरवेश है। इसका मतलब है कि साधुओं को अन्दर जितने नजारे आते हैं, वह सब के सब उनके अपने पड़े हुए संस्कार विकसित होकर साधन में, स्वप्न में या विचारों में आते हैं, वह सत् नहीं हैं। वे सब के सब तो भासते हैं परन्तु योगी उनको सत् मानता है। अगर गुरू पूरा नहीं मिला तो वह शायद पूरी जिन्दगी उन्हीं नजारों के अन्दर खो देगा। वह ऊपर के लोकों का नजारा लेगा।

जैसे ब्रह्म लोक का, विष्णु लोक का, शिव लोक का और जैसी–2 उसकी प्रकृति है, उसी लोक का अनुभव लेगा। क्योंकि मैं सुनता रहता हूं। मेरे प्यारे गुरू पण्डित फकीरचन्द जी महाराज के पुराने सत्संगी भाई बहन मिलते हैं, वे अपना अनुभव बताते हैं। दूसरे गुरूओं के शिष्य भी अपना अनुभव बताते हैं तो मैं समझता हूँ कि जैसा उन्होंने संस्कार लिया है, वह वो है। वहां तो ऐसा कुछ है नहीं। कबीर साहब कहते हैं –

कहां कहें अनकही भली है,
वहां तो वेद शास्त्रा कछु नाहि।
वहां अकथ यहां कथा चली है।
कहे कबीर सुनो भाई साधो
सोहम् हंसा सर्वमयी है।

उन्होंने इशारा कर दिया कि वहां पर केवल एक शब्द है, जिसकी व्याख्या तो हो नहीं सकती। जो व्याख्या करेगा वह उसकी तौहीन होगी। जैसे उर्दू शायरी में कहा है –

''उसकी है जुस्तजू क्या, जो हरदम रूबरू है
ये जुस्तजू नहीं है, तौहीने जुस्तजू है।''

अर्थात् उस मालिक के नाम की व्याख्या करने लगते हैं, कोशिश करते हैं। सब शास्त्राों में ऋषि–मुनियों ने, सन्तों ने उसकी बड़ाई, उसके गुण बताने की कोशिश की है। लेकिन बात यह है कि जैसा वो है, बता नहीं सके। क्योंकि क्या बताया जाए वो तो न बताने वाली चीज है।

किसी भाई–बहन, प्रेमी को जिज्ञासा हो तो वो किसी जीवित अनुभवी पुरूष को देखकर उससे इशारा लेकर, साधन करके उस चीज का अनुभव कर ले। क्योंकि यह भाषण का विषय नहीं है। भाषण करने से तो उसको अलंकारी भाषा में, रोचक या भयानक भाषा में व्यक्त करने की कोशिश की गई है। जहां तक मेरा अनुभव है कोई उसको बता नहीं सकता, उसकी व्याख्या कर नहीं सकता।

यह बात आज से नहीं, हमेशा से है। प्राचीन समय में मुसलमान सूफी शेख फरीद थे। वे राम नाम की बड़ी बड़ाई करते थे तो दूसरे लोगों ने पूछा–शेख साहब। आप राम नाम की बहुत बड़ाई करते हैं। यह राम नाम कितना मीठा है? इसमें क्या मिठास है? हमें बताइये। तो वह बता नहीं सके, पर उन्होंने अपनी भाषा में कहा कि –

''शक्कर खांड नवात गुड़ मक्खियां मझा, दूध।
सबे वस्तु मिठिया, पर रब न पूजे तुद''।।

अर्थात् सब कुछ मीठा है, लेकिन राम नाम के बराबर किसी में मिठास नहीं है। बात यह है कि उसकी व्याख्या नहीं कर सकते, उसका अनुभव कर सकते हैं। इसी तरह गुरू कबीर ने कहा है कि जहां से हम आए हैं, वह देश अमर है। न वहां जोगी है, न वहां जंगम है, न ब्रह्मा है, न विष्णु है, न महेश है, तो वहां क्या है? वह गजब की बात है जो गुरू के द्वारा समझी जा सकती है। अब यहां पर जितने साधक साधना करते हैं। जैसे जिसका गुरू है, जहां तक पहुंचा हुआ महापुरूष है, जितना उसने मार्ग तय किया है, उतना वह अनुभव कर जायेगा। जिस तरह इस दुनियां की मिसाल में अगर एक अध्यापक दसवीं तक पढ़ा हुआ है और वह बहुत होशियार है तो दसवीं तक तो वह गाईड (मार्ग दर्शन) कर देगा, लेकिन कालिज कोर्स गाईड नहीं कर सकता। इसी तरह एम.ए. व पी.एच.डी. वाले उतने तक जा सकते हैं अर्थात् जिस दर्जे का अध्यापक है, उसी दर्जे तक पढ़ा सकता है। आध्यात्मिक ज्ञान भी यही है। जिस महापुरूष ने अपने अन्दर अपने गुरू से ज्ञान लेकर के जहां तक का साधन किया है, जहां तक गुरू महाराज ने उसको संस्कार दिए हैं, अगर वह सच्चाई से चलता है तो वहां तक का अनुभव हो जायेगा, आगे का पूर्ण अनुभव नहीं हो सकता। इसलिए राधास्वामी मत में तथा और सन्तों के मत में पूर्ण गुरू का बड़ा महत्व है। गुरू नानक देव जी कहते हैं कि –

''पूरा सतगुरू खोजिए, पूरी होए जुगत।
खांदिया पिंदिया खेलदिया विचे होए मुक्त।।''

अर्थात् पूरा सतगुरू खोजिए। जैसा वह मार्ग दर्शन करें, उसके अनुसार चलकर और फिर उसका खाते–पीते बीच में ही उसका अनुभव कर लो। मैने अपनी जिन्दगी में जो इसको समझा है, पूरा खेल खेला है। तीस साल सेना की नौकरी की। जवानी की अवस्था में मुझ पर गुरू ने नाम की कृपा की। नाम का आनन्द भी लेता रहा तथा नौकरी भी बड़ी अच्छी करता रहा। मार्ग दर्शन गुरू से लेता रहा। आने के बाद यह काम किया और 50-60 साल की जिन्दगी में लोग जो पार्ट अदा करते हैं, मां का, बाप का, भाई का, बहन का, दोस्त का, तो जहां तक हो सका है मैंने सब पार्ट अदा किए। पूरा तो नहीं कह सकता, क्योंकि पूरा नाम तो भगवान् का है। इस प्रकार जिन्दगी में सब पार्ट अदा करते हुए बीच में उस मुक्ति का आनन्द लेता रहता हूँ। जिस मुक्ति की लोग बहुत बड़ाई करते हैं, दिन में पांच सात घण्टा उसका आनन्द लेता रहता हूँ। जब भूल जाता हूँ तो मैं भी भेड़ बन जाता हूँ।

गुरू कबीर ने कहा है कि वो देश जो है, जहां से हम आए हैं, वो अमर है। आखिर में वह कहते हैं कि मैं सन्देश लेकर आया हूं। क्या सन्देश?'' सार शब्द ले लो चलो वा देशवा''। मैं पूरी व्याख्या न करके इसका भाव बता रहा हूं। मुझे वह सार शब्द या नाम पहले दिन ही जब मैं गया, तभी प्रकट हो गया और वो दिन और आज का दिन वह जाता नहीं, साथ रहता है और जो ये नीचे वाले शब्द हैं, सब के सब मानव प्रकृति के अनुसार हैं। जैसे – घण्टा, शंख, मृदंग, सारंगी, बीन, बांसुरी आदि। महात्माओं में किसी ने इसे अनहद कहा, किसी ने वीणा कहा, किसी ने शब्द कहा तो किसी ने सार शब्द कहा किसी ने सत् शब्द कहा और उपनिषद तथा ऋषि–मुनियों ने इसे प्रणव या उद्गीत कहा अर्थात् अपनी–2 भाषा के अनुसार उन्होंने इसकी चर्चा की। तो मेरे भाग्य में वह सार शब्द आया। इससे लाभ यह हुआ कि मुझे हर समय मस्ती व बेफिकरी बनी रहती है। दुनियां के चिन्ता, भय, फिकर, डर, रोग, शोक से मैं हमेशा मुक्त रहता हूँ। बाकी मैंने

आपको बता दिया है कि जिस भाई बहन को शौक हो किसी अनुभवी पुरूष से ऐसा नामदान लेकर इशारा लेकर खुद साधन करके अनुभव करके देख ले क्योंकि ––

''जब तक न देखों अपने नैना, तब तक न मानों गुरू के बैना''

तो महात्माओं ने इस सार शब्द को अलग–2 ढंग से कहा है। ऋषि मुनियों ने एक दो जगह इसे चरणामृत का मन्त्रा बताया है। पण्डित लोग जब चरणामृत बांटते हैं, उस मन्त्रा का जाप करते हैं, लेकिन उनको सार का पता नहीं है और न ही वे साधन करते हैं।

एक बार मैं अपने गांव में बस अड्डे पर बैठा हुआ बस की इन्तजार कर रहा था। वहां पर फतेहाबाद से डा0 कमला आई हुई थी, वह भी मेरे साथ थी। उस समय हमारे गांव का एक पुरोहित वहां आ गया और उसने डा0 कमला की तरफ देखकर इशारा किया कि यह लड़की कौन है? तो मैंने कहा कि यह मेरी शिष्या है, हरियाणा की रहने वाली है और संस्कृत की विद्वान् है। जब मैंने संस्कृत का नाम लिया तो पण्डित जी ने तुरन्त कहा, बहन जी। मैं आपसे एक प्रश्न पूछना चाहता हूँ। आप बुरा मत मानना। पण्डित जी ने एक मन्त्रा कहा–

ऊँ अकाल मृत्यु हरणम्, सर्वव्याधि विनाशनम्।
विष्णोः चरणोदकम् पीत्वा, पुनर्जन्म न विद्यते।।

और पूछा यह मन्त्रा कहां से लिया गया है। डा0 कमला ने कहा – शायद विष्णु पुराण से लिया है। मैंने कहा – भाई। एक बात है कि आपने जो मन्त्रा पढ़ा है, मैं हमेशा उस साधन में रहता हूं और विष्णु के चरणों का जल पीता रहता हूँ। और मुझे विश्वास है कि मुझे कभी अकाल मृत्यु नहीं होगी। क्योंकि मैं बस में, गाड़ी में, चलते–फिरते हमेशा उस नाम के साथ जुड़ा रहता हूँ और जो मन्त्रा में कहा है – 'सर्व व्याधि विनाशनम्' यानी विष्णु के चरणों का जल पीने से जितनी भी परेशानी, दुःख, तकलीफ व रोग है, सबका नाश हो जाएगा। तो मेरे को अधिक समय खुशी बनी रहती है, कोई व्याधि नहीं रहती और अगर आती भी है तो मैं यह समझता हूं कि यह कर्म का फल है। मैं

उसको कोई विशेष महत्व नहीं देता। सोचता हूं कि यह मेरे भले के लिए है। मैं उसमें नाचता नहीं हूँ। कोई लाभ होने पर खुश नहीं होता और हानि होने पर रोता नहीं हूँ। क्योंकि वह ज्ञान बना हुआ है और इसी तरह पुनर्जन्म के बारे में कहा है – ''पुनर्जन्म न विद्यते।'' मेरा विश्वास है कि यदि अन्त समय में मुझे यह नाम की धार प्रकट रही और मैं यह चरणामृत पीता रहा तो दोबारा नहीं आऊंगा, उसी में मिल जाऊंगा। यह सुनकर वह पण्डित तथा डा0 कमला मेरी तरफ देखते रहे।

ऐसे ही एक दिन मुझे कुछ तकलीफ थी बाई तरफ फेफड़े में। रात का एक बजा था जब दर्द हो तो मेरा ध्यान उस तरफ आ जाए। वह धार भी प्रकट थी तो मेरे दिमाग में आया कि तू उस दिन जो कह रहा था – 'सर्वव्याधिविनाशनम्' और मुझे अब व्याधि है। ऐसा ख्याल करते–2 मेरी सुरत ऊपर की तरफ चली गई, मेरा कुछ देर साधन बना रहा और मैं गहरी मस्ती में चला गया। मुझे गुरू कृपा से यह सार शब्द मिला। एक ऐसी वस्तु जो बड़े–2 सन्त–महात्माओं को जिनके लाखों शिष्य हैं, शायद प्राप्त हो, मुझे मालूम नहीं। एक साधारण गांव के रहने वाले को यह नसीब हुआ। न जप किया, न तप किया, न कोई दान किया, न कोई पुण्य किया। साधारण उनके दर्शन किए और लाभ हुआ। जैसा गुरू नानक जी ने एक जगह लिखा है –

''नानक नदरी नदर निहाल''।

अर्थात् कोई मनुष्य आए और उसकी नजर मेहर हो जाए तो बस पूछो मत एकदम अगली चीज मिल जाती है। तो मेरे साथ यह 'नानक नदरी नदर निहाल' वाली बात हुई।

एक दिन सुबह–2 सरदार हरविन्द्र सिंह के भाई पुष्पेन्द्र जी का आस्ट्रेलिया से फोन आया। उसका वहां Ready Made कपड़े का व्यापार है। कहने लगा – महाराज जी मैं इस समय बहुत परेशान हूं। मैंने कहा – बोल, मेरे से क्या चाहता है। कहने लगा

कि आप मेहर की नजर कर दो तो मेरा सब काम हो जाएगा? मैंने कहा – भाई। मेरी शुभ भावना तेरे साथ हैं, गुरू कृपा करेगा। जैसा सिक्ख धर्म में यह लिखा हुआ है, – ''एक विश्वास राखो मन माही, नानक सर्व रोग कट जाई''। जिस तरह ऊपर संस्कृत के मन्त्रा में बताया है कि चरणामृत से 'सर्वव्याधि विनाशनम्' अर्थात् गुरू कृपा से मनुष्य की सब परेशानियां व व्याधियां दूर हो जाती हैं। तो मैंने उसको यह संस्कार दिया। नहीं तो कहां आस्ट्रेलिया? कहां मैं चुरू जिले में पिछड़े गांव का रहने वाला साधारण आदमी? मेरे पास तो एक भी आदमी नहीं । बड़े–2 महात्माओं के पास तो कितनी भीड़ रहती है, कितनी संगत होती है। मैं तो कोई महात्मा हूँ ही नहीं। उसका विश्वास था कि गुरू की मेहर नजर से मेरा काम हो जाएगा। क्या हो जाता है? हाँ। जिनका विश्वास है, उनके भाग्य में हो जाता है। जैसे मेरा हुआ। तो धर्म केवल विश्वास का विषय है। जिनका विश्वास है, उनके सब काम हो जाते हैं।

मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि अब जो मेरा अनुभव है वो आखिरी अनुभव केवल उस देश का है, जहां पर कुछ नहीं है। वहां पर मुझे पता नहीं कि किसी को क्या मिला होगा? मेरे को गज़ब की शान्ति आती है। वहां पर न कोई नजारा है, न कोई हलचल है, न रंग है, न रूप है, न रेखा है। एक शब्द की धार आती रहती है। उसकी व्याख्या हो नहीं सकती। उसके साथ सुरत लगी रहती है। राधास्वामी मत में कहा है कि जब यह सुरत शब्द में लीन हो जाएगी, तब आपको कुछ प्राप्त होगा। मुझे पता नहीं। मुझे तो अभी शान्ति है, बेफिकरी है। न कोई इच्छा है। लीन हो न हो, उसकी मर्जी है। गुरू की कृपा है। मैं तो शरणागत हूँ। पंजाबी कहावत है – ''नथ खसम दे हथ''। उसकी मर्जी हो तो मिला ले, न मर्जी हो तो न मिला ले। तो डा0 कमला ने जो शब्द गाया –

'जहां से मैं आयो, अमर वो देशवा' इसका अनुभव करता रहता हूँ, मुसाफिर हूं, चलता रहता हूँ। लगभग प्रारब्ध खत्म हो गए हैं और

बाकी जो रहे हैं, वे खत्म हो जायेंगे और मैं अपने घर पहुंच जाऊंगा। अब मैं आपको इसी विषय में एक शब्द ओर सुना देता हूं। डा0 कमला द्वारा गाया गया शब्द–

मैं अपने गुरू जी की चौखट पर तकदीर बनाने आई हूँ
यह दर्दे जिगर और खीसरो आलम रो–2 के सुनाने आई हूँ

आपने यह शब्द सुना। हम अपने सतगुरूओं के पास अलग–2 भाव लेकर जाते हैं। इससे पहले जो शब्द गाया था –– 'जहां से मैं आयो, अमर वो देशवा' इस भाव से कोई जाता नहीं है। बहुत ही कम आदमी हैं जो यह चाहते हैं कि हम अपने धुर धाम जाएं, जिन्दगी को सफल बनाएं व परम शान्ति, परम सुख को प्राप्त करें। अधिकतर लोग काल और माया के मारे हुए होते हैं और गुरूओं के पास में अलग–2 विचार व परेशानियां लेकर जाते हैं। तो इस शब्द में कहा है कि ''मैं अपने गुरू की चौखट पर तकदीर बनाने आई हूँ'' यानी हम अपना भाग्य बनाने के लिए जाते हैं। हमारे अन्दर कोई कमी होती है तो हम चाहते हैं कि अपने गुरू जी के पास जायें, उनसे प्रसाद व आशीर्वाद ले आएं और हमारा भाग्य बन जाये। यदि विधाता ने न लिखा हो तो गुरू जी कृपा करके लिख दें, ऐसा विचार ले के जाते हैं। इसमें मेरा अनुभव यह है कि हम जो विचार गुरू जी के पास सच्चाई से लेकर जाते हैं और गुरू जी की तरफ से हमें जो नसीहत मिलती है, उसे हम ग्रहण कर लें तो अपनी नई तकदीर बना सकते हैं अर्थात् यह लोक संकल्प, विचारों का है। जिसके जैसे विचार हैं, उसकी वैसी ही दुनिया बन जाती है। 'जैसा ख्याल, वैसा हाल', 'जैसी करनी, वैसी भरनी'। इसीलिए हमारे ऋषि मुनियों ने शास्त्रों में लम्बी बात न कह कर एक ही वेद मन्त्रा में बता दिया कि – 'शिव संकल्पमस्तु' अर्थात् ए इन्सान। तू सुन्दर–2 विचार रखा कर, तेरी दुनियां सुन्दर बन जायेगी। अगर पहले कोई चीज प्राप्त नहीं है तो अब विश्वास रखो कि गुरू कृपा से, गुरू प्रसाद से यह जरूर हो जायेगा, क्योंकि मालिक के घर कोई कमी नहीं है। तकदीर

बनाने का मतलब है कि गुरू यह ख्याल देते हैं कि बेटा–बेटी। जैसा सोचोगे, वैसा ही बन जायेगा। इसलिए घटिया विचार कभी मत सोचो।

शब्द में आगे कहा है कि 'ये दर्दे जिगर और खीसरो आलम रो–2 के सुनाने आई हूं' अर्थात् जीव दुःखी है। किसी को परिवार का दुःख है, किसी को अन्न का, किसी को धन का, किसी को शरीर का तो किसी को मन का। दुःखों का कोई अन्त नहीं है। रामायण में भी इसकी चर्चा करते हुए गोस्वामी तुलसीदास ने कहा है ––

'राम कृपा नासे सब रोगा, जेहि भांति बने संजोगा
सतगुरू वैद्य वचन विश्वासा, संजम ये न विषय की आसा।'

अर्थात् भगवान् की कृपा होगी, तेरे शुभ कार्म आयेंगे, तब तेरे रोग नष्ट होंगे। कोई सतगुरू आएगा और तू उसका वचन सुनकर अटल विश्वास कर लेगा। शर्त यह कि वह भ्रमित न हो कि ऐसा होगा या नहीं। यह नहीं कि आज इस गुरू की बात सुनी, कल उसकी सुनी। लोग अपनी पॉकेट में छः छः गुरू रखते हैं। उनका काम नहीं होता।

शब्द में आगे कहा है –

''क्या पेश करूं, क्या नजर करूं, अफसोस किसी का दिल ही नहीं।
यह मन अपना और फूल हकीकत गुरू को चढ़ाने आई हूँ।''

अर्थात् गुरू के पास हम सच्चे मन से जाकर अपने को अर्पित कर देते हैं तो हम निहाल हो जाते हैं।

आगे कहा है – ''क्या भूल हुई मुझसे मुर्शिद, क्यों ख्वाब में आना छोड़ दिया''। अर्थात् जो भक्त गुरू से प्यार करते हैं तो गुरू उन्हें स्वप्न या साधन में आकर उन्हें दर्शन देते हैं, जिससे उनका मन उमंग से भरा रहता है। और जब हम गलत बातें सुनते हैं, मन खराब हो जाता है तो शरीर का ढांचा खराब हो जाता है, तब हमारे अन्दर गुरू की मूर्ति नहीं आती। इसलिए भक्त कहता है कि ''क्या भूल हुई हमसे क्यों ख्वाब में आना छोड़ दिया'' इसलिए शरीर का स्वास्थ्य पहले बहुत जरूरी है, फिर मन का। अगर हम दिन भर लोगों की चुगली निन्दा करें, गलत बातें करें और फिर हम सोचे कि पूजा

करें, समाधि लगायें या थोड़ी देर बैठ जाए और साधन बन जाए तो यह बात गलत है। इससे माथे में वह स्वरूप नहीं आएगा। इसलिए यदि शरीर में कुछ गड़बड़ है, मन में कुछ खटपट है या संगत गलत है तो अपने गुरू जी से पूछना चाहिए तो वह साधन बतायेगा कि बेटा–बेटी, तुम्हारे में यह कमी है। तुम इसे ठीक करो। आगे कहते हैं ––''रूठे हुए अपने गुरू जी को हम आज मनाने आए हैं''। याद रहे, गुरू कभी रूठता नहीं है। गुरू नाम भगवान् का है। जब हमारे शुभ कर्म आगे आ जाते हैं, तो गुरू राजी है। और जब अशुभ कर्म आगे आ जाते हैं तो रूठ जाता है। तो फिर क्या होता है। परेशानियां ही परेशानियां आती हैं। गुरू नानक जी ने इसको कहा है –– ''नजरा पूठी जे करे सुलताना घास चराए जा''। अर्थात् जब वो मालिक अपनी नजर पीछे हटा ले, तो बड़े–2 राजा महाराजा भी मुंह में घास लेकर माफियां मांगते हैं, यानी कि हार मान जाते हैं।

इसलिए अगर आपके ऊपर मालिक की मेहर या दया रहेगी तो आपको कभी तकलीफ नहीं आएगी। तो मनाने के लिए गुरू जी क्या कहेगा कि बेटा–बेटी। अपने संकल्प को ठीक कर, विश्वास रख, सब तेरे भले में होगा।

आगे कहा है ––''उस वक्त न भूलें आप हमें, यह याद दिलाने आई हूँ'' वह वक्त कौन सा? एक तो इस लोक में रहते हुए कोई समस्या या मुसीबत आ जाए तो मुझे मत भूलना। मेरी परेशानी में रक्षा करना। कभी मैं अपना ध्यान हटा लूं तो मुझे परेशानी रहेगी, उस वक्त आप मुझे याद रखना, जिससे मेरा विश्वास बना रहेगा और मेरा काम हो जायेगा। दूसरा जो धुरधाम या अमर देश जाना चाहते हैं, उन्होंने कहा है कि अन्त समय में आप मेरे को याद रखेंगे तो आपकी धार प्रकट रहेगी और मैं चौरासी में नहीं जाऊंगा। जैसे मैं आपको कहता रहता हूं कि यदि अन्त समय में मुझे यह धार प्रकट रही तो मैं वापिस नहीं आऊंगा और अगर उसकी मेहर से यह धार न आई तो कुछ कह नहीं सकता। कोई दावा नहीं कर सकता।

आगे कहा है –– ''राधास्वामी सतगुरू पूरे मिले, फरियाद सुनाने आई हूँ''। अर्थात् मैं अपने मन के दुःख व तकलीफों को, जो मेरे सामने थे, उन्हें गुरू जी के पास लेकर सुनाने आई हूँ। आप मेरा पथ पदर्शन करें व रास्ता दिखायें।

आज के सत्संग में बेटी कमला ने गुरू कबीर का शब्द सुनाया और मैंने अपने अनुभव व विचारों के अनुसार इसकी व्याख्या की है। दावा कुछ है नहीं। महापुरूष अगर मेरा वचन सुनें, इसमें कोई कमी देखें तो कृपा करके मुझे मार्ग दर्शन करें कि कहीं मैं भटक तो नहीं रहा हूं या कुछ गलत तो नहीं बोल रहा हूं तो आज के सत्संग में मैंने अपने टूटे फूटे शब्दों में जो कुछ मेरे को अनुभव हुआ, आपको बताया। मैं कोई विद्वान् तो हूं नहीं। तो मेरे ख्याल में आज का सत्संग इतना काफी है।

सबको राधास्वामी।

(3)

दिनांक : 5.5.98

स्थान : चुरू

राधास्वामी

प्यारी बेटियो और भाइयो। आज जो सत्संग का सिलसिला शुरू हो रहा है, वह प्यारी बेटी धन्नी की कई दिनों से इच्छा थी कि मेरे यहां सत्संग कराया जाये। इस सत्संग की भूख विशेष–2 को होती है। अभी मैंने आपको कहा था कि डा0 कमला मीरा भी है, कॉलिज की लेक्चरार भी है और साध्वी भी है। इसकी कॉलिज की डेढ़ महिने की छुट्टियां थी। मैंने कहा बेटी आ जाना। यह कहती है कि मैं आपके सत्संग रिकार्ड करके ले जाऊंगी। अतः यह सत्संग के लिए यहां आई हुई हैं। तो सत्संग शुरू करने से पहले आप डा0 कमला से प्रार्थना, विनती सुनिए –

विनती

करूं विनती दोऊ कर जोरी, अर्ज सुनो राधास्वामी मोरी।

.....

अभी आपने यह विनती सुनी। यह विनती किसके लिए की गई है? यह विनती किसी अनुभवी पुरुष को भगवान् मानकर या गुरू मानकर उसके सामने की गई है। राधास्वामी या सन्तमत में किसी जीवित गुरू को पूर्ण माना जाता है। उसको मानकर राधा या आत्मा जो बोलती है, आपके अन्दर, मेरे अन्दर और स्वामी जो अन्दर से जो नाम गूंजता है। भगवान् का नाम स्वामी है। जो आदमी भजन करता है, अपनी सुरत को उसके साथ लगाता है तो वह राधास्वामी है और कोई राधास्वामी अलग नहीं। व्यास, आगरा में जो डेरे बने हैं, वो अपने–2 विश्वास के अनुसार ठीक हैं। अलग धर्म नहीं है। मनुष्यों का धर्म एक ही है।

आज मैंने आपको जो सत्संग कराना है, ज्ञान देना है, कोई नया ज्ञान नहीं देना है। यह ज्ञान तो भगवान् राम ने अपने भक्तों को दिया था, महात्मा बुद्ध ने अपने भिक्षुक शिष्यों को बताया था, वही ज्ञान मैंने बताना है। गीता में भगवान् कृष्ण कहते हैं – हे अर्जुन । आज मैं जो तेरे को ज्ञान दे रहा हूं, यह कोई नया ज्ञान नहीं है। यह ज्ञान मैंने आदिकाल में ब्रह्मपुत्रा सूर्य को दिया था। सूर्य ने अपने पुत्रा मनु को दिया था। मनु ने अपने पुत्रा राजा इक्ष्वाकु को दिया था, वही ज्ञान आज मैं दोबारा तुम्हें दे रहा हूं। तो भाइयो। यह कोई नया ज्ञान नहीं है। बहुत समय हो गया है। हम उस ज्ञान को भूल गए हैं। मन्दिरों में पूजा–पाठ, धूप–दीप आदि कर्मकाण्ड में लग गए। इस कर्मकाण्ड से सिद्धि तो मिलेगी, शान्ति नहीं मिलेगी। कोई भी रूप बनाओगे – देवी का, बाला जी का, माता का तो आपका मन इकट्ठा हो जायेगा, सिद्धि मिल जायेगी। फिर दोबारा तकलीफ आ जायेगी। तो यह ज्ञान जो मैं आज आपको देने जा रहा हूं, यह आन्तरिक है, आपके अन्दर है, बाहर नहीं। अब मैं उसी के बारे में चर्चा करूंगा।

जैसा इस बाई ने गाया कि – 'सेत सिंहासन छत्रा विराजे, अनहद शब्द गैब धुन गाजे'। सफेद रंग का प्रकाश जो योगी अपने अन्दर देखते हैं, वह सत् है। महात्माओं ने कहा कि वह शब्द आपके अन्दर गूंज रहा है, लेकिन हम बाहर की भक्ति में लगे हुए हैं। यह ज्ञान आंखों के अन्दर तीसरे तिल से शुरू होता है। इस ज्ञान को प्राप्त करने के लिये राजा, महाराजा, ऋषि–मुनियों ने जगह–2 जाकर बड़ा परिश्रम किया, बहुत सा तप किया। जैसे गोपीचन्द भरथरी। गोपीचन्द की मां ऊपर खड़ी थी और नीचे गोपीचन्द नहा रहे थे। गोपीचन्द के शरीर को देखकर उसकी मां रो पड़ी कि ऐसा सुन्दर शरीर इसके बाप का भी था, जो मिट्टी में मिल गया। रोने से आंसू नीचे पड़ा तो गोपीचन्द को पता चला कि उसकी मां रो रही है। पूछने पर उसने कहा कि बेटा ! तेरे जैसा तेरे बाप का शरीर था, मिट्टी में मिल गया। तो क्या किया जाए? बेटा, गुरू गोरखनाथ से योग ले लो और अमर हो जाओ। तो उस ज्ञान को प्राप्त करने के लिए वह गुरू गोरखनाथ के पास गए, तब गुरू जी ने कहा कि बेटा। तुम राजा हो। अहंकारी होने के कारण नाम के अधिकारी नहीं हो। तुम बारह वर्ष तक घर–2 भिक्षा मांग कर फिर मेरे पास आओ। इसके बाद उन्होंने कठोर तप किया, तब वह ज्ञान मिला।

राजा जनक ने इसी ज्ञान को प्राप्त करने के लिए पूरा राज दे दिया, पूरा जहान दे दिया। उन्होंने अपने गुरू अष्टावक्र को सब कुछ समर्पित करके, घोड़े पर चढ़ते हुए पन्द्रह मिनट में यह ज्ञान प्राप्त किया। वही ज्ञान पण्डित फकीरचन्द जी की कृपा से 10-15 मिनट में मुझे प्राप्त हो गया। उस ज्ञान को मैं आपको बताना चाहता हूं। इस ज्ञान से फायदा यह होगा कि इस लोक में आपको कोई अभाव नहीं रहेगा। बेफिकरी व मस्ती बनी रहेगी और वाहि लोक भी सुन्दर बन जायेगा। गया तो मैं हूं नहीं। अगर आखिर में यह ज्ञान रहा तो इस लोक में दोबारा नहीं आऊंगा। क्योंकि यहां मैं किसी को सुखी तो देखता नहीं हूं। सब लोग दुःखी हैं। तो सुख किसे मिलता

है। 'ग्रन्थ साहब' में लिखा है –

सुख किथे नहीं मिलदा प्यारे, सुख सतगुरू के चरणी'

यानी किसी जीते जागते महापुरूष की भक्ति बताई है। लेकिन यह मन महापापी है, विश्वास नहीं करता। अपने जैसे जीते–जागते आदमी को कैसे भगवान् माना जाए? उसके बच्चे भी हैं, घर भी है, वह रोटी भी खाता है, बीमार भी होता है। यह टेढ़ा काम है। मैं कुछ दिन पहले किसी काम से कुलविन्द्र के पास होस्पिटल में गया था। उसका मेरे प्रति बड़ा प्यार है। वहां दीवार पर क्रिसचियन के गुरू ईशा मसीह का फोटो लगा हुआ था। उसके दोनों हाथों में कील लगी थी और उसमें नीचे लिखा था – ईशु मेरा रक्षक है। मैंने इशारा किया कि देख। ये खुद तो फांसी पे लटके हैं और लोग इसको अपना रक्षक मानते हैं। तो तुम जो मुझे मत्था टेकती हो, मुझे तकलीफ हो रही है और मैं डाक्टर के पास दवा लेने के लिए आता हूं। तो आप बताओ कैसे भगवान् माना जाए उसको? बात कहने की यह है कि बेटियो। जीते जागते महापुरूष को भगवान् नहीं मान सकते। क्योंकि हमें शंका व भ्रम है। परन्तु बिना माने काम नहीं चलेगा। जो गए हुए गुरू हैं, उनको मानने से मन को खुशी मिलेगी, लेकिन ज्ञान नहीं मिल सकता। जैसे जिस वक्त सांप गुजरता है, उसके ऊपर लाठी मारे तो सांप मर जायेगा। यदि सांप चला गया तो लकीर रह गई, लाठी पीटेगे, पर सांप तो नहीं मरता। तो हम लोग गए हुए महापुरूषों का गीत गाते रहते हैं, उनकी वाणी पढ़ते रहते हैं जिससे हमें पूरा लाभ नहीं होता। क्योंकि यदि कोई जीवित अनुभवी पुरूष है तो हम उनसे बात कर सकते हैं, पूछ सकते हैं, साधन सीख सकते हैं। यह गुरू भक्ति है। गुरू से जबरदस्त प्यार हो तब ऐसा होगा। जैसे मीरा ने किया –

आंखनियां झाई पड़ी, रूप निहार–निहार।
जीभड़िया छाला पड़ा, नाम पुकार–पुकार।।

इतनी लगन, श्रद्धा व प्यार हो तब यह ज्ञान ले सकते हैं। इसी गुरू

भक्ति का एक शब्द डा0 कमला से सुनवा देता हूँ।

मेरे सतगुरू मीत प्यारे, देओ दर्शन प्यास बुझा रे।

.....

अर्थात् जिसको सतगुरू के दर्शन की प्यास हो, लगन हो, श्रद्धा हो, तब यह ज्ञान मिलेगा। सतगुरू क्या करेगा? कृपा करके उस जीव को भेद बतायेगा कि बेटा–बेटी। बाहर भटकने की जरूरत नहीं। कहां मूर्तियों व गुरूओं के पास मत्था रगड़ते फिर रहे हो? वह भगवान् तुम्हारे अन्दर बैठा हुआ है। उसका भरोसा, आस–विश्वास रखो, वह तुम्हारा सब काम करेगा। और ये जो कथाकार गुरू है, जो जगह–2 काम कर रहे हैं, गलत नहीं है। ये लोगों को सुन्दर–2 संस्कार देते हैं। परन्तु इनसे स्थायी शान्ति नहीं मिलेगी। सदा रहने वाली शान्ति तो सतगुरू जो सत् में रहने वाला है, उनसे मिलेगी। सत् क्या है? आपके अन्दर जगमग ज्योति है और जो जबरदस्त शब्द गूंज रहा है। वह सतनाम तो मेरे अन्दर ही था, लेकिन ज्ञान नहीं था। सतगुरू ने कृपा की। क्या कृपा की? गुरू उस नाम पर बैठे हुए थे और मैं आंख बन्द करके बैठ गया। बस वो धार मेरे अन्दर प्रकट हो गई। जैसे जलते हुए दीपक से ही दूसरा दीपक जलता है। बुझे हुए दीपक के साथ दीपक लगाते हैं तो वह नहीं जलता। जो महापुरुष खुद उस नाम में रहता है, मस्ती में रहता है, खुशी में रहता है, उसके दर्शन मात्रा से, प्यार से, श्रद्धा से आपके अन्दर वह ज्योत जल जायेगी। जैसे मेरे साथ हुआ। और वही नाम आपके अन्दर है। क्या है वह ? पहले तो सतगुरू का स्वरूप बनता है और यह बड़े प्यार से बनेगा। अगर प्यार नहीं है तो यह बन नहीं सकता। उसके बाद उसका रंगरूप बदल जाता है और आत्म–पद आ जाता है, जहां जबरदस्त ज्योत है। यहां आप अलग–2 ज्योत देखोगे। कोई लाल रंग का प्रकाश, कोई पीले रंग का प्रकाश और कोई नीले रंग का प्रकाश। लेकिन आखिरी सफेद रंग का प्रकाश है। लेकिन यह प्रकाश उसी को आयेगा, जिसका चरित्रा बहुत अच्छा है। अगर हम

कामी, क्रोधी हैं, हमारे में शक्ति नहीं है तो इसमें समय लगेगा। इसलिए गुरू उस खोयी हुई शक्ति को पैदा करने के लिए तरीका बतायेगा और वह जो नाम की धार है, प्रकट हो जायेगी। अगर आप गृहस्थी हैं और बाल बच्चों से वह शक्ति खोई हुई है तो कोई चिन्ता फिकर नहीं। वह राम नाम की धार तो सहज में प्रकट हो जायेगी, लेकिन यह प्रकाश का अजब रूप है। यह उन्हीं को प्रकट होगा, जिनका चरित्रा अच्छा है। यह डा0 कमला बैठी है आपके पास में यह जबरदस्त साध्वी है, मीरा है। लेकिन वह मीरा नहीं जो आपसे कुछ लेने वाली हो। यह कुछ लेती नहीं है। यह तो 12-13 हजार रुपये वेतन लेती है। राजा साधु है। कोई ब्याह शादी नहीं, कोई लेना देना नहीं। ऐसे लोगों को जो प्रकाश आता है, वह प्रकाश अन्दर जगमग ज्योत है। तो सतगुरू से प्यार होने से वह सतगुरू तरीका बताता है। अब मैं जगह–2 जाता हूं। मेरे को कई लोग तो घर में बैठा लेते हैं, कई जब मुसीबत होती है तो हाजिर खड़ा कर लेते हैं, कई दुनियां का काम करा लेते हैं, कई साधना में मदद ले लेते हैं। जगह–2 से भीलवाड़ा से, अजमेर से, जोधपुर से पत्रा आते रहते हैं और जगह–2 से टेलिफोन आते रहते हैं कि आपने यह किया, आपने वह किया। बेटियो। सच्चाई यह है कि जगह–2 मेरा स्वरूप प्रकट होता है लोगों के अन्दर और मैं उनकी मदद करता हूँ, लेकिन मैं कहीं जाता नहीं हूं। तो वह कौन है? वह उनका प्यार व विश्वास है। क्यों प्रकट होता है? मेरा तो मन साफ है। कोई हेरा–फेरी की बात नहीं। जो बात यहां पर है, वो वहां पर है। जो बात इधर है, वो उधर है। दूसरी बात यह है कि मैंने कोई डेरा नहीं बनाना,कोई चेला नहीं बनाना, कोई रुपया इकट्ठा नहीं करना। महात्मा आते हैं। किसी को रुपयों की जरूरत है तो किसी को चेलों की। मैंने तो आज तक एक भी चेला–चेली नहीं बनाया। यह डा0 कमला बैठी है। मैंने तो इसको चेली नहीं बनाया, जबरदस्ती बनी हुई है। मैंने कहा – बेटी। कोई बात नहीं, तू खुद ही गुरू है। मैं तेरे को क्या ज्ञान दूंगा? मैं

तो कभी प्रकाश में ठहरता ही नहीं। लेकिन इसका विश्वास है। तो वो जो प्रकट होता है, कौन है? तुम्हारा विश्वास। अब लोग मुझे जगह–2 दान–दक्षिणा देना चाहते हैं और कहते हैं कि आपने हमारा यह काम किया, वह काम किया। लेकिन मैं कानों को हाथ लगाता हूं। जब मैं गया ही नहीं तो कैसे लूं? यह बेटी है धन्नी, बड़ी दानी है। इसका विशेष प्यार था। यह घर से कभी खाली नहीं जाने देना चाहती थी। लेकिन मैं तो नियम बद्ध हूं। मैं आता रहता था। इसकी विशेष श्रद्धा के कारण ही यह सत्संग करना पड़ा।

तो बेटियो। वो नाम आपके अन्दर है, जो किसी जीते जागते अनुभवी पुरूष से मिलेगा। वह सतगुरू आपसे कुछ लेगा नहीं। हमें चाहिए कि हम सब कुछ तन–मन–धन गुरु को अर्पण करें। लेकिन किस गुरू को? आजकल गुरूओं की हालत देखती हो, पढ़ती हो। जगह–2 गुरू ठग निकलते हैं, तो विश्वास नहीं बैठता। इसलिए राधास्वामी वाणी में कहा है कि **''तन मन वाको दीजिए, जामें विषय नाही''** अर्थात् जिसको किसी तरह की इच्छा नहीं, वासना नहीं, उसको तन–मन देना है। जैसे राजा जनक ने गुरू अष्टावक्र को दिया। गुरुओं की इस कमी को देखते हुए मेरे गुरू पण्डित फकीरचन्द जी महाराज ने कहा कि स्त्रियों की गुरू स्त्री होनी चाहिए और उन्होंने भीलवाड़े के अन्दर मोहिनी बाई अग्रवाल को आचार्या बनाया तथा गुरूवाई का काम दिया।

गुरुओं के प्रति भक्तों का बड़ा प्यार होता है। गुरुओं की सेवा होती है, उसके तन की, मन की, धन की। अब अगर तुम किसी महापुरुष के तन की सेवा करोगी तो यह बात खराब होगी। इसलिए स्त्रियों का गुरू स्त्री हो। इसी ख्याल से इस बेटी कमला को बुलाया कि तू आ जाना, काम करना। किसी बेटी को शंका हो तो इसको बता देना। यदि स्त्री की गुरू स्त्री हो तो वह उसको अपनी मन की बात बता सकती है। सेवा करना चाहे, मुटठी चप्पी करना चाहे तो कर सकती है। क्योंकि गुरू के प्रति कितना प्यार होता है, पूछो मत।

एक मिसाल देता हूं। मैं यहां स्कूल में पढ़ाता था। देवी बाई गुरू भक्त है। उसका मेरे प्रति बड़ा प्यार है। मैं पढ़ा रहा था। तब तक देवी बाई आ गई। वह मेरे लिए पेड़े लेकर आई। आते ही उसने मेरे को देखा, प्यार से रोने लगी और देर तक मुझे चिपटी रही। वहां पर मेरा लड़का आनन्द भी पढ़ाता था। जब वह चली गई तो वह बोला – बापू जी। इस बूढ़ी औरत को शर्म नहीं आई? कैसे आपको चिपटी हुई थी? अब उस बच्चे को क्या पता कि यह क्या प्यार है? यह परा प्रेम है। गुरू को छूने में एक विशेष आनन्द मिलता है। इसीलिए प0 फकीरचन्द जी चाहते थे कि स्त्रियों की गुरू स्त्री हो। और मैं भी यह चाहता हूं कि बेटियां इस ज्ञान को प्राप्त करके अपना भी कल्याण करें और दूसरों का भी। अब सतगुरू की महिमा का शब्द सुनो –

''मैं तो थारे चरण का दास, सतगुरू मेरे आप धनी''

तो यह है सतगुरू की महिमा। किसी एक को पूर्ण मानकर उसकी शरणागत हो जायें। लेकिन यह मन मानता नहीं, क्योंकि हमारे मन पर बहुत ज्यादा संस्कार पड़े हुए हैं जन्म जन्मान्तरों के। तो एक दम यह बनना मुश्किल है। बड़े भाग्य हो तो कोई सतगुरू मिले। सतगुरू की क्या पहचान है? उसकी यह पहचान नहीं कि उसके बहुत बड़ी दाढ़ी हो, बहुत चेले हों, बहुत संगत हो, बड़ा डेरा हो। राधास्वामी मत में गुरू की पहचान बताई है कि ––

गुरू वही जो शब्द स्नेही, शब्द बिना दूसर नहीं सेही।
शब्द कमावे वो गुरू पूरा, उन चरणन की बन जा धूरा।
शब्द भेद लेकर तुम उनसे, शब्द कमाओ तुम तन–मन से।

यानी राम नाम को शब्द कहा है। अन्दर जो नाम गूंजता है, उसके साथ स्नेह हो और उसी में मस्त रहता हो। शब्द कमाने का मतलब है कि सुरत हमेशा उस शब्द के साथ लगी रहे। आगे कहा है – **''शब्द कमावे वो गुरू पूरा, उन चरणन की बन जा धूरा''** अर्थात् उनके लिए बच्चा बनकर, छोटा बनकर, भली भांति दण्डवत् करके उनको पूर्ण मालिक का रूप मान ले। यह सतगुरू की महिमा बताई

है। राधास्वामी मत में चार प्रकार की गुरू भक्ति बताई है। पहली – **'सेवा कर तन–मन–धन अरपे, सतपुरूष सम सतगुरू थरपे।** अर्थात् सतगुरू को मालिक का पूर्ण रूप मान ले कि यह साक्षात् भगवान् बैठे हैं। आगे कहा है – **'आरत सेवा नित करे, काम क्रोध मद लोभ चित से हरे'** अर्थात् अपनी सब कमजोरियों को छोड़ दें। गुरू के तन की क्या सेवा है –

चरण दबावे पंखा फेरे, चक्की पीसे पानी भरे।
मोरी धो झाड़ू को धावे, खोद खदाना मिट्टी लावे।
काट पेड़ से दातुन लावे, बटना मल अस्नान करावे।
अंग पोछे धोती पहनावे, करे रसाई भोग धरावे।

आखिर में कहा है – **पीक दान ले पीक करावे, फिर सब पीक आप पी जावे।**

अब बोलो यह सुनकर धड़धड़ी आ जाती है क्योंकि उसको भगवान् माना नहीं गया। सतगुरू तो मान लिया, काम भी कर दिया, कपड़ा भी पहना दिया, खाना भी खिला दिया लेकिन उसकी झूठन कौन खाए? अरे भगवान् का झूठा प्रसाद कहां? मन ने माना नहीं। यह है तन की सेवा। जो सेवा करता है, वह पार हो जाता है। अब तुम बेटियां किसी के चरण दबाओगी तो घर वाले लाठी लेकर मारने आ जायेंगे। आज के जमाने में बेटियो। यह टेढ़ा काम है। फिर आप क्या करो? अपनी मां–सास के पांव दबा दिया करो। इसलिए प0 फकीरचन्द जी ने कहा कि स्त्री की गुरू स्त्री होनी चाहिए ताकि उसके प्रति तुम अपना प्यार प्रकट कर सको। आगे धन की सेवा बताई है –

धन की सेवा यह है भाई, गुरू सेवा में खर्च कराई।
गुरू नहीं भूखा तेरे धन का, गुरू पे धन है भक्ति रत्न का।
पर तेरा उपकार करावे, भूखे प्यासे को दिलवावे।
उनकी मेहर मुफ्त तू पावे, जो उनको प्रसन्न करावे।
गुरू का खुश होना है भारी, सतपुरूष निज कृपा धारी।

तो धन की सेवा क्या है? गुरू के नाम पर खर्च कराना, सत्संग कराना,

सत्संगियों का इन्तजाम करना। उससे गुरू प्रसन्न होगा कि यह भक्त बड़ा काम करता है। तो धन की सेवा बताई धनवालों के लिए।

इसके बाद तीसरी सेवा मन बुद्धि की सेवा है। इसका तरीका है सत्संग में बैठ कर –

दर्शन करे वचन पुनि सुने, सुन–2 कर नित मन में गुने।
गुन गुन काढ़ि लेवे तिस सारा,काढ़ि सार तिस करे आहारा।
कर आहार पुष्ट हुआ भाई,लाज जग भो भय सब गई नसाहि।

अर्थात् गुरू जो बताए, उसके मुताबिक चलना शुरू कर दिया जाए, क्योंकि जब रहनी बनेगी तो मजबूती होगी। फिर कहा है – 'गुरू का रूप लगे ऐसा प्यारा, कामिनी पति मीन जल धारा' यानी मछली को पानी से बाहर निकाल दो तो वह मर जाती है। आगे उदाहरण दिया है कामिनी पति का। यदि पति प्यार करता है, रक्षा करता है तो उसकी तरफ दिल रहता है लेकिन बाद में खटपट हो जाती है। आजकल वो अच्छा प्यार नहीं है। बड़े भाग्यशाली है वो जिन पति–पत्नी का आखिर तक प्यार बना रहता है। अर्थात् गुरू के प्रति ऐसा प्यार होना चाहिए जैसे –

''मन में धसा सुरत में पका, पक–2 घट में गाढ़ा थाना।
गाढ थान तब हुआ दीवाना''।

यानी गुरू का प्यार ऐसा हो कि हर समय गुरू स्वरूप माथे में रहे, क्योंकि माथे में गुरू के स्वरूप को देखते–2 आपका योग बन जायेगा। ऐसा करते–2 हमारी कमियां दूर होती जायेंगी और मन की सफाई हो जायेगी।

इसके बाद चौथी भक्ति है साधना की –

अन्तरमुख बैठे एकान्त अभ्यास करे, पावे मन शान्त।
दो दल उलट गगन को धावे, खुशी होवे और नाद बजावे।
तब सतगुरू की जानी महिमा, जिन प्रताप बाजी धुन वीणा।
अलख अगम और मिले अनामी, अब कहूं धन–2 राधास्वामी।

जो जीव इस तरह सेवा नहीं करता तो उसकी भक्ति में कमी रहती

है। तो गुरू भक्ति है गुरू से प्यार। बिना गुरू भक्ति के यह अवस्था बनती नहीं। हमारे ऋषि मुनि आदि सभी ने गुरू भक्ति पर जोर दिया और मुक्ति का अनुभव किया। आप पूछ सकती हो कि क्या मुक्ति होती है? हां। मैं दिन भर अधिक समय मुक्त रहता हूं। पूरी उम्र से यह सत्संग करा रहा हूं। कुछ लेने की इच्छा नहीं है। तो गुरू भक्ति में ये चार अवस्था बताई। इन चार से आपका काम बनेगा।

तो बेटियो। मैंने जो ज्ञान प्राप्त किया, उसे बांटना चाहता हूं ताकि तुम सुखी हो जाओ और तुम्हारी जिन्दगी सुख शान्ति से गुजरे। जैसे कबीर ने कहा है –

'नाम रत्न की हाट खुली घट माहि,
सीतमीत ही देत हूं गाहक कोई नाहि'।

तो मैंने इस सत्संग में बताया कि चार प्रकार की गुरू भक्ति से आगे की अवस्था बनी रहती है। जब आपका दिल साफ हो जायेगा तो यह ज्ञान प्राप्त होगा। मन के सब घटिया संस्कार हटते जायेंगे तथा ज्ञान व विवेक होता जायेगा, जिससे आगे का रास्ता खुलता जायेगा। अभी आप डा0 कमला से शब्द सुनिए कि यह मन कैसे साफ हो सकता है?

साफ कर दिल के शीशे को, सतगुरू अन्तर में बसता है।

.....

हमारे मन के शीशे पर चिन्ता, फिकर, डर, भय, हेरा–फेरी, झूठ कपट आदि तरह–2 के संस्कार पड़े हुए हैं। जब तक ये संस्कार साफ न हों तब तक हम प्रसन्न नहीं हो सकते। जैसे जब शीशा साफ हो तभी हम उसमें अपना स्वरूप देख सकते हैं। साफ करने का तरीका – सतगुरू के दरबार में जाओ, सच्चे बन के बैठ जाओ, एकटक उसको देखते रहो। अगर वास्तव में वह सतगुरू सत् में रहता है तो उसकी रेडियशन की धारें आपके अन्दर आ जायेंगी। दूसरी बात, उनके मुख से वही बात निकलेगी, जिसकी हमारे अन्दर कमी है। आप जो शंका, भ्रम, सवाल लेकर जाते हो तो उन सबका

जवाब आपको मिल जायेगा। सतगुरू के सत्संग के बाद आपको कोई भ्रम नहीं रहना चाहिए। अगर भ्रम है तो वह सतगुरू नहीं। यह सतगुरू के सत्संग में जाने से साफ होगा। शब्द में कहा है कि वह राम मूर्ति में नहीं मिलता। यदि मूर्ति में मिलता तो आप सभी मूर्ति पूजते हो, वह सबको मिल जाता। लेकिन किसी को नहीं मिला। हां, विश्वास से फल मिल जाता हे। क्योंकि 'विश्वासमः फलदायकमः'। आगे कहा है–

फिरे क्यों पहाड़ जंगल में, मरै क्यों भूखा और प्यासा।
लगा के चौगरदे धूनी, क्यों अग्नि से तू जलता है।
चाहे दिन रात पढ़ो गीता, न सुनने राम आता है।

अर्थात् उसको पाने के लिए लोग जंगलों में जाते हैं, तप करते हैं, दिन – रात गीता पढ़ते हैं, लेकिन फिर भी बात बनती नहीं। कारण जो गीता अन्दर गाई जा रही है, उस गीता को सुनने से मुक्ति व शान्ति मिलेगी। इसी तरह से सब तीर्थ आपके अन्दर ही हैं। आपके अन्दर गंगा, यमुना, गोदावरी, महानदी सब बह रही है। उसके अन्दर सुरत को इकट्ठा करने से आपका मन साफ हो जायेगा, पवित्राता आ जायेगी। ये बाहर के तीर्थ व व्रत तो विशेष–2 के लिए हैं, जो जबरदस्त विश्वास रखते हैं। जैसे कथानक में आता है कि शिव पार्वती बैठे हुए थे। गंगा जी का स्नान था। लाखों लोग गंगा स्नान के लिए जा रहे थे। पार्वती शिव से पूछने लगी कि – हे महाराज ये जो लोग गंगा स्नान के लिए जा रहे हैं, क्या इन सबके पाप धुल जायेंगे? शिव अनुभवी थे। उन्होंने कहा कि इसका उत्तर जानना चाहती तो इसे प्रत्यक्ष देख लो। मैं बूढ़ा होकर मर जाता हूं और तुम रोने लग जाना और कहना भैया। ऐसा–2 करो। फिर तुम्हें पता लगेगा कि किसके धुलेंगे और किसके नहीं धुलेंगे। शिव ने वैसा ही किया और पार्वती रोने लगी। तीर्थ यात्रियों के पूछने पर पार्वती ने कहा कि मेरा आदमी मर गया है, इसका दाह संस्कार करना है। जब कुछ दयालु लोगों ने उनकी मदद करनी चाही तो पार्वती ने कहा कि मेरे पति का दाह संस्कार वह करे जो पापी न हो। वे बोले – पापी हैं

तभी तो यहां स्नान के लिए आए हैं, अगर धर्मात्मा होते तो यहां क्यों आते ? इस तरह बहुत लोग आते रहे और जाते रहे आखिरकार वहां एक नवयुवक आया। उसने भी पार्वती को रोती देखकर वही बात पूछी। पार्वती द्वारा बात बताने पर जब वह सहायता के लिए तैयार हुआ तो पार्वती कहने लगी कि भाई। मेरे पति धर्मात्मा थे। उन्होंने मरते समय कहा था कि मेरे दाह संस्कार में उसी के हाथ लगें जो पापी न हो, जो पाक व पवित्रा आत्मा हों। नवयुवक कहने लगा – अच्छा यह बात है। दो मिनट ठहरो। वह दौड़कर गया और गंगा के अन्दर गोता लगाकर झटपट आ कर बोला – हे माता। अब मेरा काम सिद्ध हो गया है। गंगा में गोता लगाने से मेरा सारा पाप धुल गया है। मैं पवित्रा हो गया हूं। यह सुनकर शिव उठ गए और कहने लगे – पार्वती। इस गंगा स्नान में केवल इस एक आदमी के पाप धुले हैं, क्योंकि इसका जबरदस्त विश्वास है कि गंगा में स्नान करने से पाप धुल जाते हैं।

तो बेटियो धर्म विश्वास का विषय है। विश्वास मोल नहीं मिलता। कबीर जी कहते हैं –

प्रेम न बाडी उपजे, प्रेम न हाट बिकाए।
राजा प्रजा जेहि रुचे, शीश दे ले जाए।।

तो यह सिर देने का मार्ग है। सिर क्या? घमण्ड दूर करना। गुरू धारण करने से वह घमण्ड दूर हो जाता है। कथा आती है कि नारद विष्णु भगवान् के दरबार में जाता था लेकिन जब वह वापिस आता था तो पीछे से उसके स्थान पर पोचा लगाते थे, सफाई करते थे। क्यों? क्योंकि वह निगुरा था। कारण तप करके उसने सिद्धि तो प्राप्त कर ली, लेकिन उसका घमण्ड नही गया और न उसने गुरू ध ाारण किया। तो गुरू धारण करने का अर्थ है कि वह अहंकार दूर हो जाये। इसलिए गुरू भक्ति बहुत जरूरी है। बिना गुरू भक्ति के कोई पार नहीं उतरा। तो सत्संग में उसी के कर्म कटते हैं जो सोचता है कि मैं गुरू महाराजजी के पास जा रहा हूँ, मेरा काम हो जायेगा। सत्संग के बारे में कहा है –

''सत्संगत मद मंगल मूला, सोहि फल सिद्धि सब साधन फूला।
सब ही सुलभ सब दिन सब देशा, सेवत सादर सब सुमन क्लेशा।''
अर्थात् सत्संग को ध्यान, श्रद्धा से सुनने से मानव के सभी प्रकार के दुःख–क्लेश दूर हो जाते हैं।

तो आज के सत्संग के लिए मैने धन्नी को बताया कि बेटे। मैं सत्संग देने आ रहा हूँ। मैं जितनी देर सत्संग देता हूं, तू मेरी तरफ देखती रहना, तेरे सब काम पूरे हो जायेंगे। यह सत्संग कराना भी मेरा कोई कर्म है। मैं चाहता हूं कि तुम लोगों को ज्ञान हो जाये और मैं गुरू ऋण से मुक्त हो जाऊं।

तो आज के सत्संग में मैंने बताया कि सतगुरू राह बताता है। जहां तुम्हारा विश्वास आ जाए, वहां से नम्रता के साथ नाम ले लो। इस नाम की बड़ी कीमत है। इससे आपकी सुरत ऊपर चली जायेगी। यही से कोर्स शुरू होता है। यह चोटी तक का साधन है। सब कुछ इस खोपड़ी में भरा पड़ा है। आपके तीन शरीर हैं। एक तो आंखों से नीचे तक का शरीर है, जिसे स्थूल शरीर कहते हैं। यहां इन्द्रियों का काम है। इधर से ऊपर माथे तक का सूक्ष्म शरीर है। इससे ऊपर कारण शरीर है। प्राचीन समय में ऋषि मुनियों ने इन्द्री चक्र, नाभि, चक्र, ऋहृदय चक्र, कण्ठ चक्र से ये योग साधा है। लेकिन आजकल सन्तों ने इस योग को आज्ञा चक्र से शुरू कर चोटी तक पूरा किया है। प्राचीन समय में इस योग के लिए ब्रह्मचर्य आश्रम का होना अति आवश्यक था जो इस समय के लिए सम्भव नहीं है। अतः आज के अनुभवी पुरुषों ने मनुष्य के स्वास्थ्य उसके वातावरण, अधिकार और संस्कार को ध्यान में रखते हुए नीचे के साधनों को छोड़ दिया और सहज योग का तरीका बताया, जिससे सुख शान्ति का जीवन बिताते हुए सहज में जीवन मुक्त की अवस्था तक पहुंचा जा सके।

आज का सत्संग इतना ही काफी है।

राधास्वामी।

(4)

गांव : दांदू
दिनांक : 9.5.98

राधास्वामी।

शब्द

सत्संग वचन सुनाइये मेरे सतगुरू प्यारे।

.....

प्यारे सत्संगी भाई–बहनो। आपने अभी यह शब्द सुना। यह शब्द हजूर दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल का लिखा हुआ है। बड़ा प्यारा शब्द है। इसमें कहा है – ''सत्संग वचन सुनाइये मेरे सतगुरू प्यारे। बिन सत्संग विवेक न आए, सच्चा पन्थ लखाइये''। तो सत्संग क्या है? हर आदमी की जुबान पर सत्संग–2 तो है पर सत्संग का भाव है – सत् के साथ संग करना। सत् कहाँ है? हर इन्सान में जो मेरे में, आप में जो बोलता है, वह सत् है। उसका संग करने का नाम सत्संग है। अभी उसके तरीके, परहेज, ढंग ये सिखाने के लिए जो बयान दिए जाते हैं, शब्दवाणी गाई जाती है, उसको केवल सत्संग समझ लिया। सत् इस शरीर के अन्दर जो बोलता है वह तच्व है। यह बहुत ही सूक्ष्म व विशेष चीज है। यह हर आदमी के अन्दर है। उसके साथ मिलना, उसका अनुभव करना – इसका नाम सत्संग है। तो यहां पर कहा है कि महाराज। सत्संग का वचन सुनाइये कि हम किस तरह से सत् का संग करें, जिससे हमारा कल्याण हो। आगे कहा है – 'सच्चा पन्थ लखाइये, मेरे सतगुरू प्यारे'। तो क्या पन्थ दो हैं? पर क्योंकि इस चीज को प्राप्त करने के लिए, ऋषि – मुनियों ने अपने–2 अनुभव से बहुत से तरीके बताए हैं। जैसे हममें से बहुत से लोग पूजा–पाठ वगैरा करते हैं, कोई मूर्ति का ध्यान करता है, कोई गाता–बजाता है, कोई दान–पुण्य करता है। तो वह कहते हैं कि जो बिल्कुल सच्चाई का रास्ता है, छोटा है, सहज है – वो लखाइये। आगे कहा है – ''देखा–देखी भेड़ चाल है''। यानी

आम लोग देखा–देखी की भक्ति करते हैं। एक आदमी गुरू धारण करता है तो दूसरा उसको देख कर चला जाता है। उसको यह पता नहीं कि गुरू किसको कहते हैं? गुरू से क्या मिलता है? अब गुरू तो धारण कर लेंगे और फिर उस गुरू से विश्वास टूट जायेगा तो डोल ही डूब जायेगा क्योंकि पूरा खेल विश्वास का है। इसलिए भेड़चाल में न आए। सूझ–बूझ व समझ के साथ उस तरफ चलना है। आगे कहा है – ''तीर्थ आपके चरणों में रहता, मुझे स्नान कराइये मेरे सतगुरू प्यारे''। जगह–2 हमारे तीर्थ बने हुएहैं, जहां पर महापुरूषों ने तपस्या की है, साधन – अभ्यास किया हुआ है। वह जगह पूजनीय है क्योंकि वहां की जो Radiation है, वातावरण है बड़ा शान्त है, आनन्द का है, खुशी का है। लोग गंगा, हरिद्वार, बद्रीनाथ आदि तीर्थ स्थानों पर स्नान करने के लिए जाते हैं। यहां गुरू भक्त कहते हैं कि हे महाराज। वह सुख देने वाला तीर्थ आपके चरणों में रहता है। आप कृपा कीजिए, जिसमें नहाकर हम पवित्रा हो जायें और हमारे मन का मैल उतर जाये। अब यहां एक विशेष बात है कि 'गुरू चरण गुरू चरण' सब लोग जोर लगाते हैं, पर हम गुरू लोग यह नहीं बताते कि गुरू के चरण क्या होते हैं? न तो जीव पूछने के लिए जाता है और न महापुरुष ही यह बताने के लिए तैयार है। क्योंकि अगर हम सार बता देंगे तो हमारी, हमारे डेरे की, आश्रम की रौनक खत्म हो जायेगी। असली गुरू के चरण हैं – जीव के अन्दर जगमग ज्योत। तो जो भक्त प्रकाश के अन्दर रहता है, वह गुरू के चरणों में रहता है। यहां भक्त कहता है कि हे महाराज। आप कृपा करके मुझे अपने चरणों में लगाइये, जिससे मेरी वृत्ति टिक जाए, अन्दर की तरफ साधन बन जाये और मैं आत्मिक अनुभूति कर लूं। शब्द में आगे कहा है –– ''गुरू के रूप में साहिब बसता, अपना दर्श दिखाइये मेरे सतगुरू प्यारे''। तो साहिब को तो किसी ने देखा नहीं। क्या हुआ हजारों में, करोड़ों में कोई एक दो अन्दर की तरफ अनुभव करता हो। लेकिन उसका बयान नहीं कर सकता। जैसे मैंने आपको कई

सत्संगों में कहा है कि भाई। मैं उस जगह रहता हूं जहां पर न रंग है न रूप है न रेखा। लेकिन मैं उसको दिखा तो नहीं सकता। उसको समझने के लिए मैंने प0 फकीरचन्द जी महाराज के अन्दर मान लिया कि वह खुद ही हैं, यानी गुरू को साहिब करके मान लिया। ऐसा करके मानने से जीव का कल्याण होता है, उसकी श्रद्धा बन जाती है और वह उस महापुरूष की Radiation ग्रहण कर लेता है और वह उसके बताए हुए रास्ते पर चलता है, जिससे सहज में अपनी मंजिल पर पहुंच जाता है। कबीरदास जी ने कहा है –

''अलख पुरूष की आरसी, इन साधुओं की ही देह।
लखा जो चाहे अलख को, इनमें ही लख लें।''

तो वही बात यहां पर वह कह रहे हैं कि ''गुरू के रूप में साहिब बसता, अपना दर्श दिखाये''। अब गुरू के दर्श के लिए पहले तो किसी जीवित महापुरुष के साथ प्यार किया जाए, उसके दर्शन की इच्छा रखी जाए, उमंग लेकर जाए, उसके वचन बड़े ध्यान से सुने, तब वह अगला रास्ता बताए। तो उसे गुरू के रूप में साहिब को मानना पड़ेगा और वह गुरू के रूप में साहिब नहीं मानता तो वह अनुभवी हो सकता है, लेकिन निगुरा रह जायेगा अर्थात् उसमें अभिमान आने का डर रहता है। अगर उसे प्रकाश आ जाता है तो उसके बाद उसको आगे वचनों की जरूरत है, मार्ग दर्शन की जरूरत है। गुरू को सब कुछ मानकर उसकी आज्ञाओं पर चलना पड़ता है। पहले शरीर रूप से चलता है, वचन सुनता है, दर्शन करता है, सेवा करता है, प्यार करता है तो धीरे–2 संग का फल मिलता है अर्थात् संग से वैसा ही रंग बदल जायेगा। गुरू रंग में रंग जायेगा। वैसी ही रहनी बन जायेगी। दूसरा, अपने दर्श के लिए ऊंची अवस्था है। गुरू मूर्ति या इष्ट की मूर्ति के आगे प्रकाश और शब्द है। लेकिन यह सबके लिए जरूरी नहीं कि सबको प्रकाश आ जाए, शब्द प्रकट हो जाए। शब्द, निज घर जाने के लिए है और प्रकाश आत्मिक अनुभूति है।

आगे कहा है –– **''मैं भुजंग तू चन्दन केतु''**
अर्थात् मैं सांप हूं और आप चन्दन केतु। आपने सुना होगा कि चन्दन के जो पेड़ हैं, उनके बड़े–2 सांप लिपटे रहते हैं। चन्दन में ठंडक है। सांप में बड़ी भारी गर्मी है। तो जब उसको गर्मी लगती है या उसके कलेजे में गर्मी होती है तो वह चन्दन के पेड़ों पर जाकर लिपट जाते हैं, जिससे उनको ठण्डक महसूस होती है। तो भक्त उदाहरण देता है कि महाराज मैं तो सांप की तरह हूं, महादुःखी हूं, क्रोध में, काम में, दुनियां की चिन्ता फिकर में जला जा रहा हूं और आप चन्दन के तुल्य हैं। आप में वो ठण्डक है, जो चन्दन में है। आप शान्ति के सागर हैं। तो आप दया करके मुझे अपने अंग लगाइये अर्थात् मेरे को पहले तो अपने वचनों से, प्यार से उठाइये, फिर आपका जो अन्दर का रूप है, उसके साथ मेरी सुरत को लगाइये ताकि मुझे शान्ति मिले और इस संसार के दुःख व परेशानियां मुझे न व्यापें।

आगे कहा है कि ''कोटि ग्रन्थ पढ़–2 कर क्यों मरना, निज उपदेश चिताइये मेरे सतगुरू प्यारे।'' अर्थात् रामायण, गीता, महाभारत, वेद, पुराण, उपनिषद आदि न जाने कितने ही ग्रन्थ हैं। जीव इन सबको पढ़ ही नहीं सकता। पहली बात तो सर्वसाधारण के पास इतना समय ही नहीं है। अपने जीवन का निर्वाह करने के लिए उसको परिश्रम करना पड़ता है और अगर वो ग्रन्थ पढ़ भी ले तो कोई शान्ति नहीं मिलती। इसलिए भक्त प्रार्थना करता है कि हे महाराज ! मुझे इतने ग्रन्थ पढ़कर क्यों मरना है? आप खुद अपने उपदेश दीजिए, जिससे मेरा कल्याण हो जाए। राधास्वामी वाणी में केवल तीन ही चीज़ बताई हैं। सतगुरू, सतनाम और सत्संग। अर्थात् पहले पूरा सतगुरू देखो, उसको मालिक मानकर ध्यान करो और अन्दर वह जो सतनाम बताते हैं, उसकी खोज करो। अन्दर वृत्ति लगाने की चेष्टा करो और साथ–2 शब्द सुनते रहो। यह छोटा सा योग है। राधास्वामी योग। बहुत ही सहज, अति आसान, कुछ करना धरना नहीं। केवल सच्चे मन से किसी पूरे सतगुरू की तलाश करो।

आपकी इच्छा के अनुसार कोई न कोई सतगुरू आपको मिल जायेगा, जिससे आपका कल्याण होगा। पूरा सतगुरू आपको सत्संग सुनाएगा, ढंग या तरीका बताएगा और अगर दुनियां की जरूरत है तो आपकी दुनियां बनायेगा क्योंकि वह जानता है कि जीव को किस चीज की भूख है? अगर बिना भूख के नाम मिल जाये तो जिन्दगी अच्छी नहीं रहती। परम दयाल जी महाराज कहा करते थे कि कोई हजूर महाराज सालिग्राम जी का शिष्य था वह रोज सत्संग में जाया करता था। रास्ते में एक संन्यासी महात्मा थे जो धूनी तपा करते थे और मस्त थे। जब वह शिष्य जाया करता था तो वह पूछते थे कि भाई। आज सत्संग में आपके गुरू जी ने क्या कहा? तो वह बता देता था कि आज हमारे गुरू जी ने यह कहा, वह कहा। एक दिन जब वह जाने लगा तो धूनी वाले महात्मा ने पूछा कि भाई ! आज आपके गुरू ने क्या कहा? तो कहने लगा कि महाराज। आज हमारे गुरू ने निराली बात कही है कि किसी भी गृहस्थी का गुरू कोई संन्यासी नहीं हो सकता और अगर गृहस्थी का गुरू संन्यासी होगा तो गृहस्थी का जीवन परेशानी में फंस जायेगा। यह सुनते ही महात्मा जी को बड़ा जोश आया और उसने अपनी धूनी के पास जाकर एक चुटकी राख ली और नाम का भाव भर कर उसे वह राख देते हुए कहा कि क्या मैं गृहस्थी को नाम नहीं दे सकता हूं? अब वह संन्यासी हजूर सालिग्राम जी महाराज की कही हुई बात को नहीं समझ सका कि गृहस्थी का गुरू गृहस्थी हो, जिसे मालूम हो कि गृहस्थ में क्या–2 कठिनाई आ सकती है? उसने तो समझ लिया कि गृहस्थी को कोई संन्यासी नाम नहीं दे सकता और वह परमात्मा के नाम की अनुभूति नहीं करा सकता और जब उस शिष्य ने वह राख की चुटकी खा ली तो खाते ही उसके अन्दर जबरदस्त शब्द गूंज गया, जिसके लिए वह तैयार नहीं था। उसे अन्दर के नाम की जरूरत नहीं थी, क्योंकि वह दुनियां की परेशानी में था। उसके छोटे–2 बच्चे थे और वह 5-10 साल तक बहुत परेशान रहा। इसके बाद वह अपने महाराज जी से

मिला और कहा कि महाराज जी ! मैं बहुत बैचेन हूं। ऐसे–2 एक साधु ने मुझे नाम दे दिया क्योंकि मैंने उसे यह बात बता दी कि कोई संन्यासी गृहस्थी को नाम नहीं दे सकता और देगा तो वह परेशानी में फंस जायेगा। तब से मेरे अन्दर शब्द गूंजता है। मैं रात भर सो नहीं सकता और न ही किसी काम में मेरा मन लगता है। तो गुरू महाराज जी ने उसको दूसरा तरीका बताया। भाव यह है कि गृहस्थी को गृहस्थी गुरू ही मार्ग दर्शन कर सकता है, क्योंकि वह जानता है इसको किस चीज की जरूरत है और उसको प्राप्त करने का वह तरीका बता देता है। संन्यासी केवल उन्हीं को बता सकते हैं, जो केवल नाम के भूखे हैं।

आजकल हम साधु–महात्मा भी क्या करते हैं कि बस नाम ले लो। सब कुछ हो जायेगा। अब नाम की क्या व्याख्या है? इसे कौन ले सकता है? इसका अधिकारी कौन हैं? राधास्वामी वाणी में कहा है–

विषयन से जो होवे उदासा, परमार्थ की जा मन आशा।
धन सन्तान प्रीत नहीं जाके, जगत पदार्थ चाह नहीं ताके।
तन इन्द्री आसक्त नहीं होई, नींद भूख आलस जिन खोई।
विरह बाण जिन हृदय लागा, खोजत फिरे साध गुरू जागा।
साध फकीर मिले जो कोई, सेवा करे करै दिल जोई।
ऐसी करनी जाकी देखे, आप आए सतगुरू तिस मिले।
सतगुरू वचन सुने जब काना, उमगे हृदय प्रेम समाना।
सतगुरू से जब प्रीत लगावे, दया मेहर कुछ उनकी पावे।।

अर्थात् नाम का अधिकारी वह है, जो विषयों से उदास है, इन्द्रियों के विषयों में जिसकी रुचि नहीं है, जिसे राम नाम को पाने की लगन है, जिसे इस संसार में आनन्द नहीं आ रहा है। उनको नाम देने का लाभ है। अब नाम लेकर अगर वास्तव में किसी का नाम खुल भी जायेगा तो उसकी दुनिया नहीं बनेगी। जैसे मेरे को वह नाम शुरू से गूंज गया लेकिन मेरी कोई विशेष दुनिया नहीं बन सकी। महाराज जी ने मुझसे जबरदस्ती नौकरी करवाई, जिससे मुझे रोजी रोटी की

तकलीफ नहीं हुई। मैं सेना के अन्दर और बहुत तरक्की करता, लेकिन नाम लेने के बाद मैं सन्तुष्ट हो गया और मैं अधिक उन्नति न कर सका। उस समय मेरे पास काफी धन होना चाहिए था, लेकिन नहीं हो सका और न ही मैं बच्चों को ऊंची शिक्षा दे सका, क्योंकि मेरे पास इतना धन नहीं था। मैं केवल वेतन से धन लेता था, एक पैसा दूसरा नहीं लेता था। मेरे लिए पैसा और मिट्टी बराबर हो गया। तो बात यह है कि गृहस्थी को सतगुरू बेहतर जानता है कि क्या वह नाम का अधिकारी है या नहीं। अब तो जगह–2 नाम की दुकान खुल गई है। यह एक रिवाज बन गया है। अनुभवी सतगुरू जीव का हर तरह से कल्याण करता है। उसकी दीन व दुनिया दोनों बना देता है। अगर वह निराशा या वैराग में चला जाता है तो उसे चिताता है कि बिना इच्छा के उसे कुछ नहीं मिलेगा। मैंने बड़े–2 अच्छे आदमी देखे हैं। बड़े भाषण करते हैं, बड़ी बातें करते हैं और बाद में जब मौका मिलता है तो मेरे सामने आकर रोते हैं। एक आदमी की चर्चा है। जब मैं वहां गया तो वह मुझसे मिले। अलग कमरे में ले जाकर मेरी सेवा की और रोने लग गए और कहा कि मैं बहुत दुःखी हूं। मैं हैरान कि आप दुःखी हैं। आप तो स्वयं आचार्य हैं। कहने लगे कि मैं चाहता हूं कि मैं कुछ धर्म कर्म करूं, गुरू की सेवा करूं, भण्डारा लगांऊ, सत्संग कराऊं, लेकिन मेरे पास अब पैसे नहीं हैं और मैं लड़के से मांगना नहीं चाहता। मैंने विचार किया और पूछा– अच्छा, यह बताओ कि आपके शुरू से विचार कैसे रहे हैं? उसने कहा कि मैं साधारण व्यापारी था। मेरे दो बेटे हैं। मैं चाहता था कि मेरे बेटों की अच्छी दुकान बन जाये, उनके कारखाने चल जाएँ, अच्छी गाड़ियां हों, बस। मुझे कुछ नहीं चाहिए। मुझे तो बैठे–2 नाम लेना है। तो मैंने कहा कि अब क्यों दुःखी हो रहे हैं? तुमने जैसा चाहा, वैसा मिल गया। अब आपको राम–नाम लेने से कौन रोकता है? उसने कहा कि मैं राम–नाम के साथ सेवा, दान, पुण्य आदि करना चाहता हूँ। तो मैंने कहा भाई। आपने तो पहले यह इच्छा रखी

ही नहीं। यह आपकी ही इच्छा का फल है। तो कहने का भाव यह है कि मनुष्य जैसी इच्छा रखता है, वैसा ही बन जाता है। अगर वह गुरू महाराज जी के पास जाकर अपने विचार बताता है तो वह उसे संस्कार देता है कि ऐसा–2 सोचा करो और अगर वह गुरू की बात को नहीं समझता तथा गलत विचार रखता है तो उनको उसका फल भोगना पड़ता है जैसे मैं कुछ चाहता ही नहीं था, नाम चाहता था, वह मिल गया। अच्छी मस्ती, खुशी, बेफिकरी बनी रहती है। इसलिए यहां पूरे गुरू की जरूरत है।

शब्द में आगे कहा है – ''मैं कुमुदित तुम चन्द्र समाना, अमृत धार चुआइये, मेरे सतगुरू प्यारे''। अर्थात् चन्द्रमा तो आकाश में रहता है और कुमुदिनी जल के अन्दर और उसका मुंह उधर ही रहता है। तो हे सतगुरू! आप तो चन्द्रमा के समान हैं और मैं कुमुदिनी के समान हूँ और मेरा मुंह इधर आपकी तरफ ही रहता है। अमृत धार का अर्थ यहां शब्द व राम नाम से है। जो भक्त कहता है कि वह नाम मेरे अन्दर चुआ दीजिए, जिसे मैं पीता रहूं। वह अमी रस, नाम का प्याला पीता रहूं, जिससे मुझे मस्ती व खुशी बनी रहे। तो यह सतगुरू की महिमा है कि वह एक ही लाठी से सबको नहीं हांकता। यह नहीं कि दर्द तो हो सिर में और पट्टी बांधे पैर में।

मैं आपको वह बात कह रहा हूं, जो सत्संग में शायद ही आपको नसीब हो। सतगुरू आपको ऐसा मार्ग दिखाएगा, जिससे आपका यह लोक भी बन जायेगा और परलोक भी। मैंने उन आचार्यो की मिसाल दी है जो हमेशा से यह चाहते थे कि हमें कुछ नहीं चाहिए और हम राम नाम लें। अरे राम नाम कभी भूखे पेट लिया जाता है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने कहा है कि ––''भूखे भजन न होय गोपाला, ये लो अपनी कण्ठीमाला''। पंजाबी में कहा है – ''पेट न पई रोटियां, सारी गलां खोटियां''। इसलिए बात यह रखो कि ''जब तक जीना तब तक सीना''। आप ऊँचे विचार रखो। हमेशा आशावादी विचार रखो, निराशावादी विचार मत रखो। कही सुनी लोगों की, एक

आदमी की मिसाल आप सामने मत लो। जैसे सेठ धर्मदास जी को 56 करोड़ की माया लुटाने के बाद ही कबीर साहब ने नाम दिया। इसमें बात कुछ ओर थी, हम सब सेठ धर्मदास तो नहीं हैं। गोपीचन्द भरथरी अपनी जवानी में घर छोड़ कर चल दिये। क्या हम गोपीचन्द भरथरी हैं? यह तो एक विशेष आदमी के लिए था और वह सतगुरू ने उसके लिए बेहतर समझा था।

आगे कहा है –– ''तुम नौका में लोह कठिन हूं भवनिधि सहज तराइये, मेरे सतगुरू प्यारे''। अर्थात् आप पानी के अन्दर नौका हैं और मैं लोहा हूं, अगर लोहे को पानी में डाल दोगे तो वह डूब जायेगा, तो मैं डूब जाऊंगा। यह संसार भवसागर है। इस संसार सागर के अन्दर मेरी जीवन नैया चल रही है, आप वह नाव हैं और मैं लोह हूं। अगर लोह को नौका के अन्दर रख दिया जाये तो वह उसको लेकर तैर जायेगी। इसलिए अगर हम किसी पूर्ण अनुभवी महापुरूष की संगत कर लें तो वह हल्का फुल्का है, हमें भवसागर में डूबने नहीं देगा। यह भवसागर क्या है? एक तो बाहर का भवसागर है। यह दुनियां कितनी बड़ी है और यहां क्या–2 तमाशे हो रहे हैं। एक भवसागर हमारे अन्दर विचारों का है। हर आदमी का भव अपना–2 है। किसी को चिन्ता है, किसी को फिकर है, किसी को डर है तो कोई संकल्प–विकल्प में डूबा है। तो कहा है कि हे महाराज। आप मुझे इस संसार सागर से सहज में तैरा दीजिए, जिससे यह जिन्दगी हंसते खेलते, खाते–पीते आराम के साथ गुजर जाये। तो गुरू, शिष्य की प्रकृति देखकर उसको वह उपदेश देता है, जिससे आदमी की जिन्दगी हल्की फुल्की सहज में चलती है। मेरे साथ ऐसा ही हुआ। मैं साधारण आदमी था। मैं महाराज जी के पास जब गया तो मुझे ऐसा खेल खिलाया और उस नाम को इतना सहज कर दिया कि पूछो मत। जाते ही बख्शीश कर दी। अब अगर कोई मेरी नकल करे तो वह गलत होगा, क्योंकि वह तो मेरी प्रकृति थी, मेरे संस्कार थे, सबके नहीं हो सकते। हां यत्न जरूर करो। मैं तो

परम शान्ति चाहता था। इसलिए गुरू कृपा से मेरे सभी काम सहज में हो गए और मैं उपराम हो गया। मेरी जिन्दगी में किसी प्रकार का कोई वजन नहीं है। यानी ऐसी अवस्था कि शायद ही राजा महाराजाओं की होती हो, क्योंकि वे भी दुःख व चिन्ता में रहते हैं अर्थात् जो बड़े लोग हैं, वह सुखी नहीं रहते। कहते हैं –

शाहों के सिरों पर ताजे गिरा से, अक्सर मीठा दर्द रहता है।
जो एहले सफा हैं, उनके दिल में नूर का चश्मा बहता है।।

यानी जो बड़े आदमी हैं, वह सुखी नहीं रहते। वह कैदी हैं। उनके दिल पर बड़ा भारी वजन रहता है। एक बार मैं हजूर मानव दयाल जी के किसी प्यारे शिष्य के पास गया। महाराज जी मेरे साथ थे। मैंने उसके घर जाकर जब उसके दुनियां के ठाठ–बाठ व रहन–सहन देखा तो मैंने उस सज्जन से कहा कि आपका घर स्वर्ग जैसा है और मेरे विचार से आप जैसा सुख जिन्दगी में किसी को हो नहीं सकता। तब तक उनकी कोई रिश्तेदार औरत कहने लगी कि हमारी जिन्दगी में सुख कहां? रात ही हार्ट अटैक से बचे हैं, पता नहीं कब जान निकल जाये और आप कह रहे हैं कि हमारी जिन्दगी अच्छी है। हम बहुत दुःखी हैं। तब तक उस सज्जन ने कहा कि आप सुख की बात कर रहे हैं। हालत यह है कि मैं रात को चार–पांच गोली न खांऊ तो मुझे नींद नहीं आती। मैं समझता हूं कि आप यह क्यों कह रहे हैं और क्या कर रहे हैं और बात भी ठीक थी। मैंने जानबूझ कर उसे छेड़ा था क्योंकि वह भी अनुभवी थे। मतलब यह है कि जितने बड़े आदमी दिखते हैं, उन्हें सुखी मत समझो क्योंकि –

''बड़े–2 जो दिखें लोग, तिनको व्यापे चिन्ता रोग''।

तो सतगुरू कृपा करके आपको चाहे आप छोटे स्तर पर काम कर रहे हैं या बड़े स्तर पर, आपकी जिन्दगी को हल्की फुल्की व सहज बना देंगे।

आगे कहा है ––''राधास्वामी निज अपनी दया से भ्रम विकार नसाइये, मेरे सतगुरू प्यारे'' अर्थात् जो सतगुरू पूरा है, जो राधा को

स्वामी के साथ लगाता है, सत् के साथ जो संग करता है, उसका नाम राधास्वामी है। तो सतगुरू क्या करता है? जीव के तरह–2 के भ्रम विकार मिटा देता है। ''गुरू मिले तो भ्रम नसाहि''। जीव भ्रमों से घिरा हुआ है और उस पर तरह–2 के संस्कार पड़े हुए हैं। जिसने जैसे संस्कार ग्रहण किए हुए हैं, वे विकसित होकर उसके सामने आते हैं। चाहे स्वप्न में, चाहे विचारों में, चाहे साधन में और जीव उनको सत् मान लेता है। तो सतगुरू उसे बताता है कि जो तुझे विचार आते हैं, जो तू अन्दर नजारे देखता है, वह सत् नहीं हैं, उनको छोड़ो। जब वह उनको छोड़ देगा तो कहां जायेगा? शब्द और प्रकाश में जाकर टिक जायेगा और उसको परम शन्ति मिल जायेगी। मेरे ख्याल से आप अच्छी तरह समझ गए होंगे। आज के लिए इतना सत्संग काफी है। राधास्वामी।

(5)

स्थान : दांदू
दिनांक : 10.5.98

राधास्वामी

प्यारे सत्संगी भाई–बहनो। अभी सत्संग शुरू होने से पहले डा0 कमला से शब्द सुनिये।

शब्द–कहूं उस देश की बतिया, जहां नहीं होत दिन रतिया

.....

अभी आपने डा0 कमला से गुरू कबीरदास का बहुत ऊंचा शब्द सुना। यह उनका ऊँचा अनुभव है। जीव को सत् के साथ संग कराने के लिए यह सत्संग कराया जाता है। अनुभवी गुरू सत्संगियों को सत् के साथ संग करने का ढंग, तरीका व परहेज बताता है। मेरा अनुभव कबीर के शब्द के साथ मेल खाता है। मैं जानता हूं कि सभी यहां यह ज्ञान लेने के लिए, निज धाम जाने के लिए या परम शान्ति के लिए नहीं आते। कोई धन के लिए आता है, कोई मान के लिए,

कोई सन्तान के लिए तो कोई मन की बेचैनी के कारण आता है। अब आप खुद सोचलें की आप क्या इच्छा लेकर आए हो? बात यह है कि सच्ची शान्ति इसी अनुभव पर आकर मिलेगी। जैसे बच्चा, पैदा होने के बाद खेलने में, खाने में, मां के साथ घूमने में खुशी लेता है। थोड़ा बड़ा होने पर ओर बच्चों के साथ खेलने में खुशी लेता है। फिर वह स्कूल में पढ़ने की खुशी लेता है। मां–बाप भी खुशी लेते हैं। फिर वह ब्याह शादी की व बाल–बच्चों की खुशी लेता है और वह खुशी थोड़े दिन बाद फीकी हो जाती है। धनवानों को धन कमाने के बाद फिकाई आ जाती है। ब्याह–शादी के बाद जैसे स्त्री–पुरूष का Sex होता है, उनको फिर सन्तुष्टि हो जाती है और फिकाई आ जाती है। पहले बड़ा प्यार होता है, बाद में ज्यों–2 उम्र गुजरती जाती है वह प्यार ढीला होता जाता है और एक दूसरे में कमी देखने लग जाते हैं। चिड़चिड़ा स्वभाव हो जाता हैऔर वह सत्संगों में खुशी देखता है। भाव यह है कि जीव इस खुशी के लिए जन्म से ही तलाश करता आ रहा है और उसको यह पता नहीं कि खुशी है कहां? वह खुशी, उमंग, शान्ति है कहां?

कहा गया है –

तेरा साई तुझमें ज्यूं पुहुपन में बास।
कस्तूरी का मृग ज्यूं फिर–2 ढूंढे घास।।

तो प्यारे सत्संगी भाई बहनो। यह जीव उस खुशी की तलाश करता है और वह खुशी उसके अन्दर है। उसको ज्ञान नहीं। इसलिए उसका सौभाग्य हो, अति शुभ कर्म हो, तो किसी जीवित अनुभवी महापुरुष की संगत करता है। उसके सत्संग सुनता है, तब उसे होश आता है कि मैं कहां किस चक्कर में फंस गया और वह जागता है। तब वह सतगुरू के पास जाकर कहता है कि हे महाराज। आप मुझ पर दया करें, मुझे नाम की बख्शीश करें, जिससे मुझे सदा रहने वाली शान्ति मिल जाये। फिर महापुरूष कृपा करता है, उसको नाम दान देता है, सत्संग कराता है और सत्संग में उसका सुधार

होता जाता है। फिर वह सचेत होता है कि मैं सत् के साथ कैसे संग करूं? इस मन को वश में कैसे करूं? क्योंकि यह मन महा चंचल है, छलांगे लगाता है। जब उसे गुरू पर विश्वास हो जाता है कि वह मालिक है, वह मेरे अन्दर है और उसका दर्शन मेरे अन्दर ही होता है, तब वह अपने अन्दर की तरफ चलना शुरू कर देता है और अन्दर चलना वह है जो आप सुबह शाम समाधि लगाते हो, एकाग्र होते हो और अन्दर ठहरने की कोशिश करते हो। तो इस ख्याल से गुरू कबीर ने कहा है कि – ''कहूं उस देश की बतियां, जहां नहीं होत दिन रतियां'' यह उनका साधन था और वह उस मंजिल पर पहुंच गए। उसी पर वह कहता है कि मैं उस देश की बात कहता हूं, जहां पर दिन और रात नहीं होते। रात और दिन नीचे रह जाते हैं। सूरज के चक्कर से इस ब्रह्मण्ड के अन्दर रात और दिन का अनुभव होता है। लेकिन वह देश तो इस सूर्य से बहुत ऊंचा है। इस सूर्य के ऊंचा होने के कारण वहां पर रात और दिन का सवाल ही नहीं होता। क्योंकि योगी जो है, वह अपने अन्दर सिमट जाता है और वह ऐसी जगह पहुंच जाता है इस ब्रह्मण्ड से ऊपर, जहां से चांद सूरज नीचे रह जाते हैं।

शब्द में आगे कहा है ''नहीं वहां चन्द्र और तारा, नहीं उजियारा अंधियारा'' अर्थात् अन्दर ये जितने लोक, नजारे आते हैं, तारे नजर आते हैं यह प्रकाश का मण्डल है। इनके अन्दर अलग–2 तरह के जीव हैं। यह जीव नहीं , जो हम देख रहे हैं। वहां पर आत्मिक जीवन है। प्रकाश का जीवन है। ये ब्रह्मकुमारी बेटे बेटियां जो साधन करते हैं, उनका चांद–तारों तक का साधन है। क्योंकि अन्दर की तरफ प्रकाश तो है ही, वो चांद तारे नजर आते हैं। लेकिन कबीर जी तो आगे निकल गए। चांद तारों से ऊपर चले गए। आगे कहा है ––''नहीं वहां पवन और पानी, गए वो देश जिन जानी''। वहां पर पवन जो आक्सीजन है, नहीं है। न वहां पानी है। बहुत ऊंचा मण्डल है। जिन्होंने यह साधन किया, वहां का अनुभव

किया, उन्होंने यह बात जानी है। बाकी लोगों के वश की बात नहीं जानने की। यह अनुभव का विषय है। आगे कबीर साहब कहते हैं कि मेरा साधन वहां का है, जहां पर न धरती है न आकाश है। धरती और आकाश से ऊंची अवस्था है वह। ''नहीं वहां धरनी आकाशा, करे कोई सन्त वहां वासा''। सन्त किसे कहते हैं? साधन की एक अवस्था है जहां सम अवस्था आ जाती है और उस जगह से गिरावट नहीं होती। यहां कबीर दास जी ने कहा है –

साधू मिले तो एक फल, सन्त मिले फल चार।
सतगुरू मिले अनेक फल, कहें कबीर विचार।।

अर्थात् साधु जो अन्तर्मुखी साधना करने वाला है, चाहे वह साधन किसी मण्डल का हो। चाहे अपने इष्ट को सामने रखे, चाहे मन के मण्डल पर, चाहे त्रिकुटी हो, सहस्र कँवलदल हो, सुन्न महासुन्न हो। ये माथे के अन्दर एकाग्रता के ऊंचे दर्जे हैं तो जिस दर्जे पर वह साधु ठहरता है और अगर कोई उसकी संगत करता है तो वह जो इच्छा लेकर उसके पास जाता है, उससे आशीर्वाद लेता है, वह पूरा हो जाता है। क्योंकि उसकी इच्छा शक्ति बढ़ी हुई होती है और वह अन्तर्मुखी होता है। उस समय वह जो कुछ कह देगा, वह बात पूरी होगी। जैसे कहा है ––''साध वचन पलटे नहीं, चाहे पलट जाए ब्रह्माण्ड'' अर्थात् दुनियां बदल सकती है, लेकिन साधू ने जो वचन कह दिया, वह टलता नहीं। ''साधू बोले सहज स्वभाव, साधू का बोला वृथा न जाए''। जब वह समाधि में साधना से उठता है तो सहज में जो उसके मुंह से बात निकलती है, वह कुदरत की बात होती है और वह होकर रहती है। क्योंकि वह विचार करके नहीं कहता, किसी को खुश करने के लिए नहीं कहता। इसलिए साधुओं की बड़ी बड़ाई है। साधू का दर्जा क्या है? जहां पर आप साधना करते हैं, माथे के ऊपर, दोनों आंखों के बीच जहां मन को एकाग्र करते हैं, इसका नाम सहस्र कँवल दल है। यहां कई तरह के विचार आते हैं। यहां महात्माओं ने अलग–2 अनुभव किया है। राधास्वामी वाणी में उन्होंने

कहा है कि उस जगह पर पीले रंग का प्रकाश है और वहां घण्टा या शंख का शब्द बजता है। पहले दर्जे के साधू इसका अनुभव करते हैं।

दूसरा दर्जा माथे के बीच में त्रिकुटी बनती है। यहां साधक का जो भी इष्ट है, वह सामने आ जाता है। गुरू भक्तों को गुरू का इष्ट और देवी–देवता को मानने वालों को देवी–देवता का इष्ट सामने आ जाता है। यहां लाल रंग का प्रकाश है और ऊँ ऊँ की ध्वनि है या बादल की गड़गड़ाहट है या शिव का डमरू बजता है। यह स्थान ज्ञान का भण्डार है। यहां पर साधू जो भी इच्छा लेकर बैठता है, वह बहुत जल्दी पूरी होती है। क्योंकि वह ऊपर के लोकों से जुड़ा हेाता है। अगर वह वहां बैठा यह सोचता है कि मेरा डेरा बन जाए तो बहुत जल्दी उसे कोई न कोई पैसे वाला आदमी मिल जायेगा और वह डेरा बना देगा। अगर वह समझता है कि यहां पानी की कमी है तो वहां पर पानी का प्रबन्ध हो जायेगा। अगर वह संगत चाहता है तो बहुत जल्द उसकी इतनी संगत बन जायेगी कि उससे सँभाली नहीं जायेगी। और अगर वह ऊपर के लोकों का अनुभव चाहता है तो उसे वह प्राप्त हो जायेगा अर्थात् इस स्थान के साधू में जबरदस्त सिद्धि है। आर्य समाजियों ने इस ऊँ के स्थान का साधन किया है। कहने का भाव यह है कि यहां से शुरू होकर जहां पर माथे पर आदमी के बाल मिलते हैं वहां तक की जो साधना करते हैं,वे सबके सब साधू हैं। और वहां तक का साधू जो सहज में बोलता है, वह खाली नहीं जाता। उसकी इच्छा पूरी होती है।

आगे कहा है ––''सन्त मिले फल चार'' तो सन्त किसे कहते हैं? जहां साधन की सम अवस्था आ जाती है और जहां से गिरावट नहीं होती। यह साधना जहां पर बाल मिलते हैं उससे ऊपर जहां बच्चे का तालवा टिप–2 करता है, उस स्थान की एकाग्रता है। यानी वह अन्दर की तरफ सार शब्द को सुनता है, अन्दर की तरफ जो परमात्मा की धार है, उसके साथ लगा हुआ है। उसके हजारों नाम हैं। किसी ने उल्टा नाम कह दिया–

उल्टा नाम जपत जग जानी, वाल्मीक भए ब्रह्म समानी।
कहां लग कहूं नाम प्रभुताई, राम न सके नाम गुण गाई।।

किसी ने गायत्री कह दिया, किसी ने सावित्री कह दिया, किसी ने सत् शब्द कह दिया। महापुरुषों ने उस अनुभव के अलग–2 Technical word कहे हैं और वे वहीं पर ठहर गए। तो वहां ठहरने का नाम वह सन्तगति है। 'सन्त मिले फल चार' अर्थात् ऐसे साधन का आदमी, इस तरह का महात्मा किसी के भाग्य में आ जाए तो उसको चार फल मिलेंगे। इस ससांर के अन्दर चार फल विशेष हैं। पहला है 'अर्थ' जिसका मतलब है रूपया पैसा अर्थात् हमारे पास खाने पीने के लिए पर्याप्त पैसा व रहने के लिए मकान होना चाहिए। अर्थ के बाद आता है – काम। अर्थात् कोई कामना बाकी नहीं रहनी चाहिए। ब्याह–शादी की, सन्तान की, मकान की या दुकान की। भाव यह है कि मन की जो–2 कामना है, वह सन्त का संग करने से पूरी हो जायेगी। काम केवल स्त्री पुरूष के मेल का ही नाम नहीं है। क्योंकि ––

काम–2 सभी कहें, काम न चिन्हे कोए।
जेति मन की कल्पना, काम कहावे सोए।।

अर्थात् सन्त के साथ ताल्लुक रखने पर सेवक की कोई कामना बाकी नहीं रहनी चाहिए। इसके बाद है – धर्म। धर्म कहते हैं खुशी को, आनन्द को, बेफिकरी को। धर्म यह नहीं जो हम दान पुण्य करते हैं। यह तो मन का सुधार करने के लिए एक जरिया है। धर्म का अर्थ सतगुरू ही बताएगा कि तुम धर्मात्मा बनो, हमेशा खुश रहने की अवस्था प्राप्त करो। धर्म का अनुसरण करो, पाप को छोड़ो। पाप नाम दुःख का है। जब हम चिन्ता, फिकर करते हैं, डरते हैं तो हम लोग पापी हैं और जब हम कोई भरोसा लेकर बेफिकरी से खुश बैठे हैं तो धर्मात्मा हैं अर्थात् सन्त सेवक को ऐसी अवस्था बता देगा, ऐसा नाम दे देगा कि वह चलते–फिरते, खाते–पीते, मस्ती खुशी में रहेगा। जैसे– ''सदा दीवाली साध के, आठो पहर आनन्द''। तो ऐसी अवस्था सन्त के सेवक को प्राप्त होगी और अन्त में वह मोक्ष या

मुक्ति की अवस्था में आ जायेगा। किसी प्रकार के बन्धन में नहीं रहेगा। बन्धन क्या है? इस जीव के मन पर बहुत तरह के संस्कार पड़े हुए हैं। संस्कार कैसे पड़ते हैं? जो बात हम गौर से देखते हैं, पढ़ते हैं या सुनते हैं तो वह संस्कार ग्रहण कर लेते हैं और वो संस्कार हमारे कर्म बन जाते हैं अर्थात् उसी तरह हम सोचते हैं और वैसा ही जीवन बन जाता है। तो सन्त का सेवक जो देखी सुनी बातें हैं, जो विचार हैं उन सबको स्वप्न समझता है सत् नहीं मानता। किसी ने कुछ कह दिया तो बुरा नहीं मानता। साधन के अन्दर कोई नजारा देखता है तो उसको सत् न मानकर यह समझता है कि यह मेरे मन पर पहले के पड़े हुए कोई संस्कार हैं। कोई दुःख आता है या कोई रोग लग जाता है तो दुःखी नहीं होता और कहता है कि मेरा कोई अशुभ कर्म है जो मेरे सामने आया है और उसे राजी–2 भोग लेता है। सन्तगति में इसको आखिरी अवस्था या मोक्ष कहा है। मोक्ष का अर्थ है छुटकारा अर्थात् सब प्रकार के संस्कारों को सत् न मानकर, अन्दर जो राम नाम की धार हो रही है, उसको सत् मानना। वह राम नाम की धार क्या है? जब सुरत इन संस्कारों या संकल्प–विकल्प को छोड़कर आगे निकल जाती है तो ध्यान बन जाता है। यहां पर जबरदस्त प्रकाश है। जो इस प्रकाश में रहता है, वह आत्मिक अनुभूति है। इससे आगे नाम है, जिसे सार शब्द कहा है। वह अन्दर गूंज रहा है। मेरी अवस्था उस राम नाम की है। क्योंकि मैं प्रकाश का अनुभव नहीं करता, आगे चला गया हूं। केवल उस नाम की एक ही अवस्था रहती है। तो सन्त की यह महिमा है कि ''सन्त मिले फल चार''।

अगर कोई योगी अपने अन्दर साधना करता है और उसके अन्दर नजारे आते हैं तो वह आत्मपद की अवस्था है। वह उसके अन्दर का प्रकाश है और मन के नजारे बनाता है अर्थात् इस स्थान का योगी मन और माया की मिलौनी है। मन और ऊपर से आत्मा, इन दोनों के मिलने से वह नजारे बनते हैं और भासते हैं। कुछ योगी

लोग इन नजारों में फंस जाते हैं। लोक लोकान्तर देखते हैं और तरह–2 का आनन्द लेते हैं। जो साधु इन नजारों में फंस जाते हैं, वे आगे नहीं जा सकते। सन्त इन नजारों में नहीं रहता। उसकी सुरत अन्दर की धार के साथ लगी रहती है जिसकी व्याख्या नहीं की जा सकती। यह मन बुद्धि से ऊपर की बात है। मुझे 40-50 वर्ष से इसकी अनुभूति है। चलते–फिरते, खाते–पीते उसके साथ नैट (जुड़ा) रहता हूं। जैसे आपके पास कोई रिसिवर सैट है, रेडियो सैट है और आप उसे हाथ में लेकर जंगल में जाते हो तो वहां पर भी रिसिवर आते रहेंगे और आप घर में बैठे हो तो वहां पर भी आते रहेंगे। इसी तरह से जिसने अपने आपको Net कर लिया है, उस मालिक के साथ मिला दिया है तो वह जहां जाता है सहज में उसे अन्दर उस मालिक की अनुभूति होती रहती है। यह सहज मार्ग है। मुझे यह सहज का अनुभव पहले दिन से प्राप्त है। मैं कोई बहुत बड़ा महात्मा नहीं हूं और न ही मुझे कोई जानता है। गुरू आज्ञा से सत्संग करा देता हूं। मैं जहां भी जाता हूं, दूसरे गुरूओं के शिष्य मेरे पास आते हैं, प्रसाद ले जाते हैं और उनका काम हो जाता है। कोई कहता है आपके प्रसाद से मुझे बच्चा हो गया, कोई कहता है मुझे नौकरी मिल गई, कोई कहता है मेरा रोग दूर हो गया और इसी तरह कई प्रकार की बातें बताते हैं। तो यह क्या भेद है? मेरे में तो कोई शक्ति है नहीं। अगर मेरे में यह शक्ति होती तो मैं भी बीमार हूं, मैं भी ठीक हो जाता। यह तो उन लोगों का विश्वास है और वह विश्वास फलता–फूलता है और सेहरा मुझे मिल जाता है यानी अहमद की टोपी मोहम्मद के सिर। तो यहां पर गुरू कबीर जी के अनुसार संत की सम अवस्था बताई है। उसका गुण है कि वह किसी के मरने पर रोता नहीं, पैदा होने पर नाचता नहीं, लाभ होने पर खुशी नहीं मनाता और हानि होने पर दुःखी नहीं होता। तो ऐसा महापुरूष अगर किसी को मिल जाये और उसके साथ सम्पर्क हो जाये तो मनुष्य के चारों पुरुषार्थ पूर्ण हो जाते हैं। क्या यह बात होती है या मैं कथा दोहरा

रहा हूं? हां, मेरे साथ ऐसा हुआ है। मेरे चारों पुरुषार्थ पूरे हो गए। मुझे अर्थ का अभाव नहीं रहा। गुरू महाराज जी ने मुझसे नौकरी करायी और अब मुझे छः सात हजार रुपये मिलते हैं, जिससे मेरा गुजारा चलता है। खाने–पीने की कोई कमी नहीं, रहने के लिए छोटा सा मकान है। यानी मैं सन्तुष्ट हूं जैसे कहा गया है –''गोधन गज धन वाजि धन और रत्न धन खान, जब आवे सन्तोष धन सब धन धूलि समान''।

अब आगे है कामना। मेरी सब कामनाएं पूरी हो गई। मुझे जो–2 जरूरत थी, मन की जो–2 इच्छा थी, वह सब गुरू कृपा से सहज में पूरी हो गई। धर्म का अर्थ मैंने बताया था सदा खुश रहना। किसी हालत में न घबराना, चिन्ता–फिकर नहीं करना। तो गुरू कृपा से मैं अधिक समय तक इस अवस्था में रहता हूं, जिसको जीवन मुक्त अवस्था कहते हैं और जब कभी भूल जाता हूं तो मैं भी नीचे आ जाता हूं, लेकिन फिर संभल जाता हूं। इस का यह अर्थ नहीं है कि मेरे काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार सब दूर भाग गए हों, अपितु मुझे इनका अनुभव हो गया है, इसलिए वह मुझे सताते नहीं हैं। प0 फकीरचन्द जी महाराज की कृपा से मुझे यह अवस्था प्राप्त हुई।

आगे कहा है – ''सतगुरू मिले अनेक फल'' अर्थात् किसी को सतगुरू मिल गया तो मालिक के साथ मिल गया उसके फल का कोई अन्दाजा नहीं। तो सतगुरू का आखिरी क्या साधन है? वह चोटी तक का साधन करता है और उसमें गोता लगा जाता है, उसका नाम सतगुरू है। तो यह योग कहां से शुरू हुआ? दोनों आंखों के बीच जहां बेटियां बिन्दी लगाती हैं, इस जगह से शुरू हुआ और चोटी के ऊपर जाकर खत्म हुआ। यानी चोटी पर जाकर वह पूर्ण होता है। तो मैं उस चोटी पर तो पहुँचा नहीं हूँ, क्योंकि मेरा शरीर है और मैं सोचता हूं कि चोटी के दर्जे पर जब मैं गोता लगा जाऊंगा तो मेरा शरीर नहीं रहेगा। मेरे जितने प्रारब्ध कर्म हैं वह सब भोग लेने के बाद यह अवस्था आयेगी। उसके बाद यह शरीर नहीं रहेगा

अब मैं चोटी के नजदीक हूं और उस शब्द, नाद या धार का अनुभव करता रहता हूं।

शब्द में आगे कहा है – ''वहां गम काल की नाहीं, नहीं वहां धूप और छायी'' अर्थात् जो सन्त वहां साधन करता है, वहां पर काल की गति नहीं है। काल कहते हैं Creater को। जो यह प्रकाश है, यह काल है। लेकिन शरीर के अन्दर यह जो मन है, यह काल है। काल का अर्थ है गति, जो स्थिर नहीं रहता, बदलता रहता है। यह मन चंचल है, बदलता रहता है। तो कहा है –''वहां गम काल की नाहीं'' अर्थात् वहां पर मन तकलीफ नहीं देता है, नीचे रह जाता है। काल ऊपर दयाल में चला जाता है। दयाल क्या है? अन्दर जो नाद है, नाम है, वह दयाल है। और अन्दर जो विचार, नजारे, ऋद्धि–सिद्धि या प्रकाश आता है, वह काल की गति में आता है।

आगे कहा है – ''न योगी योग से पावे, न तपसी देह जल जावे''। अर्थात् यह साधन न तो योगी को योग से मिलता है और न तपस्वी को तप से मिलता है, जो देह जला देते हैं, एक पैर पर खड़े रहते हैं और अग्नियां जला–2 कर तपते हैं। तो कैसे प्राप्त होगा? ''सहज में ध्यान से आवे, सुरत का खेल जिसे आवे'' अर्थात् सहज में ध्यान से यह चीज प्राप्त हो जाती है। पर किसे, जो अपनी सुरत को अन्दर शब्द के साथ लगा देता है, इधर–उधर भटकने नहीं देता, उस को यह अवस्था प्राप्त होती है। जैसे जब आप नींद लेना चाहते हैं। कोई यत्न करते हो या बात करते हो तो नींद नहीं आयेगी। यह तो प्राकृतिक चीज है। सहज में जब सुरत हट जायेगी तो वह एकदम शान्ति में, बेहोशी में चला जायेगा। इसी तरह से यह साधन है। गुरू के द्वारा नाम लेकर, सत्संग सुनते हुए, अपना साधन अभ्यास करता रहे तो मौज से एक दिन सहज में यह अवस्था बन जायेगी। अर्थात् सहज में उसका साधन बन जायेगा।

शब्द में आगे कहा है –– ''सोहं नाद नहीं भाई, न बाजे शंख शहनाई'' अर्थात् किसी ने सोहं का साधन बता दिया तो किसी ने

शंख का। तो गुरू कबीर कहते हैं कि अगर तुम अन्तर में शंख, शहनाई ही सुनते रहे तो उसी में पागल हो जाओगे। वह वो नहीं है। तो वह क्या है –– ''निःअक्षर जाप वहां जापे, उठत धुन सुन्न से आपे'' अर्थात् 'निःअक्षर' जो कहने सुनने में नहीं आता, जुबान से बोला नहीं जा सकता, वह जाप उधर से जपा जा रहा है। उस अवस्था के अन्दर और कुछ नहीं, बस वह धुन अन्दर से आती रहती है। उस धुन के साथ यह सुरत लगी रहती है तो मस्ती खुशी बनी रहती है। यह ऊँचा साधन है। तो कबीर जी कहते हैं कि यह सुरत शब्द का साधन है। इसको आनन्द योग, सुरत योग, शब्द योग या नाम योग भी कहते हैं। तो महापुरुषों ने इसके बहुत से नाम रख दिए। हमारे हिन्दू शास्त्रा गीता में इसकी तरफ इशारा किया है कि गीता सुनने से मुक्ति हो जाती है। इसलिए जब आदमी मरता है शरीर छोड़ता है तो लोग गीता का पाठ कराते हैं, चाहे जिन्दगी में कभी उसने उस बात को समझा ही न हो। तो प्यारे सत्संगी भाई–बहनो। अगर यही गीता सुनने से मुक्ति होती तो हर घर–2 में गीता है और हर आदमी गीता का पाठ करता है, सबकी मुक्ति हो जाती। अरे नहीं। यह तो सतगुरू कृपा करके वह गीता सुनाएगा, वह गीता का ज्ञान देगा, जो आपके अन्दर हो रही है, उसी का नाम गीता है। वैसे गीता के 18 नाम रखे हुए हैं, जिसके सुनने से मुक्ति मिलती है। गंगा, जिसमें नहाने से मैल कटते हैं और आदमी पवित्रा हो जाता है, धर्मात्मा बन जाता है। ऐसे ख्याल दिये हैं इन लोगों ने। तो ये 18 नाम इस तरह हैं – गीता, गंगा, गायत्राी, सीता, सत्या, सरस्वती, ब्रह्म विद्या, ब्रह्म बली, त्रिासन्ध्या, मुक्तिगहनी, अर्धमात्राा, चिदानन्दा, बहुगुणी, भयनाशिनी आदि। तो यह वही भाव है जो बताया जा रहा है अर्थात् वह गीता जो अन्दर हो रही है, गाई जा रही है। उस गीता के साथ जो अपनी सुरत लगाता है, गीता का पाठ करता है, वह मुक्त हो जाता है। यानी उसके बन्धन कट जाते हैं। चिन्ता, भय, फिकर सब समाप्त हो जाते हैं। अर्थात् अन्दर वह नाम की गंगा

बह रही है, वह सत् की धारा आ रही है, उसके साथ सुरत लगाने से, नाम के साधन से मनुष्य के जन्म–जन्मान्तरों के कर्म–जाल भस्म हो जाते हैं। इसको ऐसे भी कहा है कि ज्ञान के द्वारा इस जीव के जन्म–जन्मान्तरों के संचित, प्रारब्ध व क्रियमान कर्म जल कर भस्म हो जाते हैं। जैसे आग की एक छोटी सी चिंगारी या माचिस की तिल्ली जलाकर किसी लकड़ी के ढेर को लगा दें तो वह थोड़ी देर में जलकर स्वाहा हो जाता है। इसी प्रकार अन्दर उस ज्ञान की अग्नि में उस गीता के पाठ में उस अन्दर वाली गंगा में जो अपनी सुरत लगाए रखता है, उसमें नहाता है तो उसके जन्म–जन्मान्तरों के जितने भी शुभ–अशुभ कर्म हैं, वो जलकर भस्म हो जाते हैं, ऐसे व्यक्ति को हिन्दू धर्म में पण्डित कहा है। गुरू नानक जी ने ग्रन्थ साहिब में कहा है –

पण्डित वो जो मन परबोधे,
राम नाम आत्म में शोधे,
हरि की कथा ह्रदय बसावे
सो पण्डित फिर जूनि न जावे।।
चारों वर्ण को दे उपदेश
ता पण्डित को सदा आदेश।।

फिर आगे एक जगह कहा है कि जिसने अपने जन्म–जन्मान्तरों के शुभ–अशुभ कर्मो को ज्ञान की अग्नि के द्वारा जलाकर भस्म कर दिया है, उसको पण्डित कहते हैं अर्थात् ऐसे किसी महापुरूष से नाम को सीखें, उसका पाठ अन्दर करें, तब उसको वह शान्ति प्राप्त होगी।

आगे कहा है – '' मन्दिर में दीप बहुभारी, नयन बिन भाई अधियारी'' अर्थात् संसार के अन्दर यह मनुष्य का मन ही मन्दिर है। इसके अन्दर बहुत बड़ा दीप है लेकिन उसकी आंख नहीं खुली। नयन नहीं है। अगर किसी के नयन न हो इस दुनियां में तो उसके लिए अंधेरा ही अंधेरा रहता है। इसी प्रकार जिसकी अन्तर की आंख नहीं खुली, जिसका ज्ञान चक्षु नहीं खुला, जिसने किसी पूरे गुरू की

संगत में बैठकर, उसके दर्शन, सेवा करके, इस ज्ञान को प्राप्त न करके इसका अनुभव नहीं किया, अन्दर की आंख नहीं खोली तो वह पूरी जिन्दगी इसी चक्र में रहेगा, उसे कभी शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती।

आगे कहा है –– ''कबीरा देश वह न्यारा लखे कोई नाम का प्यारा''। तो मेरे प्यारे सत्संगी भाई बहनो। यह वही नाम है, जिसकी मैं चर्चा कर रहा हूं और यह आपके अन्दर धुनकार दे रहा है, लेकिन बिना पूरे गुरू की संगत के उसका अनुभव नहीं होगा आज का सत्संग इतना ही काफी है। राधास्वामी।

(6)

स्थान : दांदू
दिनांक : 10.5.98

शब्द

मेरे पिया की अटरिया चढ़ कर मग्न भई।
मेरे दाता की अटरिया चढ़ कर मग्न भई।

.....

राधास्वामी । प्यारे सत्संगी भाई बहनो। आपने डा0 कमला से पहले मंगलाचरण का शब्द सुना और उसके बाद यह ऊपर का शब्द सुना। मंगलाचरण गुरू मूर्ति पर है। ''मंगलम् गुरूदेव मूर्ति, मंगलम् पद पंकजम्'' यानी हर चीज़ में हम मंगल चाहते हैं, सुख शान्ति चाहते हैं। यहां गुरू मूर्ति को , गुरू स्वरूप को, जीवित अनुभवी महापुरूष को ऐसा समझा है कि आप सब मंगल करने वाले हैं। उसके सामने हम प्रार्थना करते हैं कि आप अव्यक्त है, आपके बारे में कुछ कहा नहीं जा सकता। आप मनुष्य की बुद्धि से परे हैं। आप संसार के सब दुःखों को दूर करने वाले हैं। आगे कहा है –''मंगलम् धुर पर निवासी, मंगलम् सत् आसनम्'' अर्थात् हे गुरूदेव। आप उस धुर पद के निवासी हैं, जहां से यह मनुष्य आता है और

जाता है। यह सब खेल आपका है। और आप उस सत् आसन पर विराजमान हैं, जहां से यह सब सृष्टि, लोक–लोकान्तर, सूर्य, चांद, तारे सब आपकी ही कृपा से चल रहे हैं। ''मंगलम् निर्वाण सद्गति, मंगलम् जन रजनम्'' हे दाता। आप निर्वाण या मोक्ष देने वाले मंगल के कूप व सदगति देने वाले हैं। आपकी कृपा से ही सब गतिविधियां होती हैं। ''मंगलम् ज्ञान स्वरूपम्, मंगलम् आनन्द रूप'' हे गुरू महाराज। आपकी कृपा से ही ज्ञान मिलता है और आप आनन्द के सागर हैं। ''मंगलम् चैतन्य सदनम्, मंगलम् सत् सत्य भूप''। आप चेतन स्वरूप हैं, आपकी कृपा से ही सब चेतन हैं अर्थात् जब तक आपकी दृष्टि जीव के अन्दर है, तब तक जीव सब खेल खेलता है और जब आपकी दृष्टि हट जाती है तो जीव कुछ नहीं, उसका सब खेल समाप्त हो जाता है। आप सच्चे बादशाह हैं, बाकी सब झूठे बादशाह हैं जो आपने दुनियां का इन्तजाम करने के लिए बनाए हुए हैं। ''मंगलम् योगीन्द्र मायातीत, मंगलम् दायकम्''। आप योगीन्द्र अर्थात् हमेशा योग के अन्दर मस्त रहते हैं और मायातीत हैं अर्थात् माया के अन्दर बहते नहीं हैं। आप में काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार नहीं और आप माया से बाहर हैं। सब माया आपके ही बाहर – 2 चक्कर काटती है। आगे कहा है ––''मंगलम् संसार सारम्, अद्भुतम् मुनि नायकम्'' अर्थात् संसार का सार आप ही हैं। यह सब संसार आपसे ही चेतवान है और आप मुनियों के नायक हैं अर्थात् मुनियों के मुनि आप ही हैं। ''मंगलम् त्राय गुण रहित, अपरोक्ष परोक्ष निवासनम्''– हे दाता। आप सतोगुण, रजोगुण व तमोगुण इन तीनों गुणों से रहित हैं, इन गुणों से ऊपर हैं। आप परोक्ष व अपरोक्ष हैं अर्थात् आप साकार भी हैं व निराकार भी हैं। आगे कहा – ''मंगलम् त्रायकाल ज्ञाता, मंगलम् भव नाशनम्'' – हे गुरूदेव। आप तीनों कालों के जानने वाले हैं। अर्थात् वर्तमान, भूत व भविष्य सबके ज्ञाता हैं और संसार के अन्दर जो डर, भय, चिन्ता, फिकर हैं, सबका नाश करने वाले हैं। फिर कहा है – ''आदि कारण मूल कारण, मध्य आदि अनन्त

जो'' अर्थात् आप ही सबके आदि कारण हैं, मध्य कारण हैं और आप ही सबके अन्त हैं। आपके अतिरिक्त ओर कुछ नहीं है। ''मंगलम् करुणा सदन, शुभ तत्त्व परम जगत प्रभो'' हे प्रभु! आप दया के सागर हैं। आप में इतनी करुणा है कि जो भी जीव आपकी तरफ दृष्टि करके ध्यान करता है, आपसे कुछ मांगता है तो आप उसे तुरन्त दे देते हैं। यहां मुसलमानों के धर्म में लिखा हुआ है कि वह मालिक इतना रहमान है, इतना दयालु है कि आदमी जिन्दगी भर पाप करता रहे और अन्त समय में हाथ जोड़कर माफी मांगते हुए यह कह दे कि हे मालिक । मैंने जो गुनाह किए हैं, उन्हें तू बख्श दे तो वह दयालु उन सभी गुनाहों को बख्श देता है। वह संसार का सबसे बड़ा स्वामी है। आगे कहा है – ''आप प्रगटे इस जगत में, जीव काज सुधारने'' अर्थात् आप स्वयं ही जीवों का सुधार करने के लिए यहां मनुष्य रूप में आये हैं। और ''शब्द नाव बनाए सुन्दर,जीव दुखिन उबारने'' अर्थात् हे गुरूदेव। आपने एक शब्द की नाव बनाई है, जिसे नाम कहते हैं और दुखी जीवों को प्यार करके, अपने नजदीक लाकर के उनको नाम का सहारा दे दिया, जिससे उसके अन्दर अपनी सुरत को लगाकर के वो इस दुनिया से पार हो जायेंगे। ''प्राण तन मन कर्म वाणी, सबही अर्पण कीजिए'' अर्थात् हे दाता। मेरे प्राण, तन, मन और कर्म सब कुछ आपको समर्पित हैं। मैं आपकी शरण में आया हूं। मुझे अपना दास बना लीजिए। ''राधास्वामी राधास्वामी जप सदा, त्याग जग के मोह धन्धे, पाऊं भक्ति सम्पदा।''

तो इस मंगलाचरण में यह बताया है कि हम घरों में जो भी शुभ काम करते हैं, इस तरह से उस मालिक का स्वरूप बना कर उससे प्रार्थना करते हैं। गुरू भक्तों ने गुरू को इष्ट माना है, शिव भक्तों ने शिव को माना है तथा अन्य देवताओं के भक्तों ने उन देवताओं को अपना इष्ट माना है और उस इष्ट को ऐसा नहीं समझा कि वो मनुष्य है। वैसे मुझे इस मंगलाचरण का भाव बताने की जरूरत नहीं थी, क्योंकि मैं आपको सत्संग कराने जा रहा हूँ।

लेकिन यह भी सत्संग का एक भाग है और जब तक कोई गुरू के स्वरूप को इस तरह मानकर प्रार्थना नहीं करेगा तो आगे सत्संग हो ही नही सकता। सत् के साथ तो संग तभी होगा जब सामने इष्ट बना कर, उसका ध्यान कर हम उसको समर्पण कर देंगे और यह उसका मंगलाचरण है।

आगे शब्द में गाया है – ''मेरे पिया की अटरिया चढ़ कर मग्न भई'' तो इस शब्द में पिया क्या है? जैसे संसार में बहन–बेटियां ब्याह शादी करके आदमी को अपना पति मान लेती हैं, उसी प्रकार भक्त इष्ट बना कर गुरू को अपना मालिक मान लेता है और वह गुरू उसे आगे का गुरू या साधन बताता है। फिर वह भक्त साधन करके जब मन के ऊपर निकल जाता है तो वह पिया की अटरिया है। सबसे ऊँची अटारी। आगे कहा है – ''नाभ द्वादश त्रिकुटी गगना, इनका काम नहीं'' अर्थात् नाभि के अन्दर से जो साधन करते हो, नाभि चक्र, हृदय चक्र, कण्ठ चक्र इन सब का यहां कोई काम नहीं और न ही त्रिकुटी का कोई काम है त्रिकुटी वहां पर है, जहां पर इष्ट बन जाता है। लाल रंग का प्रकाश या गुरू मूर्ति आ जाती है और उसमें बड़ा आनन्द है, सिद्धि है, परन्तु यहां पर उसकी कोई आवश्यकता नहीं क्योंकि यह तो मन बनाता है। ''घट बावन को छेद सखी री, दसवां पार गई'' अर्थात् घट के अन्दर साधन करते हुए जब हम आंख बन्द करके बैठते हैं तो हमारे अन्दर तरह–2 के संकल्प – विकल्प उठते हैं व भूली हुई बातें याद आती रहती हैं, वह घट बावन है। उसमें तरह–2 के विचार हैं, वह पर्दा है, जो योगी को अपनी मंजिल पर नहीं जाने देता। जब साधन में मन के सब संकल्प–विकल्प खत्म हो जाते हैं और मन शान्त हो जाता है तो वहां पर दसवां द्वार आता है यह साधन की ऊंची स्थिति है अर्थात् जब सुरत संकल्प विकल्प से ऊपर, लोक–लोकान्तर से ऊपर चली जाती है तो वह पिया की अटरिया है और वहां पर जाकर योगी मस्त हो जाता है। तो यहां उसकी व्याख्या करी है – ''रंग न रूप रेख न जाके आवरण

वरण नहीं'' अर्थात् उस मालिक का न कोई रंग है, न कोई रूप है और न कोई रेखा है। लेकिन यह ऊँची अवस्था है। इससे पहले की अवस्था में ये सब है जो साधन में लगभग सबको प्राप्त होती हैं। राधास्वामी वाणी में इन नीचे के साधनों को सहस्रदल कंवल, त्रिकुटी, सुन्न, महासुन्न व भंवर गुफा कहा है। यहां तक के ये जितने भी साधन या अनुभव हैं, वे सब के सब ऋद्धि, सिद्धि व आनन्द के हैं लेकिन इनमें मन काम करता है और यह मन जहां काम करता है वहां पर वह उस असली मालिक की अटारी या मालिक का रूप नहीं है। वहां पर उस मालिक की कृपा है, लेकिन यह मंजिल नहीं है।

पहले दर्जे का भक्त अगर साधना करता है तो बस वह एक रूप को ही समझ लेता है और वह आगे नहीं जाना चाहता। वह समझता है कि यही मालिक है, लेकिन वह भ्रम में है। भाग्यवश उसे पूरा अनुभवी गुरू मिले तो वह उसे कृपा करके आगे निकाले। इसके लिए मैं अपने गांव के नजदीक मलसीसर गांव की एक मिसाल देता हूं। अपने गुरू प0 फकीरचंद जी महाराज से नाम लेने के बाद मैं वह गुरू ज्ञान देने के लिए गांव–2 जाता था। मेरे साथ मेरे ही गांव का एक भक्त था, जो इकतारा बजाता था। वह इकतारा बजाता, लोग इकट्ठे हो जाते, तब मैं लोगों को सत्संग कराता था। मैं सोचता था कि लोग कितने दुःखी हैं? किसी के पास खाने के लिये नहीं है और किसी के पास है तो वह खाता नहीं है। किसी के पास कुछ नहीं है और किसी के पास कुछ है तो वह उसका भोग नहीं करता है अर्थात् घरों में कलह परेशानी है और लोग मन के चक्करों में उलझे हुए हैं। अगर मैं यह गुरू महाराज जी का ज्ञान इन बाहर के लोगों को बांट दूं तो ये सुखी हो जायें। ऐसी मेरी भावना थी। इसलिए मैं दो महीने की छुट्टियों में घर–2 जाकर लोगों को ज्ञान देता था। जैसे कहा है – अधूरा भक्त सबको भक्ति सिखाता है। तो उस समय मेरा, जैसा अनुभव था, मैं उसको बांटता था। इसी तरह एक बार जब मैंने मलसीसर गांव में सत्संग कराया तो वहां की एक ब्राह्मणी

जो मन्दिर में पूजा–पाठ करती थी और जिसे मूर्ति प्रकट होती थी वह मेरे सत्संग से प्रभावित हुई और उसने मुझे किसी निश्चित तारीख पर सत्संग के लिए आमन्त्रित किया। मैं उस निश्चित समय पर जब उस मन्दिर में गया तो वह ब्राह्मणी मुझे देखकर बहुत प्रसन्न हुई और कहने लगी कि आप भोजन में क्या लेंगे? उसने बड़ा अच्छा भोजन बनाया हुआ था और साथ ही कुछ ब्राह्मण बुलाये हुए थे। वह उन ब्राह्मणों को भोजन कराती थी और वैदिक रीति से उन्हें वस्त्रा–दान करती थी। मैंने कहा – बहन जी। मैं तो भोजन करके आया हूँ क्योंकि उन दिनों मेरा नियम था कि मैं किसी दूसरे के घर का खाना नहीं खाता था। घर से खाना लेकर जाता था और उस भक्त को भी खिलाता था और साथ में उसे इकतारा बजाने की मंजूरी भी देता था। इसलिए मैंने कहा बहन जी। मैं ब्राह्मण नहीं हूं। यह दान–पुण्य मुझे शोभा नहीं देता। मैं सेना का ऑफिसर हूं और मेरे गुरू महाराज जी का आदेश कमा कर खाने का है। मैं आफिसर हूं। मुझे कोई धोती, अंगोछा, कुर्ते वगैरा की जरूरत नहीं है। आपकी बड़ी कृपा है और मैंने उसे प्यार से समझा बुझा कर कहा तो उसने हठ को छोड़ दिया। मैं उस ब्राह्मणी को सत्संग देना चाहता था, भेद बताना चाहता था, क्योंकि उसके अन्दर उसके इष्ट की मूर्ति बनती थी और मेरी यह हालत थी ''रंग न रूप रेख नहीं जाके, आवरण वरण नहीं'' अर्थात् मैं उस राम नाम का साधक था। तो मैंने कहा बहन जी। आपका यह मूर्ति रूप पूर्ण नहीं है। मैं आपको आगे पहुंचा देता हूं और मालिक का रूप दिखाता हूं। आप बैठो और वैसा साधन करो जैसे हर रोज करा करती हो। मैं भी बैठता हूँ। वह कहने लगी क्या मेरे को अपने इष्ट का रूप छोड़ना पड़ेगा? मैंने कहा – हां, आगे जाना पड़ेगा, इष्ट आगे है, यह नहीं है। यह तो आपका मन बनाता है। वह कहने लगी – महाराज। मैं यह काम नहीं करूंगी। यह रूप मैं किसी हालत में नहीं छोडूंगी। मैं और आगे जाना नहीं चाहती। इससे ज्यादा और क्या है? वह भगवान् की मूर्ति मेरे सामने आ जाती

है, बातें करती रहती है। मैंने उसको समझाने की कोशिश करी कि बहन जी। यह असली रूप नहीं है। यह इष्ट तो आपका मन बनाता है। कभी शरीर ठीक होगा, शुद्ध होगा और प्यार होगा तो बन जायेगा और कभी नहीं बनेगा और यहां पर आपको शान्ति नहीं मिल सकती। मैं योगी था। मैंने सोचा यह रूप में बंधी हुई है और पूरी उम्र इसी रूप को धारती रहेगी। सिद्धियां मिलती रहेंगी। कभी आनन्द, कभी दुःख, कभी सुख, लेकिन शान्ति नहीं मिलेगी। इसलिए उसको असली मालिक का रूप दर्शाऊं। लेकिन वह वहां से ऊपर जाना ही नहीं चाहती थी, क्योंकि जिसने जिस चीज़ को पकड़ लिया, जो जिस दर्जे पर बैठा है, वह अज्ञानी उसी को मालिक समझता है। इसलिए ऐसे लोगों पर सतगुरू ही कृपा करे। लेकिन वह मुझे सतगुरू तो मानती नहीं थी। वह तो मुझे साधारण भक्त या ब्राह्मण समझ कर भोजन कराना चाहती थी, वस्त्रा पहनाना चाहती थी अर्थात् यज्ञ कराना चाहती थी। कहने का भाव यह है कि हम लोग किसी न किसी रंग, रूप, रेखा में उलझे हुए हैं और वह हमसे छूटता नहीं है। अज्ञान में हैं। अगर पूरा सतगुरू नहीं मिला तो पूरी जिन्दगी इसी में रह जाता है। हां अगला जन्म उसका ठीक हो सकता है।

अभी आगे उसने कहा है कि –''पांच पच्चीस तीन से न्यारा, चेतन पुरूष सही।'' चेतन पुरूष क्या है ? वह नाम है, वह गीता का ज्ञान है, वह सार शब्द है, वह सत् शब्द है, जो आपके अन्दर गूंज रहा है, धुनकार दे रहा है। वह न तो काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार इन पांच चीजों में है, न पच्चीस प्रकार की प्रकृति में है और न वह सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण इन तीन गुणों में हैं। जैसे गीता में भी कहा है कि हे अर्जुन। तुम इन तीनों गुणों से रहित हो जा।

त्रौगुण्यविषया वेदा निस्त्रौगुण्यो भवार्जुन।

निर्द्वन्द्वो नित्यसत्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान्।। 2/45

आगे कहा है – ''अपरम्पार पार नहीं वाको, ना कोई जात कही'' अर्थात् कोई उस मालिक का पार नहीं पा सकता। जो–2

उसका पार पाने के लिए गया, उसने अपने आप को ही समाप्त कर दिया, उसमें ही मिल गया। क्या यह बात सही है? हां भई। मैं चालीस साल से उसके अन्दर रहता हूं, लेकिन मुझे तो उसका पार नहीं मिला। एक अवस्था है। उसके अन्दर गोता लगाता रहता हूँ। मस्ती, खुशी, बेफिकरी बनी रहती है। मैं तो उसे एक शान्ति का सागर समझता हूँ जहां शान्ति मिलती है, परम आनन्द मिलता है। उसकी कोई जात नहीं, कोई गुण नहीं, वह तो एक ऐसी चीज़ है, जो सब गुणों से अतीत है। वह तो मालिक की एक धार है, जो सभी जीवों के अन्दर है और यह सारा संसार उसी के सहारे पर चल रहा है। लेकिन न उसका कोई नाम है, न कोई रंग है, न कोई रूप है। अगर कोई उसके बारे में बताना चाहे तो वह बता नहीं सकता क्योंकि यह अनुभव का विषय है। और अगर कोई बताने की कोशिश करेगा तो वह अन्धों का हाथी है। जैसे जिसने उस हाथी के पैर को हाथ लगा दिया तो वह कहता है यह खम्भे जैसा है, जिसने सूंड पकड़ ली, वह कहता है यह थोथी चीज़ है, जिसने दांत पकड़ लिया वह कहता है यह तीखा है अर्थात् अन्धा, हाथी के जिस–2 अंग को पकड़ता है, उसकी वैसी ही व्याख्या करता है। कहने का भाव यह है कि कोई उसको जान नहीं सकता, व्याख्या कर नहीं सकता।

आगे कहा है ––''वेद शास्त्रा भागवत गीता, सोई फीकत भई'' अर्थात् वेदों के अन्दर उस मालिक के बारे में बहुत कुछ लिखा है और लोग उसका आनन्द लेते हैं। भागवत को सुनकर बड़ा आनन्द आता है। गीता को सुनकर बड़ा आनन्द आता है। लेकिन जब नाम प्रकट हो जाता है तो ये सब फीके पड़ जाते हैं। फिर उसका न वेद पढ़ने को जी करता है, न भागवत पढ़ने को और न गीता सुनने को, क्योंकि गीता को वह अन्दर सुनता है। जैसे मैं उस अवस्था में रहते हुए न तो कोई नजारे देखना चाहता हूं, न सांसारिक बातों में कोई रुचि रखता हूं और न ही गीता, रामायण, भागवत पढ़ना चाहता हूं। एक बार दिनोद वाले महाराज ताराचन्द जी ने मुझे बुलाकर कहा कि

कैप्टन साहब। आप सत्संग दें। मैंने कहा महाराज। आप बहुत बड़े सन्त हैं और मैं एक मामूली आदमी हूं। मैं क्या सत्संग दूंगा इस संगत को अर्थात् मैं वहां सत्संग देकर लोगों को अपने पीछे नहीं लगाना चाहता था और न ही कोई ऐसी सच्ची बात कहना चाहता था, जिससे लोगों का मन दुःखे और उनका विश्वास टूटे । मैं तो चुप रहना चाहता था। लेकिन महाराज ताराचन्द जी के बार–2 आग्रह करने पर मैंने कहा कि मैं कौन सा सत्संग दूं? यह सुनकर वह बोले कि क्या सत्संग दो होते हैं ? मैंने कहा, हां जी। एक तो यह कि कबीर ने क्या कहा? सूरदास ने क्या कहा? यानी महापुरूषों की, शास्त्राों की बात कहना। और दूसरा यह होता है इस गुरूभक्ति से, इस सत्संग से आपको क्या मिला? वह कहने लगे कि आप अपने वाली बात कर दें। मैंने कहा बहुत अच्छा और मैं वहां उनके पास बहुत ऊँचे आसन पर बैठ गया, जहां उनकी बहुत संगत बैठी थी। मैंने वहां पर क्या कहा? यह मुझे याद नहीं, लेकिन एक बात यह कही कि आप लोग जो यह शब्द वाणी गा रहे हैं, जिस राम नाम की बड़ाई कर रहे हैं और ग्रन्थ साहिब, भागवत्, गीता, कुरान शरीफ आदि ध र्मशास्त्राों में जिस नाम की महिमा गाई गई है, उस नाम को मैं चलते–फिरते, खाते–पीते, गाड़ी में, मोटर में, सोते जागते अनुभव करता रहता हूं। जैसे गुरू नानक जी ने ग्रन्थ साहिब में लिखा है कि ''नानक सदा रहे हर नाले'' अर्थात् वह मालिक हमेशा आपके साथ रहता है। तो यह मेरा अनुभव है, दावा कोई नहीं।

अब यह डा0 कमला आई हुई हैं, जो मुझे गुरू मानती हैं। मैं कोई गुरू तो हूं नहीं, साधारण आदमी हूं सेना का रिटायर्ड ऑफिसर हूँ और अपनी बुढ़ापे की जिन्दगी काट रहा हूं। इसने मेरा कोई सत्संग सुना होगा, इसका विश्वास बैठ गया और यह कहती है कि मुझे आप से ही ज्ञान प्राप्त हुआ है और आप ही मेरे गुरू हैं। यह मुझसे मिलती रहती हैं और ज्ञान लेती रहती हैं। यह योगिनी हैं शब्द और प्रकाश का साधन करती हैं।

सत्संगी भाई – बहनो। मैंने आज के सत्संग में पहले मंगलाचरण की व्याख्या की कि कोई रूप या मूर्ति बना कर, उसको कुल मालिक मान कर प्रार्थना की जाए कि –

आप प्रगटे इस जगत में, जीव काज सुधारने।
शब्द नाव बनाए सुन्दर, जीव दुखिन उबारने।।

अर्थात् हे दाता। आप ही इस संसार में जीवों का कल्याण करने के लिए प्रकट हुए हैं और उस राम नाम के शब्द की नांव बनाई है, जिसमें सुरत को स्थिर कर देने से जीव को शान्ति मिल जाती है और उसका कल्याण हो जाता है और वही वह पिया की अटरिया है, जहां मस्ती, आनन्द के सिवाय और कुछ नहीं है ऐसा मेरा अनुभव है, कोई दावा नहीं कि यही सही है। लेकिन मेरे सतगुरू महाराज हमेशा थापियां लगाते रहते थे और अब आजकल के महापुरुष भी थप्पी लगाते हैं कि आपने जो बात कही है, यह वही है। इसलिए मुझे हौंसला है। तो आज का सत्संग इतना बहुत है।

राधास्वामी।

(7)

स्थान : दांदू

दिनांक : 10.5.98

शब्द

मारा गुरू ने सेल, सुरत मेरी चढ़ी आसमान

.....

राधास्वामी। अभी आपने डा0 कमला से शब्द सुना। सत्संग इन्हीं शब्दों के आधार पर दिया जा रहा है। ध्यान से सुनिए ''मारा गुरू ने .....'' अर्थात् जब जीव प्रेम प्यार से, श्रद्धा भाव से या सत्संग की इच्छा से सत्संग सुनता है और गुरू जब सत्संग शुरू करता है तो वह उसका अनुभव का वचन होता है। और वह वचन अधिकारी के मन में ऐसा जम जाता है कि निकलता नहीं और उसे चेतनता आ

जाती है। यानी जीव सोया हुआ है। उसे यह ज्ञान नहीं कि मैं क्या हूँ? कहां से आया हूँ? और कहां जाऊंगा? वह इस लोक के मोह माया में फंसा हुआ है। माया कहते हैं मोह लेने को अर्थात् जो चीज़ मोह लेती है, उसका नाम माया है। किसी ने स्त्रियों के रूप में माया समझा। लेकिन यह पुरूषों का पक्षपात था, क्योंकि अधिक पुरूष हुए हैं। उन्होंने बहन बेटियों के बारे में विपक्ष की बात कही है कि स्त्री माया है। लेकिन मेरे अनुभव में यह बात नहीं आई। अगर स्त्री माया है तो पुरूष भी माया है। तो माया कहते हैं मोहने को, जो मन को खिंचती है। किसी को बच्चे से बहुत प्यार है तो वह उसके लिए माया है। किसी को अपने पति से बहुत प्यार है और वह अपने निज घर जाना चाहती है तो पति का रूप उसको खिंचता रहता है। किसी को मित्रा से, किसी को रिश्तेदार से, किसी को धन से, किसी को मकान से जो विशेष प्यार है तो वह सुरत को बार–2 अपनी तरफ खिंचता रहता है। इसका नाम माया है। यह सब लोक माया का है, काल माया का। तो गुरू कृपा करके माया जाल में उलझे हुए जीव के माया जाल को काट देता है। वह अपने अनुभव से उसे समझा देता है कि बेटा–बेटी। तुम किस भ्रम में फंसे हुए हो? तुम्हारा कोई साथी नहीं है। यानी किसी तरह उसको वैराग दिला देता है कि यहां रहना नहीं, चले जाना है। जैसे किसी ने कहा है ––

चलना है रहना नहीं सन्तों, छोड़ दुनियां का माया मोह।
कर बन्दा भजन बन्दगी, हर का भजन करे सो हर का हो।।

अर्थात् इन्सान को यहां से चले जाना है, रहना नहीं है। इसलिए हे मानव। तू मालिक का भजन–स्मरण कर, नाम ले और अपना काम बना ले। तो गुरू ऐसा सेल मारता है। कहां मारता है? उस अधिकारी जीव पर जो गुरू के पास जाता है, गुरू दर्शन करता है और गुरू उस नाम की धार में जो सत्संग की धारा बहाता है, जो उसके अन्दर बह रही है और जो वचन वह अपनी जुबान से कहता है तो अधिकारी सत्संगी भाई–बहन, जो उनके चेहरे को टकटकी लगाकर देखता है,

उनके वचन सुनता है तो वह वचन उसके मन पर ऐसी जबरदस्त चोट लगाता है कि उसका तुरन्त इस माया से मन हट जाता है और उसे होश आ जाता है। और वह सोचता है कि गुरू महाराज जी ठीक कह रहे हैं। चले जाना है, रहना तो है नहीं। तो जहां जाना है, उसके लिए कुछ सामान इकट्ठा करें। जैसे हम इस लोक में रहते हुए जिन्दगी गुजारने के लिए अपने–2 घरों में सामान इकट्ठा करते हैं, नई–2 चीजें लाकर रखते हैं, कमरों को सजाते हैं और जब हम यहां से चले जाते हैं तो यह सब सामान यही रह जाता है। तो अधिकारी जीव को यह होश आ जाता है कि मेरे साथ जाने वाली चीज़ क्या है? जिनके लिए जो कुछ मैं कमा रहा हूं, इकट्ठा कर रहा हूं, वह सब तो यहीं पर रह जायेगा और उसे वैराग हो जाता है तथा उसकी समाधि लग जाती है। इसका नाम गुरू के द्वारा सेल मारना है।

आगे कहा है ––**''ऐसा मारा सेल गुरू ने दिखे नहीं निशान''** अर्थात् वैसे कोई हथियार शरीर पर कहीं लगता है तो उसका निशान रह जाता है, परन्तु गुरू जो सेल मारता है तो उसका कोई निशान नहीं दिखता। गुरू का शब्दबाण जीव के मन पर सीधा असर करता है और उसका मोह–जाल छूट जाता है। आगे कहा है –– **''मेरे जख्म को मैं ही जानू, नहीं और को ज्ञान''** यहां पर भक्त कहता है कि गुरू ने जो मुझे सेल मारा है, वचन की तान मारी है,मुझे जो जख्म हुआ है, उस भाव को मैं ही जानता हूं कि मेरे अन्दर क्या प्रकट हो गया है? और लोग इसे नहीं जान सकते हैं। अर्थात् उसे अचानक वैराग हो जाता है और उसके चुप या शान्त रहने पर लोग उसे गलत समझ लेते हैं। फिर कहा है –– **''जितनी बेड़ी मोह माया की, काटी गुरू आसान''** बेड़ी का अर्थ है बन्धन। जैसे जो कैदी होते हैं, उनके पैरों में बेड़ी डालते हैं। तो इस जीव के इतने बन्धन हैं, जिसका कोई हिसाब नहीं। राधास्वामी वाणी में इन बन्धनों की चर्चा की है –

पहला बन्धन पड़ा देह का, दूसरा त्रिाया जान।

तीसरा बन्धन पुत्रा विचारा, चौथा नाती जान।।
नाती के फिर नाती होए, फिर कहो कौन ठिकान।
धन सम्पत्ति और हाट हवेली, ये बन्धन क्या करू बखान।
जीते जी तुम छूटो नाहि, फिर जमपुर का भोगो डान।

भाव यह है कि यह पवित्रा जीवात्मा पहले तो देह के बन्धन में बंधी हुई है। फिर ब्याह–शादी का बन्धन है। स्त्राी है तो उसको पति का बन्धन और पति है तो पत्नी का बन्धन। फिर गृहस्थ में बाल–बच्चों का बन्धन। अर्थात् मेरा बेटा, मेरी बेटी। फिर कोई नाती हो जाता है, पोता हो जाता है, उनका बन्धन। इस तरह सम्बन्धों के अनेक बन्धान हो जाते हैं। इसके बाद हाट हवेली हो जाती है। मेरा घर, मेरी हाट, मेरी हवेली, मेरा खेत। फिर जाति का बन्धन देखो – हम राजपूत हैं, हम ब्राह्मण हैं। तो क्या जीव को एक बन्धन है? वह ऐसे बन्धनों से जकड़ा हुआ है कि उसका निकलना बहुत मुश्किल है। तो गुरू कृपा करके ज्ञान से उसके बन्धन कटवा देता है। वह ज्ञान देता है कि बेटे। तेरा यहां कौन है? जो ये बेटा, बेटी, पति–पत्नी, रिश्तेदार तेरे पीछे धूम रहे हैं, ये सब मतलब के यार हैं। जब तक मतलब होगा, तेरे पीछे घूमते रहेंगे। मतलब निकल जाने पर कोई किसी को नहीं पूछता। जैसे आजकल आप घरों की हालत देख ही रहे हैं। तो गुरू कहता है कि आप तो बस अपना कर्त्तव्य करो। यदि आप बाप हैं तो अच्छे बाप बन जाओ, पति हो तो अच्छे पति बन जाओ और पत्नी हो तो अच्छी पत्नी बन जाओ। यानी आप अपना पार्ट अच्छा अदा करो। जैसे गीता में भगवान् कृष्ण ने अर्जुन से कहा कि तू क्षत्रिाय है तेरा काम युद्ध करना है, युद्ध से भागना नहीं। और इस तरह ज्ञान से उसका परिवार का, भाई भतीजों का मोह ढीला कर दिया। और यही काम गुरू करता है।

आगे कहा है ––**''अन्तर के मे लौ मेरी लागी, सुन बंसरी की तान''** अर्थात् भक्त के जब बन्धन कट जाते हैं तो उसे जो संकल्प विकल्प आते हैं, उनको वह सत्य नहीं समझता। उसकी लौ

अन्तर की तरफ लग जाती है। यहां पर अन्तर की तरफ एक स्थान में बंसरी का शब्द है। इसलिए कहा है 'सुन बंसरी की तान'। यहां किसीको बांसुरी सुनती है, किसी को अन्दर घण्टा सुनता है, किसी को सारंगी सुनती है। अर्थात् अलग–2 स्थानों के अलग–2 शब्द हैं। जब अन्दर की तरफ लौ लग जाती है, मन टिक जाता है, एकाग्रता आ जाती है तो उसके बन्धन कट जाते हैं।

आगे कहा है –– **''ऐसी हुई रोशनी अन्तर में खिले करोड़ो भान''** यहां आत्मपद की तरफ इशारा किया है। अर्थात् अन्दर की तरफ एक साथ इतना ज्यादा प्रकाश है जैसे करोड़ों सूर्य उगते हैं। ऐसे प्रकाश का अन्दर की तरफ भक्त को अनुभव होता है। कब होता है? जब गुरू कृपा करके पहले उसे अपने वचन से सचेत कर दें और दुनियां के मोह माया से उसका ध्यान हटा दें और कहे कि भाई। तेरा समय थोड़ा है। तू अपना काम कर। तेरे साथ कोई जाने वाला नहीं है। पर तू इनसे भाग मत। पत्नी को, बच्चों को छोड़कर मत भागना। क्योंकि भागना वैराग नहीं है। आज के सन्तों ने भी यही कहा है कि भाई पिछले जन्म के हमारे जो कर्म हैं, जिनके साथ हमारा सम्बन्ध है, उनसे भागो नहीं, अपने कर्त्तव्य का पालन करो और अपना कर्जा खुशी–2 चुका दो। इस ज्ञान से जब जीव का मोह माया का भ्रम दूर हो जाता है तो गुरू उसे अन्दर का साधन बता देता है, तब जीव की प्रकृति के अनुसार अन्दर एकाग्रता बन जाती है। किसी को ऊँ की ध्वनि सुनेगी, किसी को बांसुरी की, किसी को बम्ब–2 भोले की तो किसी को सारंगी की। तब उसे इसके बारे में गुरू से confirm करना चाहिए,ताकि वह गुमराह न हो सके।

आगे कहा है – **''न्यारे–2 बाजे सुनके, हो गई खुशी महान''।** यानी अन्दर की तरफ आप जिस दर्जे का साधन करोगे, उसी के अनुसार आपको शब्द सुनाई देगा क्योंकि अन्दर तरह–2 के राग हो रहे हैं। सबको एक राग नहीं सुनेगा। उस राग के सुनने से सुरत इकट्ठी हो जायेगी और मस्ती खुशी मिलेगी। अब आगे भक्त कहता

है – **''जब लग जीऊं अमी रस पीऊं, हुआ मेरे को ज्ञान''** अर्थात् जब तक मेरा जीवन है, अमी रस पीता रहूं। गुरू ने अन्दर जो नाम दिया है, उसके साथ सुरत लगाने का नाम अमी रस है। वह अमरापुरी जाने वाला है। उसका साधन करने वाला चौरासी की योनि में नहीं जाता, अधमगति को प्राप्त नहीं होता। ऊंची गति को प्राप्त होता है। इसलिए वह कहता है कि जब तक मैं जीता रहूं, तब तक उस नाम के साथ सुरत लगाता रहूं, आनन्द लेता रहूं और मस्ती खुशी लेता रहूं। यह मुझे ज्ञान हो गया है। फिर कहा है ––''ऐसा सेल मारा म्हारे सतगुरू भूलूं नहीं एहसान अर्थात् सतगुरू ने ऐसा ज्ञान दिया है, जिसका एहसान मैं जिन्दगी भर नहीं भूल सकता। क्योंकि ऐसी विचित्रा, ऐसी अमूल्य वस्तु जिसका कोई मोल नहीं हो सकता, जो कीमत से खरीदा नहीं जा सकता। अगर कीमत से खरीदा जाता तो करोड़पति लोग इसे पैसे से खरीद लेते, गरीबों के यह कहां हाथ आता? यह वस्तु न कलकत्ते में मिलेगी, न विदेशों में मिलेगी। यह वस्तु तो अपने अन्दर ही है, जो सतगुरू कृपा करके दिखलाता है। गुरू कबीर ने इसके बारे में कहा है–

प्रेम न बाड़ी उपजे, प्रेम न हाट बिकाये।
राजा प्रजा जेहि रूचे, शीश दे ले जाये।।

यानी जिसे इसकी जरूरत हो, सिर नीचा करके, घमण्ड हटा कर, सतगुरू के चरणों में दण्डवत् प्रणाम करके उससे पूछ ले। शीश का अर्थ है, घमण्ड दूर करना। यह घमण्ड आदमी को आगे जाने नहीं देता। तो घमण्ड को दूर करने के लिए यह अवस्था है। सतगुरू ही कृपा करके, अपने वचन से इसे दूर कर सकता है। तो इस अनुभव के शब्द में मैंने बताया कि कैसे गुरू के सेल मारने से आनन्द की अवस्था प्राप्त हो जायेगी।

अब आगे डा0 कमला ने इसी के तहत दूसरे शब्द में कहा है कि–

बहा सत्संग का दरिया, नहा लो जिसका जी चाहे।
जिगर से दाग पातक के, छुड़ा लो जिसका जी चाहे।।

अर्थात् सत्संग का दरिया बह रहा है, जिसका जी चाहे स्नान कर लो। जैसे गर्मी के समय ठण्डे पानी से नहा कर शान्ति मिलती है, आनन्द आता है, ठण्डक पड़ जाती है और शरीर की सफाई हो जाती है। इसी तरह गुरू के सत्संग का दरिया बह रहा है, उनके मुखारविन्द से वह धुर की वाणी निकल रही है। जो जीव जाकर उसको सुनते हैं, उनको शान्ति व ठण्डक मिलती है। जिगर के दाग का मतलब यहां पर यह है कि हमारे मनों पर जो अच्छे–बुरे संस्कार पड़े होते हैं, जिनके अन्दर हमारा मन उलझा रहता है तो वह जिगर के ऊपर छाप पड़ जाती है। किसी ने कुछ कह दिया तो हम दुःखी होते हैं कि मेरे बेटे ने मुझे यह कह दिया, मेरे भाई ने मुझे यह कह दिया, मेरे दोस्त ने मुझे धोखा दे दिया। इस तरह हर आदमी चिन्ता, फिकर, डर, भय में रहता है, ये पातक के दाग हैं। पातक कहते हैं पाप को। पाप नाम दुःख का है, धर्म नाम सुख का है। तो आप गुरू की शरण में बैठो, उनके वचन सुनो। गुरू अपने वचन से कहते हैं कि बेटे तू किस विचार से दुःखी हो रहा है? जिन बेटे बेटी को तू अपना मानता है, वो तेरे नहीं हैं। यह तो कर्जा चुकाना है। कोई सुख देने आता है तो कोई दुःख देने आता है। यह बात सत् नहीं है। इस तरह गुरू महाराज ज्ञान से उसके दुःख को दूर कर देता है। इसी को कहा है कि पातक के दाग हटा लो।

आगे कहा है – ''भरे है रत्न बेकीमत बड़े आल्हा से आल्हा है'' अर्थात् इस मनुष्य के शरीर में, इसके मस्तिष्क में जहां बहन–बेटियां दोनो आंखों के ऊपर बिन्दी लगाती हैं, यहां से योग शुरू हो जाता है और अमूल्य रत्न मिलने लग जाते हैं। ये रत्न किसे मिलते हैं? जो गुरू के बताए हुए तरीके से अपने आपको नाम के सहारे साधन से जोड़ता है, शरीर को भूल जाता है तो तुरन्त उसके सामने उसके इष्ट गुरू का स्वरूप आ जाता है और जब इष्ट की मूर्ति सामने आ जाती है तो उसकी इच्छा बहुत ही जल्दी सहज में पूरी हो जाती है तो साधू महात्मा यही कहते हैं कि जब साधन करते–2 वे अपने माथे के बीच

एकाग्र होकर त्रिकुटी बना लेते हैं तो उस समय उनके जो विचार होते हैं, वो पूरे हो जाते हैं और वहां से उठकर वो जो प्रसाद देते हैं, उसका जीव पर प्रभाव होता है, जिसे सिद्धि कहते हैं। तो ये रत्न कैसे प्राप्त होंगे? ''जरा लगा गोता इसमें, उठा लो जिसका जी चाहे'' अर्थात् जिसका ध्यान लग जाए, मन एकाग्र हो जाए, समाधि लग जाए तो यह गोता लगाना है और वह वस्तु उसे सहज में प्राप्त हो जायेगी। और इसके अन्दर एक चीज नहीं है कि आप एक चीज ले लो, आपको रामनाम मिल जायेगा, नहीं। उस जगह गोता लगाकर आप इच्छा रखते हो कि मेरी दुनियां बने तो दुनियां बन जायेगी, मकान की इच्छा रखते हो तो मकान बन जायेगा और अगर आपको कोई रोग है तो वह सहज में कट जायेगा। क्योंकि यह सिद्धि का स्थान है।

लेकिन एक बात यहां पर यह है कि जीव जो बात पकड़ लेता है उसे छोड़ता नहीं। किसी की सुनने के लिए तैयार नहीं। क्योंकि उसके अशुभ कर्म पड़े हुए हैं। गुरू का सेल उसी पर लगता है, जो श्रद्धा से, प्यार से गुरू की बात समझ कर लाभ उठाता है। एक बार की बात है कि मैं अपने गांव के एक बड़े ऑफिसर के घर चला गया। डा0 कमला मेरे साथ थी। वहां जाकर जब हम बैठे तो धर्म कर्म की बात शुरू हो गई और जब मैंने उसका हाल पूछा तो कहने लगा कि मैं तो साधन में खो जाता हूं। तीन–2 घण्टे साधन करता हूं। बड़ी मस्ती खुशी मिलती है। मैंने कहा बहुत अच्छा। फिर मैंने उससे पूछा, अच्छा। यह बताओ कि आप साधन के समय क्या देखते हैं? क्या सुनते हैं अर्थात् उस समय आपकी क्या स्थिति होती है? उसने कहा कि इन सबकी क्या जरूरत है? बस, खुशी व शान्ति मिल जाती है। मैंने कहा कि शान्ति तो गहरी नींद में भी मिल जाती है। यह तो प्राकृतिक क्रिया है कि जब आदमी जागता है, तो वह विचारों से बैचेन रहता है, स्वप्न में भी दुःखी सुखी रहता है। लेकिन जब वह गहरी नींद में चला जाता है तो उसको शान्ति आ जाती है।

क्योंकि मैं भेद जानता था। मैं बड़े–2 योगियों को देखता रहता हूं कि वो कहां बैठे हैं? क्या साधन करते हैं? वह आदमी मुझे इस विषय में जानता नहीं था। इसलिए उसने अपना ज्ञान मुझे देना शुरू कर दिया। तो ये बातें मैं जगह–2 देखता रहता हूं। अतः यह गोता लगाना सबके वश की बात नहीं है। यह गोता तो वही लगा सकेगा जो श्रद्धा से गुरू के पास जायेगा, उसे देखेगा और उसके वचन सुनेगा, जैसे चुम्बक कच्चे लोहे को अपनी तरफ खिंच लेता है, पत्थर को नहीं। यही बात सन्तों की है। अनुभवी पुरूषों के वचन व सत्संग का लाभ वही लोग उठा सकते हैं, जो कच्चे लोहे जैसे श्रद्धालु व विश्वासी हैं।

शब्द में आगे कहा है –

ऋषि मुनियों ने भी गाई बहुत कुछ इसकी जो महिमा।
लिखा वो पोथियों में है, पढ़ा लो जिसका जी चाहे।।

अर्थात् यह ज्ञान, जिसकी चर्चा कर रहे हैं कि सत्संग का दरिया बह रहा है और यह नाम, जिसके अन्दर गोता लगाते हैं, इसकी ऋषि–मुनियों ने बहुत महिमा गाई है। रामायण, महाभारत, गीता, ग्रन्थ–साहिब, बाईबल आदि धार्मिक ग्रन्थों में इस परमात्मा के नाम की बहुत बड़ाई की गई है। और महापुरूषों के इन धार्मिक ग्रन्थों में जो नाम की महिमा गाई गई है, वही महिमा जीव के अन्दर है। और वह जीव इस महिमा को पकड़ सकता है, जो किसी महापुरूष के बहते हुए सत्संग के दरिये पर जाता है और श्रद्धा से उसके वचन सुनता है। उसके भाग्य में यह चीज आ जाती है और उसके पाप कर्म या दुःख दूर हो जाते हैं। नहीं तो इस दुनियां में कोई दुःखों से खाली नहीं है। सभी काल और माया के चक्कर में घूम रहे हैं।

आगे कहा है –

दुःखों से मुक्ति चाहता है, तो ए धर्मदास सतगुरू की।
शरण आ, काल से पण्डा छुड़ा लो जिसका जी चाहे।।

अर्थात् अगर तू सब प्रकार के दुःखों से मुक्ति चाहता है तो सतगुरू

की शरण में आ जा और वह आपके अन्दर है। अर्थात् वो जो अन्दर की तरफ शरण सतगुरू है, वो अन्दर का राम नाम है। अन्दर का शब्द है, सार शब्द है, सत् शब्द है। लेकिन हम महापुरूष इसे खोल कर नहीं बताते। तो कबीर जी कहते हैं कि काल से फन्दा छुड़ा लो। काल कहते हैं चिन्ता, फिकर, डर, भय जो मन में उत्पन्न होते हैं, उनसे पीछा छुटा लो। तो वह नाम क्या है? मेरे अनुभव के अनुसार सतगुरू वो अन्दर का नाम है। वैसे ये मेरी व्याख्या नहीं है। यही बात गुरू कबीर ने कही है –

गुरू शब्द को कीजिए, बहुतक गुरू लबार।
अपने–2 स्वाद को, ठौर–2 बट मार।।

उन्होंने कहा कि अगर तुम निज घर जाना चाहते हो तो तुम्हारे अन्दर जो शब्द है, जो राम–नाम है, तुम उसका सहारा लो। इससे तुम्हारा काम हो जायेगा। और बाकी गुरूओं को उन्होंने लबार बताया है लबार का अर्थ है ठगी। अर्थात् बाकी सभी गुरू अपने–2 स्वार्थ के लिए ठगी लगाए बैठे हैं। कोई चेले बनाना चाहता है तो कोई डेरा। आजकल जगह–2 आश्रम, डेरे बने हुए हैं। और आप सभी यह बात जानते हैं कि आश्रम बिना रूपये के नहीं चलते। और रूपया सीधी सच्ची बात कहने से नहीं आता। अगर सीधी सच्ची यह बात कह दी जाये कि ''अरे भाई। कहां भटका खाते फिर रहे हो? तेरे अन्दर जो नाम जो शब्द गूंज रहा है, वह है सतगुरू। तू उसका सुबह–शाम, चलते–फिरते साधन किया कर। कोई शंका हो तो मुझसे पूछ जाया कर तो डेरों में भीड़ बहुत कम रह जायेगी। इसका यह अर्थ नहीं कि मैं आश्रमों की बुराई कर रहा हूं। मैं तो कहता हूं कि धन्य हैं वो महापुरूष जो सत्संगियों के भले के लिए, उनके रहने के लिए, उनके भोजन की व्यवस्था के लिए धन इकट्ठा करके आश्रम में लगा देते हैं। उन्हें कोई दोष नहीं है। जैसे किसी ने साबुन लगाया और साबुन लगा कर धो दिया तो साबुन भी धुल गई और मैल भी धुल गया। तो इसी तरह ये उन्हीं के पैसों से उन्हीं का कल्याण कर देते

हैं। लेकिन जो गुरू कारों में, हवाई जहाजों में लोगों के पैसों का दुरूपयोग करते हैं, राजाओं की तरह शान–शौकत से रहते हैं, उनके लिए यह 'लबार' शब्द कहा गया है कि वह ठग हैं।

तो आज के सत्संग में मैंने अपने अनुभव से बताया कि सतगुरू अन्दर की तरफ से शब्द है और अगर कोई दुःखी जीव मुक्ति चाहता है तो वह किसी जीवित, अनुभवी, पूर्ण महापुरूष की संगत करे, उसका दर्शन करे, सेवा करे तो उसके अन्दर सच्चा प्यार आ जायेगा और वह इसका अधिकारी बन जायेगा और जब उसके अन्दर नाम प्रकट हो जायेगा तो वह उस नाम की कमाई करता रहेगा। तब वह महापुरूष उसे कह देगा कि भाई। अब इस काम के लिए आने की जरूरत नहीं है। अगर कोई शंका हो तो मुझसे पूछ लेना। यही आज के शब्द का भाव है।

सबको राधास्वामी।

(8)

स्थान : दांदू
दिनांक : 7.5.98

शब्द : सतगुरू के दर्शन करने हम आए अब दूर से।

.....

राधास्वामी। अभी आपने डा0 कमला से यह शब्द सुना। यह बात इसके साथ भी जचती है, क्योंकि यह दूर से आई है, फतेहाबाद से। हम लोग तो यहीं से आकर बैठ गए नजदीक से। तो जो आदमी त्याग, तप नहीं करता, उसको सुख शान्ति वाली अवस्था प्राप्त नहीं होती। हर चीज़ के लिए कीमत देनी पड़ती है। जितनी हम महंगी कीमत देते हैं, उतनी ही वस्तु अच्छी मिल जाती है। यही बात इस योग के साथ, भक्ति भाव के साथ है। जो भाई–बहन इसके लिए मेहनत करते हैं, दान पुण्य करते हैं, सेवा करते हैं, वचन सुनते हैं, घर के काम छोड़कर त्याग तप करते हैं तो उनको यह अवस्था प्राप्त

होती है। यह आत्म ज्ञान सबसे बड़ा ज्ञान है। आदमी ने आकाश का, पाताल का ज्ञान तो प्राप्त कर लिया, पर वह अपने बारे में नहीं जान सका कि मैं क्या हूँ? कहां से आया हूँ? मुझे सुखशान्ति कैसे प्राप्त हो? तो इसने यह शब्द गाया कि हम सतगुरू के दर्शन करने दूर से आए हैं। ''दीन अनाथ भिखारी दर के, हुए मंगते हम धुर घर के, वही मिलावे मूर (मूल) से'' अर्थात् जब तक भक्त अपने आपको खाली करके, कोई इच्छा लेकर गुरू के दरबार में नहीं जाता उसको वह चीज़ प्राप्त नहीं हो सकती। लेकिन यह भाव विशेष–2 के लिए है। हम सर्व साधारण तो कोई न कोई स्वार्थ लेकर वहां जाते हैं। उस मालिक से मिलने की इच्छा लेकर जाने वाले तो बहुत कम हैं। अब आप स्वयं ही सोचो कि क्या आप उससे मिलने के लिए,उसके दर्शन करने के लिए आए हो? अगर आप सच्चे मन से उससे मिलने आए हो तो वह अवश्य मिल जायेगा। क्योंकि मालिक आपके साथ रहता है। अगर आप उससे मिलने के लिए एक कदम रखते हो तो वह सौ कदम आगे रखता है। हम तो यहां पर हर चीज के भिखारी हैं। कोई किसी चीज का तो कोई किसी चीज का। जैसे एक शब्द में कहा है –

सात द्वीप नौ खण्ड में, सतगुरू तेरा ही पसारा।
क्या राजा क्या बादशाह, सबने हाथ पसारा।।

अर्थात् उस मालिक के सामने सभी अपनी–2 इच्छापूर्ति की मांग रखते हैं। कोई पुत्रा चाहता है, कोई धन चाहता है, कोई रोग दूर करना चाहता है तो कोई मुकदमा जीतना चाहता है। वह दुनियां की इन चीजों में ही सुख देखता है। लेकिन ये मिलने के बाद उसे फिकाई आ जाती है। भूख तो उसे निज घर की है, लेकिन उसे पता नहीं कि उसे क्या भूख है? अरे। जिसके शुभ कर्म हो, जन्म–जन्मान्तरों के अच्छे कर्म किए हुए हों, वह इस चीज़ की मांग करता है कि मैं जहां से आया हूं, वहीं चला जाऊं, उसी में समा जाऊं।

आगे कहा है –– ''और आस–विश्वास ना कोई, चरण गुरू

के पकड़े सोई, वही छुड़ावे कूर से '' कूर कहते हैं काल को, माया को। जीव इस काल से, माया से बड़ा दुखी है, परेशान है। जो इससे तंग आया हुआ है, जिसे दुनियां से फिकाई आ गई है, वह अपने निज घर जाने की इच्छा करता है तो निज घर जाने के लिये क्या करना पड़ता है? सतगुरू के पास जाना पड़ता है। कौन से सतगुरू के पास? जो सत् में रहता है। जो घरों में माला–मनका फेरते हैं, मूर्ति के सामने नमस्कार करते हैं, उन्हें थोड़ी देर के लिए तसल्ली, शान्ति मिल जाती है, लेकिन हमेशा के लिए नहीं। यह तो सतगुरू ही कृपा करके जीव की प्यास बुझाता है और उसे सीधे रास्ते पर लगा देता है। बिना सतगुरू के यह ज्ञान होने वाला नहीं है।

आगे कहा है – ''सुरत गेर चरणन् में लागी, चित चंचलता सब ही भागी, वही मिलावे तूर से'' अर्थात् यह सुरत या ध्यान जब गुरू के चरणों में लग जाता है तो मन की सब चंचलता भाग जाती है और फिर गुरू उसे तूर से यानी राम नाम या सत्नाम से मिला देता है। तो गुरू के चरण क्या हैं? अन्दर जो जगमग ज्योत या प्रकाश है, वो गुरू के चरण हैं। गुरू का अर्थ है मालिक, तो प्रकाश के अन्दर जिसकी सुरत एकाग्र हो जाती है, उसकी बुद्धि ठीक हो जाती है, निश्चयात्मक बन जाती है। यह समझिए कि हिन्दुओं के लिए यह गायत्री मन्त्रा की सिद्धि है। ब्राह्मण कहते हैं कि जिस ब्राह्मण ने गायत्री मन्त्रा की सिद्धि कर ली है, उसकी सात पुस्त नरकों से निकल जाती हैं। जहां तक सिद्धान्त की बात है, वह यह है कि जिसकी सुरत प्रकाश में ठहर जाती है, जिसकी बुद्धि साफ हो जाती है, जिसको सिद्धि मिल जाती है तो यह जीव जहां से आया है, वहां ले जाने के लिये यह एक जरिया है और कोई जरिया नहीं हो सकता। नीचे के जितने जरिये हैं, वो गलत नहीं हैं। अपने–2 दर्जे पर सब सही हैं। लेकिन मेरा अनुभव तो इस शब्द का है। एक तूर का है। पहले ही दिन इस नाम की बख्शीश हो गई। अब बीस–2 साल के सत्संगी हैं जो गुरूओं के चरण दबाते रहते हैं, उनकी सेवा

करते रहते हैं लेकिन कोरे के कोरे रह जाते हैं। उनका सेवा भाव तो ठीक है, लेकिन सेवा भाव करके गुरू से वह ज्ञान लेता है और उन चरणों में टिकता है। दोनों ही बात हैं। हम गुरू लोग भी साफ बात बता दें तो सेवा कौन करेगा भाई। अब मैं साफ बात बताता हूं तो मेरे पास कौन आता है? कौन बात करता है? मैं अकेला आता जाता हूँ। ''सच्ची बात शर्दूला कहे, सबके मन से उतरा रहे''। इसलिए गुरू को चाहिए कि वह जीव को यह बता दे कि तेरे अन्दर जो प्रकाश है, वह गुरू के चरण है। तू उसमें अपनी वृत्ति को ठहरा। लेकिन यह बात बताने में नहीं आती, इशारों में तो सभी बताते आ रहे हैं। साफ बताई नहीं जाती। और किसी हद तक शायद यह बात ठीक भी है क्योंकि सब जीव अधिकारी नहीं हैं तो उनको पहले आशावादी विचार देकर, जीवित महापुरुष की तरफ पूरा विश्वास बढ़ा करके तब तक रखा जाए जब तक वो आगे योग्य न बने। यह हो सकता है। लेकिन मेरा अनुभव इसके खिलाफ है तो इसमें कहा है – ''चित की चंचलता सब मेरी भागी, वही मिलावे तूर से'' अर्थात् कोई जीवित, अनुभवी महापुरुष ही आपको तूर से मिलायेगा और कोई मिलाने वाला नहीं है। गुरू के बिना ज्ञान नहीं है। इन्सान का गुरू इन्सान ही हो सकता है तो गुरू के द्वारा बताए गए तरीके से ही हम साधन–अभ्यास करते हैं। इससे मन की सब कायरता भाग जाती है। यानी वह कमजोर नहीं रहता। शेर बन जाता है। निर्भय हो जाता है। उसकी बुद्धि निश्चयात्मिका बन जाती है कि मालिक मेरे साथ है, मेरा रक्षक है। जो होगा, मेरे भले में होगा। जो इस तरह का साधन करते हैं और जिनको यह भरोसा हो जाता है, उन्होंने अपनी जान की कुर्बानियां दे दी कि मालिक उनके साथ है। जैसे भक्त प्रहलाद की कथा में आता है कि उसे मारने के लिए उसे तरह–2 की यातनायें दी गई, लेकिन वह निर्भय बना रहा क्योंकि उसकी बुद्धि निश्चयात्मक बन गई थी कि मालिक उसके साथ है।

आगे कहा है ––''सुरत शब्द में छिन्न–2 लागी, कायरता

सब मन की भागी'' अर्थात् सुरत जब अन्तर में शब्द के साथ लग जाती है तो मन की सब कायरता दूर हो जाती है। आदमी की चिन्ता, फिकर, डर, भय सब दूर हो जाते हैं और उसे यह विवेक हो जाता है कि जितने भी ये संकल्प– विकल्प मुझे आते हैं, ये मेरे अपने ही देखे–सुने या पूर्वजन्म के संस्कार हैं। वास्तव में कुछ हैं नहीं और जब वह इन सबको छोड़ देता है तो उसकी सुरत सीधी प्रकाश और शब्द में जाकर टिक जाती है। सन्तों ने इसे सुरत शब्द योग कहा है। सुरत जो अपने अन्दर ध्यान है और शब्द जो अन्दर से धार आ रही है तो वह सुरत शब्द के साथ लग जाती है। सुरत को आत्मा रूप कहा है और शब्द को परमात्मा कहा है। आगे कहा है –'डरे काल गुरू सूर से' अर्थात् गुरू से काल भी डरता है। गुरू नाम ज्ञान का है। लेकिन पहले दर्जे में जिसने किसी जीवित महापुरुष को मालिक का स्वरूप बना लिया है तो वह समझता है कि मेरा गुरू बड़ा समर्थ है और उसे यह निश्चय हो जाता है कि मेरा गुरू शक्तिशाली है और यह काल कमजोर है, उसके नीचे है। आगे साधना है और उसके दर्जे हैं, जिनकी व्याख्या की गई है कि –''सहस्र कंवल दल तज त्रिाकुटी आई, सुन्न परे महासुन्न समाई'' अर्थात् जब हम गुरू से नाम लेकर दोनों आंखों के ऊपर जहां बेटियां बिन्दी लगाती हैं, वहां सुरत को इकट्ठा करते हैं या साधन करते हैं तो वहां सहस्रदल कंवल यानी सौ तरह के विचार आते हैं, भूली बातें याद आती हैं। तरह–2 के विचार आने के कारण मन इकट्ठा नहीं होता, सुरत एकाग्र नहीं होती और न ही इष्ट का स्वरूप बनता है, तो इस स्थान का नाम सहस्रदल कंवल है। उसके बाद आगे त्रिाकुटी का स्थान बताते हैं। माथे के बीच में जब आपका साधन बन जाता है, सुरत एकाग्र हो जाती है और आपके इष्ट का स्वरूप आ जाता है तो यह त्रिाकुटी है। इसे ऊँ का स्थान भी कहते हैं। यहां पर ध्याता, ध्यान और ध्येय तीनों इकट्ठे हो जाते हैं। इसलिए इसे त्रिावेणी भी कहा है। ध्याता, यानी ध्यान करने वाला, ध्यान, जिसको किया जाता है

और ध्येय जो सामने चीज है। यहां गुरू मूर्ति या लाल रंग का प्रकाश आ जाता है। यह सिद्धि और ज्ञान का स्थान है। आदमी जो इच्छा करता है, वह पूरी हो जाती है। लेकिन अगर वह गुस्सा करे, बुरा सोचे तो नुकसान हो सकता है और परेशानी आ सकती है। अतः यहां सावधानी की आवश्यकता है। यह साधन किसी जीवित महापुरुष की देख–रेख में करना चाहिए। अगर बिना गुरू के यह साधन किया तो तबाही हो सकती है। यह अनुभव का विषय है, जो अनुभवी गुरू ही बता सकता है। इसके बाद माथे से थोड़ा सा ऊपर सुन्न का ध्यान है। सुन्न का अर्थ है नशा, जिसमें ख्याल न रहे। जो यहां साधन करते हैं, उनको अन्दर की तरफ चांद जैसी चांदनी और सारंगी जैसी आवाज आती है। इस स्थान का साधन करने वाले को कोई चिन्ता, फिकर नहीं रहता तथा देर तक मस्ती व नशे की अवस्था बनी रहती है। इस नशे को दुनियां में सब चाहते हैं। जैसे आप देखते हैं कि लोग चिन्ता फिकर को दूर करने के लिए कोई तो पान खाता है, कोई सुपारी खाता है, कोई शराब पीता है तो कोई कुछ करता है। लेकिन ये सब नशे शरीर को नुकसान देने वाले हैं और थोड़ी देर तक टिकने वाले हैं, जबकि परमात्मा के नाम के नशे में सदा के लिए मस्ती खुशी बनी रहती है और यह नशा किसी भाग्यशाली के हाथ आता है। सुन्न से थोड़ा ऊपर महासुन्न का ध्यान है। यहां पर 'सोहं' का शब्द है व घोर अन्धेरा है। यहां पर कोई रोशनी नहीं है। यहां पर साधन करने वाले को इतना नशा रहता है कि उसे कुछ पता नहीं रहता। अगर उसे दो चार दिन तक न उठाया जाए तो वह वहीं पर बैठा रहता है। यह साधन किसी साधू फकीर के लिए तो ठीक है जो दो–2 , चार–2 दिन नशे में पड़े रहते हैं परन्तु गृहस्थी के लिए यह ठीक नहीं है। अगर वह यहां फंस जायेगा तो उसे बड़ी परेशानी होगी और उसकी दुनियां नहीं बनेगी अर्थात् सुरत यहां रास्ता भूल जाती है और उसका आगे का रास्ता नहीं खुलता। इसलिए यहां किसी अनुभवी पूर्ण गुरू की आवश्यकता है, जो उसे

यहां से निकाल दे।

फिर आगे कहा है –''भंवर गुफा का ताला तोड़ा, अमर नगर जा सुरत जोड़ा'' अर्थात् महासुन्न से आगे जहां पर माथे के बाल मिलते हैं, उस जगह पर जिसकी एकाग्रता बनती है, उसका नाम भंवर गुफा है। भंवर कहते हैं चक्कर को। जैसे पानी में जब भंवर होता है तो वह पानी वहीं पर चक्कर काटता रहता है, आगे नहीं जाता। इसी तरह सुरत यहां चक्कर काटती रहती है। कभी नीचे सुन्न में आ जाती है तो कभी त्रिाकुटी में। यानी उसे आगे का रास्ता नहीं मिलता। इसके लिए गुरू आगे का रास्ता दिखाते हैं और इस भंवर से आगे निकालते हैं। तो सहस्रदल कंवल से लेकर भंवर गुफा तक के जितने भी साधन हैं, इनमें मन साथ है। इसे मन का मण्डल समझिए। यहां आत्मा की मिलौनी है, जिसमें प्रकाश वगैरा होते हैं और अन्दर शब्द रूपी राम नाम की धार है। अगर कोई गुरू से नाम लेकर, संकल्प–विकल्प छोड़कर बात समझ जाये तो वह सीधा Jump भी कर सकता है और भंवर से ऊपर सीधा सतलोक पहुंच जाता है जहां सीधा शब्द आ जाता है। जैसे मैंने ये नीचे के साधन जो आपको बताये हैं, नहीं किए। मेरा तो पहले दिन से ही, जिस दिन से गुरू से नाम लिया, भंवर से आगे का साधन बन गया और अभी तक चलता आ रहा है। मैं तो सत्संगी भाई–बहनों से सुनता रहता हूं। कोई तो कहता है अन्दर घंटा बजता है, कोई कहता है बांसुरी बजती है, कोई कहता है मोहन की मुरली बजती है और कोई अलग–2 प्रकाश बताते रहते हैं। तो मैं समझता हूं कि यह सब सही हैं क्योंकि राधास्वामी वाणी में ये सब साधन लिखे हुए हैं। कहने का भाव यह है कि अगर किसी को भाग्यवश अनुभवी गुरू मिल जाये तो उसे बीच के साधनों की जरूरत नहीं रहती। अगर वह संकल्प–विकल्प छोड़ दे तो सुरत सीधी सतनाम में जाकर ठहर जाती है। जैसे मेरे साथ हुआ। आगे कहा है –'मिल गई सत् जहूर से' जहूर यानी प्रकाश और सत्, प्रकाश को निहारने वाली चीज। अर्थात् मेरी सुरत वहां

जाकर जहूर (प्रकाश) में मिल गई। मुझे हजूर की प्राप्ति कम हुई है। मेरा तो शुरू से शब्द का साधन है। मैं प्रकाश से आगे निकल गया।

शब्द में आगे कहा है –''अलख पुरुष की प्रीत समानी, अगल लोक जा बैठक ठानी, हुई पावन गुरु धूर से।'' ''अलख कहते हैं, जिसे लखा न जा सके, देखा न जा सके, जिसके बारे में कुछ कहा न जा सके यानी अन्दर का सार शब्द। और प्रीत कहते हैं लगाव को, प्रेम को। यह जो अवस्था है इसको आप किसी अनुभवी पुरुष की संगत में बैठकर, दर्शन, प्रश्न, सेवा करके अनुभव कर सकते हो। मेरे को तो इस अलख पुरुष की प्रीत शुरु से है। यह तो मेरा अनुभव है, हो सकता है गलत हो, दावा कोई नहीं है। आगे कहा है ––''अगम लोक में बैठक ठानी'' अगम क्या है? जहां पहुंचा न जा सके, जिसकी कोई हद ही न हो, बेहद तो वह एक नाद है, जो अन्दर से आ रहा है। फिर कहा .. ''हुई पावन गुरु धुर से' अर्थात् मैं गुरु के चरणों से पवित्रा हो गई। तो किसी पूरे गुरु के सत्संग में बैठकर, उसकी बात सुनने से मन की सफाई होती है मन पर जो जन्म –जन्मान्तरों के संस्कारों की छाप पड़ी होती है, वह धुल जाते हैं और असली सफाई वह है, जो अन्दर की अवस्था बन जाये, अन्दर की तरफ सतनाम खुल जाए। सतनाम के साथ उस सार शब्द के साथ सुरत को लगाने से यह मन नीचे रह जाता है। मन की वहां कोई मंजिल नहीं। आत्मपद भी नीचे रह जाता है। लेकिन यह अनुभव गुरु कृपा से ही होगा और अगर कोई महात्मा अन्दर किसी मूर्ति को प्रकट कर लेता है या किसी लोक का अनुभव करता है और वह यह बड़ाई करे कि मैं उस लोक का वासी हूं, तो यह सार नहीं हैं यह तो मन इकट्ठा हुआ है, मन का मण्डल है। असली मंजिल तो आगे है। वह असली मंजिल, वह धुर धाम यह है कि अन्दर सार शब्द आ रहा है, उसके साथ सुरत को लगाना, सुरत को जोड़ना। किसी अनुभवी पुरुष के संग, दर्शन, सेवा से यह काम सहज में हो जाता है। क्यों कह रहा हूं मैं यह बात? क्यों इतना जोर लगा रहा

हूं, इसका कारण यह है कि मैं एक बार अपने गुरु महाराज जी के पास होशियारपुर गया हुआ था। वहां महाराज जी ने सत्संग दिया और उस सत्संग में बताया कि भाई ! परमात्मा से मिलने के लिए अलग–2 प्रकृति वालों के लिए योगियों ने अलग–2 साधन बताए हैं अर्थात् जैसी–2 जिसकी रुचि है, प्रकृति है, उसको वो ही ढंग बताये हैं और पतंजलि महाराज ने सब योगों की चर्चा करने के बाद अन्त में यह कहा है कि अगर तुम कुछ नहीं कर सकते तो किसी वीतराग पुरुष को अपनी खोपड़ी में रखो। यानी किसी पूर्ण अनुभवी पुरुष को पूर्ण मानकर उसे अपने मन में रखो। इससे तुम्हारा योग सहज में सिद्ध हो जायेगा। यह बात मेरे समझ में आई कि यह बहुत आसान तरीका है। शब्द तो मेरा खुला ही हुआ था, साधन बना ही हुआ था, तो मैं जब भी शरीर में जाऊं, मन में जाऊं तो पण्डित फकीरचन्द जी महाराज जी को अपनी खोपड़ी में ले जाऊं। इस साधन से मुझे नई–2 सूझ व नए–2 अनुभव प्राप्त हुए और अनन्त सिद्धियां प्राप्त हुई। मैं सिद्धि का आदमी नहीं था, इसलिए महाराज जी ने बताया कि तुम इनमें उलझना मत। यह सहज में आयेंगी। अगर तुम अपने घर जाना चाहते हो तो अपनी मंजिल पर चलते रहो, इनकी तरफ ध्यान मत करना और मैं आगे चलता गया। इससे मुझे यह पूरा ज्ञान–योग समझ में आ गया कि प्राणायाम का योग क्या है? मानसिक–योग क्या है? हठ –योग क्या है? आनन्द–योग क्या है और ज्ञान–योग क्या है? इसीलिए मैं इस बात पर जोर देता हूँ कि अगर कोई जीवित अनुभवी महापुरुष को अपने मन में नहीं रखेगा, उसे पूर्ण नहीं मानेगा तो उसे योग साधन करने में कठिनाई आयेगी, जबकि मेरे लिए यह कोर्स सहज हो गया तो मेरे अनुभव के अनुसार किसी पूर्ण जीवित अनुभवी महापुरुष की संगत, उसके दर्शन, उसकी सेवा से यह कठिन काम सहज में हो जाता है। आसानी से उसे अनुभव हो सकता है। लेकिन इस बात के लिए दावा कोई नहीं है। आगे कहा है –– ''राधास्वामी चरण निहारे, लगे मोहे अब अतिकर प्यारे'' यहां भक्त

का प्यार है। क्योंकि यह पूरा मार्ग ही प्रेम और विश्वास का है। जैसे यह बेटी डा0 कमला आई हुई है। संस्कृत की विद्वान् है। अच्छा खाती–पीती है अच्छा वेतन है। जब इसका प्यार देखता हूं, इसकी सेवा देखता हूं तो मुझे उन महापुरुषों की याद आती है जिन्होंने अपने गुरुओं की सेवा की, उनके पास रहे और ज्ञान प्राप्त किया। जैसे आगरे के गुरु स्वामी जी महाराज के शिष्य हजूर सालिग्राम जी ने सेवा की मिसाल कायम कर दी। और उन्होंने राधास्वामी वाणी में जोर देकर कहा है –

''पूरा गुरु खोज रे तेरे भले की कहूं,
शब्द रचा गुरु खोज रे तेरे भले की कहूं।
भोजन अधिक मत जीम रे तेरे भले की कहूं।
वचन तान मत मार रे तेरे भले की कहूं।

अर्थात् जब पूरा गुरु मिलेगा, तभी आगे का काम होगा और यह आदमी के कर्मो के अनुसार है। मेरे कोई पिछले जन्म के शुभ कर्म थे जो मेरा प0फकीरचन्द जी से मिलाप हुआ और मुझे वह सदा रहने वाली शान्ति, बेफिकरी व मस्ती मिली। आखिर में कहा है – ''आरती करुं सहूर से'' सहूर नाम है गुरु का और गुरु कहते हैं ज्ञान को, समझ को, विवेक को। अर्थात् अनुभव का नाम गुरु है। तो यह अन्धविश्वास की भक्ति नहीं है क्योंकि अन्धविश्वास की भक्ति कभी भी टूट सकती है तो आज का सत्संग इतना काफी है।

सबको राधास्वामी।,

(9)

स्थान : दांदू

दिनांक : 8.5.98

शब्द – गुरु का ध्यान कर प्यारे, बिना इसके नहीं छूटना।
नाम के रंग में रंग जा, मिले तोहे धाम निज अपना।।

.....

राधास्वामी। तो इस शब्द में कहा कि गुरु का ध्यान कर प्यारे बिना इसके नहीं छूटना अर्थात् गुरु का ध्यान करने से आपकी जिन्दगी बन जायेगी। क्योंकि ध्यान इकट्ठा होने से इच्छा शक्ति बढ़ जाती है तो तुम जैसा सोचोगे, वैसा ही हो जायेगा। मस्ती खुशी बनी रहेगी और सिद्धियां आ जायेंगी। लेकिन ऐसा कब होगा? जब आपको गुरु से इतना प्यार हो कि चलते–फिरते , रसोई में, घर में, दुकान में, गाड़ी में वह आपके माथे से न निकले। इससे उसकी धारें आप में आती रहेंगी। यदि आपने उसे पूर्ण मालिक का अवतार समझा है तो आपके पास मालिक की धार आयेगी और यदि आपने उसे आदमी के रुप में समझा है तो आदमी की धार आयेगी। हर आदमी से धारें निकलती हैं। इसलिए संगत का असर होता है। तो गुरु को पूर्ण मानकर उसका ध्यान करने से आप में उसकी पूर्णता के गुण आ जायेंगे और बाकी सब बन्धन ढीले हो जायेंगे। क्योंकि एक समय में एक ही तरफ ध्यान रहता है। एक म्यान में दो तलवार नहीं आ सकती, एक ही तलवार आती है। तो जब आपने परमात्मा मान कर उसे अपना मन दे दिया तो मन दूसरी जगह नहीं जायेगा और उस तरह से उसे प्यार करने लग जायेगा कि उसकी Radiation (धारें) आप में आ जायेंगी और इससे आपको लाभ यह होगा कि आप तरह–2 के विचारों से, बन्धनों से छूट जाओगे। आपका मन एकाग्र हो जायेगा और ध्यान बनने लग जायेगा। आपके डर, भय, चिन्ता, फिकर सब दूर हो जायेंगे। आपकी यह निश्चयात्मिक बुद्धि बन जायेगी कि गुरु मेरे साथ हैं, मेरे रक्षक हैं, मुझे कोई तकलीफ नहीं हो

सकती। लेकिन यह ध्यान बनना आसान नहीं है। क्योंकि विश्वास नहीं बनता। हम तो गुरु को आदमी समझते हैं और दूसरा जब हम बूढ़े हो जाते हैं, शरीर में काम करने की शक्ति नहीं रहती तब गुरुओं के दरबार में जाते हैं। उससे कुछ हासिल नहीं होता। क्योंकि हर चीज़ का समय होता है। जैसे पढ़ाई करने का, ब्याह–शादी का, सन्तानोत्पत्ति का। तो इसी तरह इस ज्ञान को प्राप्त करने का समय होता है। यदि शरीर की तन्दरुस्ती रहते किसी महापुरुष को गुरु धारण कर, उसे मालिक का रुप मान कर उसकी संगत कर ली जाये तो इस ज्ञान की प्राप्ति हो सकती है। अतः गुरु का ध्यान पहले बहुत जरुरी है। इस गुरु भक्ति के बारे में राधास्वामी वाणी में कहा है –

''गुरु भक्ति है इश्क गुरु का, मन में धंसा, सुरत में पका
पक–2 कर घट में गाढ़ा थाना, गाढ़ थान फिर हुआ दीवाना।''

कबीर का जैसे प्यार था – ''हमारा यार है हम में, हमन दुनियां से यारी क्या''? तो भाग्य से अगर पूर्ण अनुभवी पुरुष मिल जाये, उसका स्वरुप माथे में बन जाये तो सोने में सुगन्ध है। वह आपको भोग में योग सिखायेगा। होठ लटका कर, भगवां पहना कर आगे नहीं ले जायेगा। वह तो आपको आपकी ड्यूटी (कर्त्तव्य) करवाते हुए आगे ले जायेगा। तो बेटियो। इसके लिए सत्संग की बहुत जरुरत है। सत्संग सुनने से गुरु पर विश्वास आ जाता है। क्योंकि खरबूजे को देखकर खरबूजा रंग बदलता है। तो संगत से आहिस्ता–2 रंग चढ़ जाता है। ''रंग लागत–2 लागत है, भय भागत–2 भागत है'' तो जो गुरु को पूर्ण मान लेता है, परमात्मा का रुप मान लेता है, उसको याद करने से उसके सब काम पूरे हो जाते हैं। जैसे मेरा रुप जगह–2 लोगों में प्रकट होता है और उनके काम हो जाते हैं, लेकिन मैं नहीं होता। अभी थोड़े दिन की बात है कि भीलवाड़ा की सेठानी आचार्या मोहिनी बाई अग्रवाल के बेटे की बहू का बहुत बड़ा ऑपरेशन होना था, क्योंकि ऑपरेशन से सभी को भय होता है। इसलिए उसने कहा कि पहले मेरी गुरु जी से बात करा दो। उसने एस.टी.डी. पर

फोन किया लेकिन मिला नहीं, क्योंकि मैं कहीं गांव गया हुआ था। फिर वह कहने लगी कि मैं ऑपरेशन नहीं कराऊंगी। तभी अचानक मेरा स्वरुप वहां प्रकट हुआ और वह कहने लगी कि गुरु जी आ गए, गुरु जी आ गए और मेरा वह रुप ऑपरेशन थियेटर में डा0 के पास जाकर खड़ा हो गया और डाक्टर साहब जब ऑपरेशन करने लगे तो मेरा रुप खुद ही डाक्टर बन गया और वह ऑपरेशन के दौरान मुझे देखती रही। उसके बाद वह रुप गायब हो गया। लेकिन बेटियो मैं सच कह रहा हूँ कि मुझे इसका कोई ज्ञान नहीं। मैं वहां नहीं गया। मैं तो डर गया कि अगर लालचन्द तू झूठ बात कहेगा तो तुझे सजा मिलेगी। मैं लोगों को अपने पीछे नहीं लगाना चाहता था, तो मैं आप लोगों को वह बात कह रहा हूं, जो कोई महात्मा कहेगा नहीं। क्योंकि महात्मा अपना स्वार्थ लेकर आते हैं या तो वे पैसे लेने आते हैं या चेले बनाने के लिए। अब मैंने तो कोई चेला चेली बनाया नहीं। किसी का जबरदस्ती विश्वास बन गया तो वह अलग बात है। जैसे यह डा0 कमला बैठी है।

अब अगली बात और सुनो। यह जो आपके सामने बेटी बैठी है, यह दिल्ली अपने आदमी के पास चली गई। वहां उनको बुखार आ गया। इसलिए इसका Reservation नहीं हो सका और इसके बिना यह आ नहीं सकती थी। अब यह कहती है कि तुरन्त उस समय गुरु जी खिड़की में आकर खड़े हो गए और मेरा सब काम करा दिया। मैं तो कानों को हाथ लगाता हूं कि मैं नहीं गया। तो कौन था वह? इसका प्यार, इसका विश्वास। इस तरह के खेल यह रोज खेलती है। इसी तरह इसकी घर में दो कमरे बनाने की इच्छा हुई तो कहने लगी – गुरु जी। मुझे और तो कुछ नहीं चाहिये, लेकिन आने – जाने वाले रिश्तेदारों के लिए मैं चाहती हूं कि दो कमरे बन जायें। मैंने कहा – बेटा। गुरु मौज करेगा, बन जायेगा। अब कुदरत ने काम किया। इसका देवर कुछ रुपये लेकर आया और इसने मकान बनाना शुरु कर दिया। यह कहती है कि मैंने गुरु जी का स्वरुप बना

कर कुर्सी पर बैठा दिया और 10-15 दिन में यह काम हो गया। कभी–2 यह अपने घर में मुझे अपना चौकीदार बना कर बैठा लेती है। अब बेटियो। मुझे तो कुछ पता नहीं। मैं कहीं आता जाता नहीं हूँ। अगर इन चीजों से मैंने फायदा उठाना होता तो पूरी दुनियां को अपने पीछे लगा लेता। यह तो इसी के विश्वास का फल है। यह मुझे मालिक समझ कर ध्यान बना लेती है और इसको सिद्धियां मिलती हैं तो गुरु को मालिक मानकर जो उसका ध्यान करता है, उसे इस लोक में तथा वाहि लोक में ऋद्धि–सिद्धि मिलती रहती है। इसलिए अगर आप सिद्धियां चाहते हो तो किसी महापुरुष का जिस पर तुम्हारा विश्वास बैठ जाये, जिससे तुम मिल सकते हो, कुछ पूछ सकते हो, बात कर सकते हो, उसका एक स्वरुप बनाओ और उसका ध्यान करो तो तुम्हारे सब काम दुनियां के होते जायेंगे और अगर तुम्हें कोई तकलीफ आए तो उसको बता दो। वह आपको बतायेगा बेटे। ऐसे नहीं ऐसे करना है तो सत्संग का जो पहला दर्जा था, वह यहां तक पूरा है। इस तरह से मन हट कर इधर आ जायेगा और आपको ऋद्धि–सिद्धि, नौ–निधि सफलता मिलेगी। अब यही ध्यान आप किसी मूर्ति का भी बना सकते हैं। इससे आपको सिद्धियां तो मिल जायेंगी, लेकिन यदि आपके विचार गलत होंगे तो नुकसान भी हो जायेगा। परन्तु मूर्ति आपको बोलकर नहीं कहेगी और गुरु जो होगा, वह आपको सचेत करेगा, बोलने का, सोचने का ढंग बतायेगा, जिससे आपको गिरावट नहीं आयेगी और आपकी घर–गृहस्थी सुन्दर बन जायेगी तो मैं यह काम बीस साल से करता आ रहा हूं। हजारों की संख्या में लोग इकट्ठे हो जाते हैं। मेरे प्रसाद से उनके काम हो जाते हैं, उनके साथ नए–2 चमत्कार होते हैं तो वे मुझे कुछ भेंट चढ़ावा देना चाहते हैं। लेकिन मैं किस–2 का लूं? और लेकर कहां जाऊं। मेरे न कोई मन्दिर है, न कोई डेरा है और न मुझे इसकी जरुरत है। एक बार गुरु महाराज मानव दयाल जी ने मुझसे कहा कि कैप्टन सहिब – यहां पर चुरु में एक जगह है। यहां पर मन्दिर बना लो।

डेढ दो लाख रुपये मैं दे देता हूं। आप यहीं पर रहो और सत्संग कराओ। मैंने कहा – महाराज जी। मैं यह काम नहीं करुंगा। मन्दिर बना कर बंध जाऊंगा। मैं एक गरीब आदमी हूं। मैं रुपये लेने के लिए नहीं आया हूं। मैं झूठ बोलकर रुपये इकट्ठे नहीं कर सकता। तो बेटियो किसी अनुभवी पुरुष को पूर्ण मानकर उसे अपनी खोपड़ी में रखो। तुम्हें कहीं आने–जाने की जरुरत नहीं है? घर के अन्दर ही सब कुछ मिल जायेगा।

अब आगे कहाहै – ''नाम के रंग में रंग जा, मिले तोहे धाम निज अपना'' अर्थात् तुम गुरु से नाम ले लो, उस नाम के रंग में रंग जाओ और अपने निज धाम पहुंच जाओ। यानी नाम के साधन से तुम जहां से आये हो, वहीं पर पहुंच जाओगे। वह गुरु तुम्हें ज्ञान देगा कि तुम भूल कर भी घटिया विचार मत रखना और जो कुछ चाहिए, उसकी इच्छा रखना और मरते दम तक काम करना क्योंकि जब तक जीना, तब तक सीना। हम गृहस्थी है, आखिर तक सब कुछ चाहिए। इसलिए वह आपको संन्यासियों की तरह नहीं होने देगा। भागने नहीं देगा। भोग में योग सिखायेगा। वह आपको ऐसा नाम देगा, जिसका ध्यान करने से आपको मस्ती, खुशी बेफिकरी बनी रहेगी। क्या ऐसा होता है? हां, मेरी ऐसी अवस्था है। चलते–फिरते, खाते–पीते अधिकतर मैं उस नाम की अवस्था में रहता हूं। कभी–2 भूल भी जाता हूं। यदि अन्त समय में मेरी यह अवस्था बनी रही तो मैं उसी में समा जाऊंगा। लेकिन दावा कोई है नहीं। तो वो चीज क्या है, उसको मैं जानता हूं। लेकिन मेरे से वहां अधिक देर तक ठहरा नहीं जाता, वापिस आ जाता हूं। क्यों आ जाता हूं? क्योंकि मेरे से गुरु ने काम लेना है। मैं गुरु का ऋणी हूं। मैं आप लोगों पर कोई मेहरबानी करने नहीं आता। अपना कर्जा उतारने आता हूं। मैं एक बार अपने गुरु महाराज जी की मुट्ठी चप्पी कर रहा था, क्योंकि मैं समझता था कि गुरु के पैर दबाना, शरीर की मालिश करना, कपड़े पहनाना, खाना खिलाना – यही गुरु की सेवा है। तो वह कहने लगे

लालचन्द। मेरी असली सेवा यह नहीं है। मेरी सेवा है, मेरे ज्ञान को सच्चाई से खुद अनुभव करके दूर–2 तक जहां मेरे बेटे–बेटी दुःखी हैं, उनको जाकर मेरा ज्ञान देना, ताकि वो सुखी हो जायें। उस समय तो मुझे यह समझ नहीं आई लेकिन अब मुझे यह समझ आई है, तो मैं अपना कर्म काटने के लिए यहां आता हूं। अब यह डा0 कमला आई हुई हैं ज्ञान लेने के लिए, लेकिन मैं तो इसे अपना गुरु मानता हूँ। एक बार यह मेरे साथ चुरु आ गई। मैं इसे दुनियादारी के ख्याल से अपनी गुरु बहन सीता के घर ठहराना चाहता था। मेरे बार–2 कहने पर इसने कहा कि क्या आप अपनी बहन, बेटियों को यहां आने पर दूसरों के घर भेज देते हो? मैं तो आपको कुछ ओर ही समझ कर आई थी तो मेरी आंख खुल गई और मुझे होश आया कि लालचन्द तेरे घटिया विचार हैं। उस मालिक के यहां तो कोई फर्क है ही नहीं। जैसे एक बार विवेकानन्द जी महाराज किसी सेठ के यहां सत्संग कराने जा रहे थे। उस सेठ के पास कोई नर्तकी रहती थी। जब विवेकानन्द जी ने उस नर्तकी को देखा तो वे वहां से उठ कर चल दिए। तब वह नर्तकी उठकर उनके सामने जाकर हाथ जोड़ कर कहने लगी ––

''समदर्शी प्रभु नाम तिहारो
एक लोहा पूजा में राखे, एक घर बधिक पड़ो।
पारस गुण अवगुण नहीं देखे, कंचन करत खरो।
समदर्शी प्रभु नाम तिहारो''

तब विवेकानन्द जी को होश आया और वह सोचने लगे कि मैं ही घटिया हूं। यह लड़की तो मेरी गुरु है। भगवान् के यहां तो सब बराबर हैं तो गुरु के पास यह कमजोरी नहीं होती। हर आदमी एक दूसरे से ज्ञान लेता और देता है। यह प्यार का मार्ग है। हमारे में जो कमियां हैं, वो धीरे–2 दूर हो जाती हैं। एक बार फिर यह मेरे पास आई तो कहने लगी कि महाराज कोई चमत्कार दिखाओ, क्योंकि इसका कहीं विश्वास नहीं बैठ रहा था। यह 10-15 साल से गुरुओं

के पास घूम रही थी, लेकिन कहीं विश्वास नहीं बैठता था। मैंने कहा – बेटी। मेरे अन्दर तो कोई चमत्कार है नहीं और जब यह जाने लगी तो मैंने कहा बेटे। सुमरिन, ध्यान करती जाना और रास्ते में बस में इसके साथ कोई जबरदस्त घटना घटी। तब इसने मेरे पास एक बहुत बड़ा पत्रा लिखा कि आप तो कहते थे कि मैं कोई चमत्कार नहीं करता। आप अन्तर्यामी हैं और बहुत बड़े परमात्मा हैं। अब यहां भेद क्या है? इसका मन पवित्रा था। यह चाहती थी कि इसका कहीं विश्वास बैठे। अब मालिक हर जगह हाजिर होता है तो इसके साथ वह घटना घट गई। इसलिए जो कुछ मिलता है, वह तुम्हारे मन का ख्याल है। यह सब सिद्धियां तुम्हारे अन्दर हैं तो यह बेटी, योगी जो ध्यान– साधना में शब्द और प्रकाश का अनुभव करते हैं, उसे अनुभव करती रहती है। यह समझती है कि यह प्रकाश गुरु जी ने उत्पन्न किया है। अगर मैं करता तो सबके अन्दर इस प्रकाश व ज्योत को उत्पन्न कर देता। यह तो विश्वास का खेल है तो नाम के रंग की यह हालत है कि जब तुम अन्तर में उस धुन, उस प्रकाश में समाने लग जाओगे तो तुम्हारे साथ नई–2 बातें होती जायेंगी, नया–2 अनुभव होता जायेगा। लेकिन इसके लिए किसी को पूर्ण मानना पड़ेगा, जो खुद प्रकाश और शब्द में रहता है और उसके साथ प्रेम करना पड़ेगा उसकी संगत करनी पड़ेगी क्योंकि जैसा संग, वैसा रंग तो यह प्यार का मार्ग है। ऐसा प्यार कि माथे के अन्दर वह स्वरुप बना रहे। जैसे तुम्हारा प्यार है तो तुम्हारी घर गृहस्थी हुई, तुम्हारे बाल बच्चे हुए। जिस घर में प्यार है, उसके घर में खुशी है और जिस घर में प्यार नहीं, उसमें परेशानियां रहती हैं। तो यह मालिक के साथ प्यार करना है। उसका कोई रुप नहीं। बस एक रुप बना लो। जब किसी जीवित वीतराग महापुरुष से आपका प्यार होगा और उसके कथनानुसार आप चलेंगे तो आपके अन्दर वह नाम प्रकट होगा। तो आज का सत्संग दो बातों पर आधारित रहा। पहला गुरु का ध्यान, दूसरा नाम। तो गुरु, ध्यान का तरीका बताते हैं, जो सबके लिए एक

नहीं है। जैसे डाक्टर रोगियों को देखकर रोग के अनुसार अलग–2 दवा देता है, वही काम गुरु करता है। यही गुरु नाम है। अब हजारों लोग गुरु भक्त बन रहे हैं, गुरु धारण कर रहे हैं, नाम ले रहे हैं, लेकिन हासिल कुछ नहीं कर रहे हैं। राधास्वामी वाणी में कहा है –

गुरु चेला व्यवहार जगत में झूठा बरत रहा।
का से कहूं समझ नहीं काहू, धोखे धार बहा।।
गरु तो मान प्रतिष्ठा चाहे, चेला स्वार्थ संग भया।
सच्चा मार्ग सुरत शब्द का, सो अब गुप्त भया।

अर्थात् यदि गुरु यह चाहे कि मुझे दान–दक्षिणा मिल जाये, मुझे चेले मिल जायें, मेरा आश्रम बन जाये तो वह आपको कहां लेकर जायेगा? तो ऐसे गुरु जो लोगों को पीछे लगाते हैं, उनका अन्त समय अच्छा नहीं होता और इधर चेले भी यही चाहते हैं कि हमें सन्तान मिल जाये, धन मिल जाये, दुकान बन जाये, हमारे बेटे–बेटी का रिश्ता हो जाये। यानी गुरु कोई मन्त्रा मार दे और उनका काम हो जाये। यह सुरत–शब्द का मार्ग तो उनके लिए है, जो निज घर जाना चाहते हैं। जो बिना गुरु के सुमिरन ध्यान करते हैं, उन्हें वह सदा रहने वाली शान्ति नहीं मिल सकती, चाहे इसके लिए वो जिन्दगी भर अन्न न खाये, पूरी उम्र तक दान करते रहें या कोई और तप करते रहें। हम सब लोग पूजा–पाठ तो करते हैं, लेकिन बिना गुरु के किसकी पूजा? किसका योग? जैसे दुनियां के कार्यो की तरफ ही देख लो कि अगर कोई सोने का काम सीखना चाहता है तो उसे सुनार की दुकान पर बैठना पड़ेगा, अगर कोई बिजली का काम सीखना चाहता है तो उसे बिजली वाले की दुकान पर जाकर काम सीखना पड़ेगा यानी दुनियां के हरकाम सीखने के लिए training लेनी पड़ती है। तो यह आत्म ज्ञान बिना गुरु के प्राप्त करना क्या खाला का घर है? तो आज के छोटे से सत्संग में मैंने आपको दो चीज बताई। अगर आप दुनियां बनाना चाहते हो तो कोई इष्ट बना लो और उसका ध्यान करो। यदि किसी जीवित अनुभवी पुरुष को इष्ट बनाओगे तो सोने में सुगन्ध

है। और यदि कोई गुरु न मिले तो किसी मूर्ति का रुप बनाओ और सत्संग किसी अनुभवी का सुनो। क्योंकि अगर मूर्ति का रुप बनता है तो जैसा सोचोगी, वैसा ही हो जायेगा। अगर गुस्से में आकर कुछ बोल दोगे तो वह गोली जैसी चोट होगी और आपका भारी नुकसान हो जायेगा। इसलिए अगर साधन करते हो तो किसी अनुभवी पुरुष का सत्संग सुनते रहना, उसकी सेवा, दर्शन करते रहना, इससे धीरे–2 आपका मन वश में आ जायेगा और अगर मन में तरंग उठती है, तो साधन नहीं करना। यह मन पूरे दिन सोचता रहता है। इसलिए शिव संकल्प रखना कि मेरा बेटा पढ़कर बड़ा आदमी बने, मेरी दुकान अच्छी चले, मेरी कोठी बने, मैं सत्संग करांऊ, कोई साध जिमाऊं आदि।''मैं जानू कोई साध जिमाऊं, साध जिमाऊं सदा सुख पाऊं, नित उठ सदा गंगा नहाऊ'' अर्थात् सुन्दर व ऊंचे विचार रखना, जिससे तुम्हारी दुनियां सुन्दर बन जायेगी। तो पहली बात गुरु को धारण करो। किसी जीवित, अनुभवी पुरुष की संगत, उसके दर्शन से लाभ होगा, शान्ति मिलेगी। दूसरी बात गुरु से वह नाम ले लेना जो अमूल्य चीज है, बहुमूल्य रत्न है। यह नाम तुम्हारे साथ जायेगा, तुम्हारी रक्षा करेगा तो आज का सत्संग इतना ही काफी है। सबको राधास्वामी।

(10)

स्थान : दांदू
दिनांक : 11.5.98

शब्द – मिलता ना आत्म ज्ञान गुरु के बिना।
कटता न जम का जाल गुरु के बिना।।
.....

राधास्वामी। अभी आपने डा0 कमला से यह शब्द सुना। इसमें इसी बात पर बल दिया है कि गुरु के बिना हम जो भी काम करते हैं, उसका कोई लाभ नहीं होता। गुरु का अर्थ है पूरा विवेक।

पूरे गुरु का मतलब यह नहीं कि उसके 1000-2000 शिष्य हों, बहुत बड़ा डेरा हो, वह बहुत ठाठ से रहता हो। अगर पूरा विवेकी और अनुभवी गुरु मिल जायेगा तो वह जीव को भटकायेगा नहीं और वह इस लोक में रहते सुख–शान्ति का तरीका बता देगा जिससे उसका यह लोक व परलोक बन जायेगा। हम लोग इस लोक में जम के जाल से दुःखी हैं। जम का जाल है – चिन्ता, फिकर, डर, भय। किसी को रोग की तकलीफ है तो किसी को धन की, किसी को बेटे की तकलीफ है तो किसी को मकान की। यानी 'नानक दुखिया सब संसार'। तो क्या गुरु इस जम के जाल को काट देता है ? हां, अगर वह उसके वचन को सुनता है और उसकी संगत करता है तो वह तरीका बता देता है कि तू हाय–2 मत कर। जो तेरा प्रारब्ध है, उसको खुशी–2 भोग ले और आगे के सुन्दर कर्म बना ले। वह यह नहीं कहेगा कि हम फूंक मार देंगे, ये कर देंगे, वो कर देंगे, नहीं। वह सच्चाई ही कहेगा कि ''करड़े कर्म कभी न टले, चाहे घूम आओ चारो धाम'' अर्थात् तुम किए हुए कार्यों को भोगते हुए आगे के लिए सुन्दर कर्म बना लो। पहले तुम्हारे संकल्प घटिया थे, अब अपने संकल्प सुन्दर रखो। एक दिन में यह बात बनेगी नहीं क्योंकि हर चीज में समय लगता है। जैसे हम पौधा बोते हैं, अनाज बोते हैं तो उसके होने में समय लगता है। जैसे बच्चा पैदा होता है तो उसको नौजवान बनने में समय लगता है। इसलिए इसमें गुरु ज्ञान की बहुत जरुरत है। आत्म ज्ञान क्या है? यह अपने अन्दर बोलने वाला क्या है? कहां से आया है और कहां जायेगा? इसको अनुभव करने का नाम आत्म ज्ञान है। यानी मैं क्या हूं? इसको खुद अन्दर स्वयं अनुभव करना आत्म–ज्ञान है। आत्मज्ञान से बड़ा संसार में कोई ज्ञान नहीं है। बिना गुरु के किसी को आत्म ज्ञान नहीं हो सकता, क्योंकि उसे पता ही नहीं कहां, कैसे अनुभव करुं? और दूसरी बात इस लोक में कोई भी जम के जाल यानी चिन्ता, फिकर, डर, भय से खाली नहीं है। चाहे वह राजा हो, चाहे बादशाह और चाहे भिखारी हो। सभी इस

चक्र में फंसे हैं। दूसरा, मरने से पहले जो कुछ लोगों को बड़ी–2 दाढ़ी वाले, बड़े–2 दांत वाले, डरावनी शक्ल वाले जो भासते हैं, उसे भी जम का जाल कहा है। इसलिए अनुभवी गुरु की बड़ी जरुरत है जो हमें ज्ञान देगा कि सही क्या है और गलत क्या है?

आगे कहा है –– ''बस्ती बसो चाहे, बन को जाओ झोली फिराओ, चाहे भगवां रंगाओ'' अर्थात् इस साधन को चाहे तुम घर में बैठकर कर लो चाहे बाहर जाकर, परन्तु उसका अनुभव कर लो। कुछ लोग इसके लिए जंगल में चले जाते हैं और कुछ झोली फिराने को जैसे भवानीनाथ अपने टोले में सुबह 'अलख निरंजन' यानी झोली फेरने को ही ठीक समझते हैं लेकिन इससे उनको कोई लाभ नहीं हो सकता। कुछ लोग इस ज्ञान के लिए दाढ़ी रख लेते हैं, भगवां पहन लेते हैं, कानों में कुण्डल और हाथ में माला ले लेते हैं। परन्तु शरीर के भेष से यह आत्म ज्ञान नहीं हो सकता। जैसे कबीर ने कहा है –

''क्या माला मुद्रा के पहने , चन्दन घिसे ललारा।
मुंड मुंडाए सिर जटा रखाए, अंग लगाए छारा।
क्या पूजा पाहन की कीजे, जो नहीं तत्व विचारा
सार शब्द सतगुरु का गहे बिना, हो नहीं निस्तार तुम्हारा।।

तो गुरु आपका मार्ग दर्शन करेगा कि बेटे। आपको कहीं धक्के खाने की और स्वांग भरने की जरुरत नहीं है। आप घर में ही बैठ कर साधना करो। वह आपको तरीका बतायेगा कि किस तरह अपने मन को साधु बनाना है। साधु नाम है साधन का। तो जो साधु साधना करता है, जहां भी रहता है, जहां भी जाता है, जिस अवस्था में भी होता है, वह दिखाता नहीं कि मैं साधु हूं, सिद्ध हूं और अगर दिखायेगा तो लोग उसके पीछे हो जायेंगे। यह भगवां भेष व भिक्षा मांगना तो किसी समय में साधुओं ने राजा–महाराजाओं के घमण्ड को दूर करने के लिये शुरु किया था। इसका यह अर्थ नहीं था कि भिक्षा मांगने से उनको ज्ञान हो जायेगा। जैसे गुरु गोरखनाथ ने राजा भरथरी से 12 साल तक भिक्षा मंगवाई और घर–2 जाकर भिक्षा

मांगने से, लोगों के तरह–2 के ताने सुनने से उनका मन नीचा हो गया अर्थात् गुरु के बिना यह मन का अभिमान जाता नहीं है। इसके लिए वह गुरु धारण करे, उसकी सेवा करे, दर्शन करे, वचन सुने और ज्ञान ले, तब जाकर उसके मन का मान मिटता है।

आगे कहा है –''जटा बढाओ चाहे, मुंड मुंडाओ, जप–तप करो चाहे धूनि रमाओ'' अर्थात् इस ज्ञान को प्राप्त करने के लिए कुछ लोग जटाएँ बढ़ा लेते हैं कुछ चारों तरफ अग्नि जलाकर धूनि रमा लेते हैं और कुछ बर्फ में, बारिश में, धूप में एक टांग पर खड़े होकर तप करते हैं। यह हठयोग है। इनसे यह ज्ञान होने वाला नहीं है। गीता में इसी के लिए भगवान् कृष्ण ने कहा है कि मैं इस आदमी कि देह में आत्मा स्वरुप हूं। तो जो मुझे या इस आत्मा स्वरुप को दुख देते हैं, कष्ट देते हैं, वो घटिया कर्म करते हैं, उनको ज्ञान नहीं हो सकता क्योंकि 'आत्मा सो परमात्मा'। अतः यदि धूनी रमाने से ज्ञान होता तो सभी धूनी रमा लेते। मूंड मुडाने से होता तो सब मूंड मुंडा लेते और यदि जटा रखाने से होता तो ये सिक्ख पूरी जटा रखते हैं, सब के सब आत्म ज्ञानी हो जाते। कहने का भाव यह है कि यह सब मन का मान व शरीर का स्वांग है। इससे परमात्मा नहीं मिलता। आगे कहा है ––''होता नहीं कल्याण गुरु के बिना'' कल्याण कहते हैं आत्मिक शान्ति को अर्थात् इस शरीर के रहते मनुष्य को यह ज्ञान हो जाये कि मैं कौन हूं? कहां से आया हूं? तो इस आत्मिक अनुभूति में ही इसका कल्याण है। और यह चीज बाहरी दिखावटी साधनों से नहीं मिलेगी। यह चीज तो किसी पूर्ण अनुभवी पुरुष के ज्ञान से ही प्राप्त होगी और यदि आप किसी ऐसे अनुभवी पुरुष के पास जाते हो, मगर विश्वास नहीं है तो भी लाभ नहीं होगा क्योंकि यह विश्वास का विषय है। अब मेरे गांव में कितने ही आदमी रहते हैं, लेकिन उनको विश्वास नहीं है कि मैं तत्व ज्ञान का योगी हूं। अतः उन्हें लाभ नहीं हो सकता।

आगे कहा है ––''गीता पढ़ाओ चाहे सप्ताह बचाओ, पढ़–पढ़

पोथी पण्डित सुनाओ'' अर्थात् घर–2 में गीता रखी है। लोग गीता पढ़ते हैं, पाठ करवाते हैं। किसी पण्डित को बुलाते हैं, सप्ताह रखवाते हैं, लेकिन इससे आत्मा का ज्ञान नहीं होगा। मैंने तो आज तक गीता पढ़ने वाले में शान्ति नहीं देखी। हां थोड़ी देर पढ़ने से संस्कार तो बन जाते हैं, मन तो खुश हो जाता है, लेकिन बाकी लाभ नहीं। अब लोग घरों में पण्डितों को बुलाते हैं, पाठ करवाते हैं, उन्हें भोजन करवाते हैं, दान देते हैं, लेकिन मुझे तो आज तक किसी का उपकार हुआ नहीं दिखा। पण्डित भी डूबे जा रहे हैं, उनको भी कोई लाभ नहीं। हां, अगर किसी भूखे गरीब को खिला दो तो ठीक है, पुण्य होगा। पण्डित वास्तव में है कौन? अगर पण्डित घर में आ जाये तो कमाल ही हो जाये। ये सब तो जाति के पण्डित हैं। इनके विचार व लक्षण भी दूसरे हैं। नानक जी ने पण्डित के बारे में कहा है –

पण्डित वो जो मन परबोधे, राम नाम आत्म में शोधे।
हरि की कथा हृदय बसावे, सो पण्डित फिर जूनि न आवे।
चारों वर्ण को दे उपदेश, ता पण्डित को सदा आदेश।।

अर्थात् जिसने अपने जन्म–जन्मान्तरों के शुभ–अशुभ कर्म ज्ञान की अग्नि द्वारा जला कर भस्म कर दिए, उसको पण्डित कहते हैं। ऐसा पण्डित या साधु घर में आ जाये और खाना खा जाये तो वह मालामाल हो जाता है। कहते हैं ––''68 का फल एक है, घर साध जे जिमाओ'' अर्थात् ऐसे साधू को भोजन कराने पर 68 तीर्थ करने का फल मिल जाता है और उसे लाभ होता है परन्तु साधू बनना बड़ी टेढ़ी खीर है। मेरे से तो पूरा साधू बना नहीं गया। मैं उस जगह रहने की कोशिश तो बहुत करता हूं, लेकिन पूरा 100% साधु नहीं बन सका, क्योंकि इस दुनियां के काल और माया मुझे अपनी तरफ खींचते रहते हैं, साधु बनने नहीं देते। अन्दर साधना करने का नाम साधु है। लेकिन आजकल तो लोग लकीर के फकीर बने हुए हैं। सेठ तो पण्डितों को भोजन करा के खुश होते हैं कि उनका पाप उतर जायेगा और पण्डित भोजन के लिए तैयार रहते हैं। मैं यहां किसी

की बुराई नहीं कर रहा हूं। अगर कोई किसी को श्रद्धा से खिलाता, पिलाता है तो लाभ तो होता है, परन्तु अगर किसी भूखे, प्यासे व जरुरतमन्द को खिलाया जाये तो उसकी आत्मा आशीर्वाद देती है। लेकिन इससे अगर तुम ये सोचो कि तुम्हें आत्मा का ज्ञान हो जायेगा तो हवा खाओ। क्योंकि ''मिलता नहीं निज धाम गुरु के बिना'' अर्थात् यह निज धाम या आत्म ज्ञान गुरु के बिना नहीं मिल सकता। अरे दुनियां के छोटे से छोटे काम भी बिना गुरु के नहीं आते तो आप कैसे आशा रख सकते हो कि यह इतना बड़ा आत्म ज्ञान बिना गुरु के मिल जायेगा? जैसे एक महाजन का बेटा ही एक अच्छी दुकान कर सकता है, खाती का बेटा ही खाती की दुकान कर सकता है और एक सुनार का बेटा ही सुनार की दुकान चला सकता है, क्योंकि वे शुरु से ये काम सीख लेते हैं, अगर इनकी जगह किसी अनजान आदमी को बैठा दिया जाये तो वह ये काम बिना सीखे नहीं कर सकता। अतः इस आत्म ज्ञान को जानने के लिए किसी अनुभवी गुरु का सत्संग, उसका दर्शन, उसकी सेवा, उसके वचन सुनना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि वह रहस्य जानता है। जैसे कोई डाक्टर रोगी को देखकर दवाई देता है और उसे लेने का तरीका बताता है, जिसको लेने से रोगी को आराम आ जाता है, उसी तरह अनुभवी पुरुष जानता है कि इस आदमी को क्या चाहिए और क्या तरीका है? वह उसको उसकी प्रकृति के अनुसार कोई ऐसा तरीका बताता है जिससे उसकी यह दुनियां भी बन जाती है और उसे आत्मज्ञान भी हो जाता है। अतः आदमी का गुरु आदमी ही हो सकता है, क्योंकि वह उससे प्यार कर सकता है, बात कर सकता है और कुछ पूछ भी सकता है। यह काम मूर्ति नहीं कर सकती है। मूर्ति से तो आपके विश्वास से इच्छा पूर्ति हो सकती है, आत्मज्ञान नहीं। अतः आत्मज्ञान, निज नाम आपके अन्दर है, जो शान्ति देनेवाली चीज है और इसे प्राप्त करने का तरीका गुरु ही बता सकता है, जो इसका अनुभवी हो।

आगे कहा है – ''काशी जाओ चाहे मथुरा जाओ, तीर्थ जाओ चाहे मल–2 नहाओ'' अर्थात् हमारे मनों पर ये संस्कार पड़े हुए हैं कि काशी, मथुरा या अन्य तीर्थ स्थानों पर जाकर स्नान करने से हमारे पाप कर्म धुल जाते हैं। इसलिए लोग जगह–2 तीर्थ स्थानों पर जाकर स्नान करते हैं इनसे आत्म ज्ञान होने वाला नहीं है। क्योंकि पहले जो महापुरुष हुए जिनके नाम से ये तीर्थ बने हुए हैं, वो तो वहां हैं नहीं। अब तो वहां पण्डे या ठग बैठे हैं, जो लोगों को ठगते रहते हैं। लोग वहां जाते तो हैं श्रद्धा लेकर, लेकिन वहां से उल्टा गलत प्रभाव व नफरत लेकर आते हैं। अतः इन तीर्थो पर जाने से न कोई पाप कटता है और न ही आत्मा का ज्ञान होता है। क्योंकि ''धुलता नहीं मन का मैल गुरु के बिना'' अर्थात् गुरु ही कृपा करके, दया करके जीव को अन्दर का भेद बताता है, अन्दर की गंगा में स्नान करने का तरीका बताता है। वह तरीका बताता है कि किस तरह से सुरत को अन्दर लगाना है। लेकिन बताता उन्हीं को है, जिन्हें इस चीज की भूख हो। हम तो अधिकतर दुनियां के लिए जाते हैं। कोई धन चाहता है, कोई सन्तान चाहता है तो कोई नौकरी चाहता है। यानी हम दुनियां के दुःखों से दुःखी हैं तो गृहस्थी अनुभवी गुरु उसे कुछ ऐसे संस्कार देता है, जिससे उसकी दुनियां भी बन जाती है।

आगे कहा है –''मन्दिर जाओ चाहे ठाकुर ध्यायो, मस्जिद जाओ चाहे शीश नवाओ होता न भान गुरु के बिना'' अर्थात् चाहे आप हर रोज मन्दिर में जाओ, मस्जिद में जाकर शीश नवाओ या ठाकुर की पूजा करो। इससे मन का मैल नहीं जाता, जम का जाल नहीं कटता और आत्मा का ज्ञान नहीं हो सकता। अगर ऐसा होता तो रोज ही लोग मन्दिर जाते हैं, मस्जिद जाते हैं, शीश नवाते हैं, उन सबको आत्मा का ज्ञान हो जाना चाहिए था, लेकिन ऐसा नहीं है। हां ऐसे स्थानों पर जो लोग श्रद्धा लेकर जाते हैं तो मालिक दयालु है, उनकी इच्छा पूर्ति होती रहती है, लेकिन शान्ति नहीं मिल सकती। यह तो

आपको तभी मिलेगी जब आप गुरु धारण करोगे और श्रद्धा भाव रखोगे। बिना गुरु के आत्मा का ज्ञान होने वाला नहीं है।

आगे कहा है – मौन करो चाहे वचन सुनाओ, व्रत करो चाहे घर–2 खाओ'' अर्थात् इस ज्ञान को प्राप्त करने के लिए चाहे कोई मौनी होकर बैठ जाए, चाहे कोई जगह–2 जाकर प्रवचन करता रहे और चाहे कोई पूर्णिमा, अमावस्या आदि के व्रत रखता रहे परन्तु आत्मा का यह ज्ञान इनसे नहीं होगा अब बहन, बेटियां हर रोज कोई न कोई व्रत रखती रहती हैं परन्तु मैं तो उन्हें शान्त नहीं देखता। हां ये व्रत पेट की सफाई के लिए तो ठीक है और दूसरा मालिक के नाम पर अगर सच्चाई से करा जाये तो लाभ की चीज है, परन्तु आत्मा का ज्ञान गुरु के बिना नहीं होगा। अर्थात् आप चाहे पूरे दिन खाना मत खाओ, चाहे मौन पर बैठे रहो और चाहे मेरी तरह गांव–गांव जाकर भाषण सुनाते रहो, लेकिन आत्मा का ज्ञान तो गुरु से ही होगा और इस आत्मज्ञान के बिना जीव को सुख नहीं, शान्ति नहीं क्योंकि वह परेशानियों में ही चक्कर काटता रहेगा। आज सुखी तो कल दुःखी। आगे कहा है ––'' भटको चारों खान गुरु के बिना'' 'चारों खान' यहां दो बात हैं। पहला, चारों धाम अर्थात् चाहे आप चारो' धाम (बद्रीनाथ, केदारनाथ, प्रयाग, गंगोत्राी) घूम कर आ जाओ, आपको कोई आत्मा का ज्ञान नहीं होगा। दूसरा, चारों खान। चार खान क्या हैं? पहला जो अण्डे से पैदा होते हैं, वो अण्डे की खान यानी अण्डज है। दूसरा जो जेर से पैदा होते हैं, वो जेर की खान या जेरज हैं। तीसरा, कुछ जीव पसीने से पैदा होते हैं, वो पसीने की खान या स्वेदज हैं। और चौथा कुछ जीव जमीन से उत्पन्न होते हैं वो जमीन की खान या उद्भिज हैं। तो जीव चारों खानों में चक्कर काटता रहता है, परन्तु यह ज्ञान उसे गुरु के बिना नहीं मिलता? तो यहां गुरु की महिमा बताई गई है। अब यह डा0 कमला है जो मुझे गुरु मानती है। यह कहती है कि मुझे यह ज्ञान आपसे ही मिला है। अगर यह मेरे हाथ में होता तो मैं अपने घर में बेटों को, स्त्राी को,

परिवार वालों को और यहां तक कि सारे गांव वालों को ही दे देता। यह तो इसके भाग्य का मामला है। जिसको श्रद्धा है, विश्वास है वह यह ज्ञान ले जाता है। शब्द के अन्त में कहा है कि गुरु की शरण में आ जाओ। किस गुरु की? यहां तो जो चेले जिस गुरु के हैं, उसी का राग गाते हैं। वो कहते हैं कि हमारा गुरु जानी जान है, पहुंचा हुआ है। जैसे ब्यास वाले चाहते हैं कि हमारे गुरु की शरण में आओ, आगरा वाले कहते हैं हमारे गुरु के पास आओ और मस्ताना वाले कहते हैं कि हमारे गुरु की शरण में आओ अर्थात् हर चेला अपने गुरु की बड़ाई करता है और वह कहता है कि आपका कल्याण हमारे गुरु से ही होगा दूसरे से नहीं। बात गलत नहीं है। अपना–2 विश्वास है। तो जिस गुरु पर आपका विश्वास आ जाए, उसे पूर्ण मान लेने से आपका काम हो जायेगा।

तो आज के सत्संग में आपको यहां ऊपर जितनी बातें बताई, उसमें यह कहा गया है कि इस आत्मा के ज्ञान के लिए इस जीव को किसी जीते–जागते महापुरुष को देखना चाहिए। देखने के बाद उसको यह विश्वास आ जायेगा कि यही महात्मा पूर्ण है। मैं इसी को भगवान् का रुप बना लेता हूं। फिर उसका दर्शन, उसका सत्संग, उसका वचन, उसकी सेवा करने से आपका सांसारिक मामला भी बनता जायेगा और आत्मा का ज्ञान भी प्राप्त हो जायेगा और अगर आपका कहीं विश्वास नहीं बनता है तो चाहे कितना ही ऊंचा महात्मा क्यों न हो, उससे आपको लाभ नहीं होगा। क्योंकि खेल विश्वास का है और यह धर्म विश्वास पर टिका है? राधास्वामी योग में यह लम्बा कोर्स नहीं है। पूरा, सच्चा अनुभवी पुरुष मिल जाये जो उस नाम में मस्त रहता हो। वह उस साधक को सहज साधन बतायेगा। पहले, दुनिया बनाने के लिए रुप का ध्यान देगा, जिस ध्यान से उसके दुनियावी काम सहज में पूरे होते जायेंगे। हां, प्रारब्ध आगे आयेगा, जिसे उसे भोगना पड़ेगा। फिर धीरे–2 वह उसे अन्दर ठहरने का तरीका बतायेगा। फिर सत्संग सुनते–2 और माथे के बीच में ठहरते–2

उसके अन्दर जगमग ज्योत प्रकट हो जायेगी और इस आत्मिक अनुभूति से आगे का सुरत–शब्द का साधन हो जायेगा और इस निज नाम की अनुभूति हो जायेगी। लेकिन यह प्राप्त उसे ही होगा, जिसे इसकी जिज्ञासा हो। आज का सत्संग इतना ही काफी है।

सबको राधास्वामी।

(11)

स्थान : चुरु
दिनांक : 12.5.98

शब्द – **दिवाने क्या गावे घर दूर**

.....

राधास्वामी। प्यारी संगत जी। अभी आपने डा0 कमला से गुरु कबीर का यह शब्द सुना। इसमें कहा है कि 'दीवाने क्या गावे, घर दूर' यानी हम लोग बड़े–2 शब्द गाते हैं, अच्छे–2 अनुभव की वाणी गाते हैं, बड़ी प्यारी लगती है। गाने वाले तो गाने का आनन्द लेते हैं, अपनी आवाज का, अपनी मान बड़ाई का, अपनी मशहूरी का कि मुझे बड़े–2 शब्द आते हैं। तो गुरु कबीर ने इसकी तरफ इशारा किया है कि अरे भाई। तू क्या गा कर खुश हो रहा है? वह घर तो दूर है, जहां तुझे शान्ति मिलनी है, परम आनन्द मिलना है। वह प्यारे ! गाने से नहीं मिलेगा। वह तो किसी सतगुरु की शरण में जाकर, उसको मस्तक झुकाकर, उसकी सेवा करने से, उसके दर्शन करने से, उसके वचन सुनने से और फिर वह जो उपदेश दे, उस पर अटल रहने से मिलेगा। तभी अपना अनुभव करते हुए जीव परम शान्ति को प्राप्त हो सकता है। शब्द में आगे कहा है –– ''अनलहक कहै हक में पहुंचा, सोई चढ़े मन्सूर''। ''अनलहक'' कहते हैं मालिके कुल जिसके हक में सच्चाई में पहुंचा। इस वाणी में महात्माओं ने इस काम के लिए जो–2 योग साधन करे हैं, वह बताए हैं। लेकिन वो मंजिल पर नहीं पहुंचे। कबीर के कहने का भाव यह है कि जो लोग

अपनी जिन्दगी में उस परमात्मा से मिलने के लिए, परम शान्ति पाने के लिए मेहनत करते आ रहे हैं, उनमें अलग–2 भाव व अलग–2 चीज हैं। पतंजलि ऋषि ने जो उस समय के मुनि हुए हैं, बहुत से योग बताए हैं। योग का अर्थ है मिलाप अर्थात् परमात्मा से मिलाप। उन्होंने अलग–2 प्रकृति के आदमी के लिए बहुत सी क्रियाएं बताई हैं, जो इस समय में नहीं चल सकती। क्योंकि हर समय का धर्म अलग होता है। तो जितने ये योग बताए हैं आज मैं इसी के बारे में बताऊंगा कि कहां क्या–2 होता है? पहला हठयोग है अर्थात् परमात्मा से मिलने के लिए हठ करना, किसी चीज को प्राप्त करने के लिए हठ करना। जैसे बच्चा किसी चीज को पाने के लिए हठ करता है, रुठ जाता है, खाना नहीं खाता, रोना–पीटना शुरु कर देता है तो मां का मन पिघल जाता है और वह उसको वह चीज दे देती है तथा बात खत्म हो जाती है। इसी तरह से जो हठयोगी अपने शरीर को सुखाते हैं, दुःख देते हैं, तप करते हैं, एक पावं पर खड़े होते हैं, बर्फ में खड़े होते हैं तो वह परमात्मा से हठ करते हैं कि मुझे यह चीज़ मिले और उस हठ योग से परमात्मा इतना दयालु है, इतना रहमान है कि वह शरण में आए हुए भक्त को खुश कर देता है और उसको वह चीज़ प्राप्त हो जाती है। लेकिन वह यह चीज सहज में नहीं लेता, अपने कर्म के अनुसार नहीं लेता, मालिक की मर्जी पर नहीं रहता, वह तो हठ करके उस चीज को प्राप्त करता है। इस हठयोग से शरीर में शक्ति आ जाती है, अच्छा स्वास्थ्य हो जाता है और इच्छित वस्तु मिल जाती है लेकिन उसको आध्यात्मिक कोई लाभ नहीं हो सकता और वह परम शान्ति नहीं मिल सकती।

दूसरा योग प्राणायाम है, प्राणों का योग। यह भी पुराने समय का योग है और अब भी कुछ लोग करते हैं। इस योग के लिए पथप्रदर्शक की अत्यन्त आवश्यकता है ताकि जीव को किसी तरह की दिमाग की खराबी न हो और यह प्राणों का योग या साधन किसी का बन भी जाये तो उसमें विशेष सिद्धि यही होगी कि वह योगी अपनी

आयु बढ़ा सकता है और दूसरी बात वह चमत्कार दिखा सकता है कि अभी यहां बैठा है और साथ ही जो कलकत्ता, बम्बई में बैठे हैं, उनको भी नजर आ जाता है। इस तरह वह योगी पानी पर चल सकता है, आग पर चल सकता है और ऐसे चमत्कार दिखा सकता है कि जिसको देख कर लोग आश्चर्य करते हैं और लोगों में उसका बहुत मान–सम्मान हो जाता है। जैसे आप सुनते रहते हैं कि कोई महात्मा दस दिन के बाद गुफा से बाहर निकलता है। ऐसे महात्मा को सम्मान तो मिलता है, वह सिद्ध तो हो जाता है, लेकिन उसके पल्ले कुछ नहीं रहता। वह आपको शान्ति नहीं दे सकता, आपको निज घर नहीं पहुंचा सकता, क्योंकि उसकी यहां तक की सिद्धि है। तीसरा मानसिक योग है, जो लगभग सभी लोग करते हैं। मानसिक योगी किसी देवी, देवता या गुरु पीर पर मन एकाग्र करते हैं और मन एकाग्र होने से उसे सिद्धियां मिल जाती हैं तथा उसकी इच्छा शक्ति बढ़ जाती है और फिर वह संसार में बह जाता है। यानी जब तकलीफ हुई तो किसी देवी–देवता का ध्यान कर लिया, पाठ कर लिया, जाप आदि कर लिया और जब तकलीफ दूर हुई तो फिर दुनियां में रम गए। पहले दोनो योगियों से मानसिक योगी ठीक हैं, क्योंकि वह थोड़ी मन की खुशी, प्रसन्नता, सिद्धि प्राप्त कर लेता है और फिर दुनियां में आ जाता है। इस मानसिक योग में दो साधन हैं। एक तो भक्ति योग यानी किसी का सहारा लेना। भक्त सहज में अपने इष्ट के स्वरुप को बना लेता है और सिद्धियां प्राप्त कर लेता है। जैसे मीरा ने अपने आपको मन से कृष्ण कन्हैया के लिए समर्पण कर दिया और प्यार से उसे अपने अन्दर बसा लिया। यह भक्ति है और भक्त कहते हैं सहारा लेने वाले को। भक्त के लिये यह जरुरी नहीं कि भक्ति में ज्ञान विवेक भी हो, अन्धविश्वास की भक्ति भी हो सकती है। भक्त कुछ नहीं सोचता, न ही कोई चिन्ता करता है, बस सहारा ले लेता है। जैसे छोटा बच्चा डरता है तो वह मां का सहारा लेता है, तो वह मां का भक्त है। कोई किसी मित्रा से प्रेम करता है

और मुसीबत में उसका सहारा लेता है तो वह मित्रा का भक्त है। हम लोगों में जो भगवान् का सहारा लेता है, वह भक्त कहलाता है। वैसे हम सभी भक्त हैं। सहारा चाहते हैं। बिना सहारे जिन्दगी नहीं चलती। तो मानसिक योग में एक तो है भक्ति योग और दूसरा है प्रेम योग। जो महात्मा प्रेम में रहता है और सभी जीव–जन्तुओं से प्यार करता है तो यह प्रेम योग है। आपने ऐसे महात्माओं की कथा सुनी होगी कि एक महात्मा था। उसके पास शेर भी बैठे थे,हिरण भी बैठे थे तथा ओर प्राणी भी बैठे थे, यानी सभी जीव–जन्तु अपने विरोधी भाव को छोड़कर प्यार से उसके पास बैठे थे, तो वह महात्मा प्रेम का योगी है। जीव–जन्तुओं के साथ प्यार करता है और इसी तरह आप शिव को समाधि में बैठे देखते हो, जिनके सांप लिपटे रहते हैं। इसी तरह से बहुत से महात्मा जंगलों में रहते हैं और खुंखार जानवर भी उनके पास रहते हैं। कोई किसी का नुकसान नहीं करता, क्योंकि वह प्रेम करता है और ऐसे महात्माओं की स्थिति जब ऊंची हो जाती है तो उनका भाव यह बन जाता है कि –

जिधर देखता हूं उधर तू ही तू है।
हर शै में जलवा तेरा हूबहू है।

इसी तरह राजस्थान में गूगे बाबा के भक्त हैं, जो सांप को लिपटाए रखते हैं। वो सांप से डरते नहीं क्योंकि वो इसे बाबा की रस्सी मानते हैं। इसी प्रकार का मेरे गांव में एक गूगे का भक्त था, जो चलते हुए सांप को पकड़ लेता था। वह सांप उसे डंक मारता रहता था, लेकिन वह सांप से नफरत नहीं करता था और न ही उससे डरता था, क्योंकि वह उसे महाराज की रस्सी मानता था और प्रेम में था। तो मानसिक योग में दो योग हैं – भक्ति और प्रेम योग।

चौथा योग ज्ञान योग बताते हैं। गीता में ज्ञानी के बारे में कृष्ण ने कहा है कि वह मेरा साक्षात् रुप है। ज्ञानी महात्मा वो होते हैं जो अपने अन्दर प्रकाश का अनुभव करते रहते हैं, आत्मपद में रहते हैं। उनको सब चीज का अनुभव रहता है और वह जो जानना चाहते

हैं, जान लेते हैं। वह जो इच्छा करते हैं, पूरी हो जाती है। इस ज्ञान योग को सांख्य योग भी कहते हैं और ज्ञानी हमेशा ऐसा साधन करता है कि मैं नहीं देखता हूं, आंख देखती है। मैं नहीं खाता हूं, मुंह खाता है, मैं नहीं चलता हूं, पैर चलते हैं। यानी वह अपनी आत्मा को शरीर से अलग मानता है। लेकिन यह योग बहुत कठिन है। आम आदमी के वश की बात नहीं है। यह ज्ञान योग उन विशेष लोगों के लिए है, जो शरीर व मन से ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं। इस ब्रह्मचर्य के प्रताप से वो जगमग ज्योत, तरह–2 के लोक–लोकान्तर व प्रकाश में तैरते रहते हैं और आनन्द लेते रहते हैं। इनकी बुद्धि श्रेष्ठ रहती है और मन साफ रहता है। इनके चेहरे से नूर टपकता है और इन्हें देखने मात्रा से ही शान्ति मिलती है। अतः अन्य योगियों की अपेक्षा ज्ञानी का दर्जा ऊंचा है।

पांचवा आनन्द योग है। इसे नाद योग, अनहद योग, नाम योग भी कहा है। यानी इसके बहुत से नाम हैं, जिसे मैं अपने सत्संगों में बताता आया हूं। वह सबसे ऊंचा योग है। इसमें सुरत को शब्द के साथ मिलाना है। यानी शब्द ही ब्रह्म है। ये जो प्रकाश को उत्पन्न करता है, लोक–लोकान्तर बनाता है, ईश्वरों का ईश्वर यानी ये सब जितनी भी शक्तियां हैं, वो सब उससे शक्ति लेते हैं और यह सब खेल उसका है। यह आनन्द योग अत्यन्त सहज व आसान है। यह हमारे सन्तों का जो सन्त मत है – गुरु नानक, कबीर, रैदास ये सब उस नाम योग के अनुभवी हुए हैं। और आज जो हमारे डेरे धाम बने हैं, गुरु पीर हैं, वो सब शायद इसी का अनुसरण कर रहे हैं। तो यह आखिरी अवस्था का योग है और सबसे सूक्ष्म, आसान व हल्का फुल्का है। तो यहां जितने योग मैंने आपको बताये हैं इनमें पहले यहां बताते हैं – **''अनलहक कहै हक में पहुंचा, सोई चढै मन्सूर, दीवाने क्या गावे घर दूर''।**

शब्द में आगे कहा है – **''शेख फरीद कुंएमें अटके, गिरे तो चकनाचूर''** अर्थात् शेख फरीद उस परमात्मा से मिलने के लिए

किसी कुएं में जाकर उल्टे लटक गए और ऐसे लटके कि अगर छोड़ दे तो नीचे कुएं में गिर जायें। इसी तरह गोपीचन्द भरथरी ने उस मालिक को पाने के लिए अपने शरीर में राख रमा ली और राजा अलख बुखारी ने उस मालिक के लिए अपना राज–पाट, अपनी औरत व बच्चे सब छोड़ दिए। कहने का भाव यह है कि ये सभी हठयोगी हुए हैं।

आगे कहा है ––**''स्याही गई सफेदी आई, चलना है बड़ी दूर''** यानी आदमी का समय गुजर गया। उसके काले बाल सफेद हो गए और वह बूढ़ा हो गया, लेकिन नाम की प्राप्ति नहीं हुई। अर्थात् समय रहते तो मनुष्य चेतता नहीं और समय निकलने के बाद उसके हाथ कुछ आता नहीं। जैसे कबीर ने कहा है –

आच्छे दिन पाछे गए हरि से किया न हेत।
अब पछताए होत क्या जब चिड़िया चुग गई खेत।।

अन्त में कबीर साहब ने कहा है – ''हरदम हाजिर हजूर'' अर्थात् वह मालिक जिसको तू देखता फिर रहा है, जिसके लिए तू कठिन परिश्रम कर रहा है, शरीर को कष्ट दे रहा है, स्वांग निकाल रहा है, भगवां पहन रहा है, तीर्थो में जा रहा है, वह तेरे अंग संग है। लेकिन यह बात किसी समय के सतगुरु की संगत से समझ आती है। इसके बाद कुछ करना धरना नहीं है। मेरे साथ ऐसा ही हुआ। मैं उस मालिक को हरदम हाजिर देखता हूं। वह मेरे साथ हमेशा रहता है। न मैं कोई कर्मकाण्ड करता हूं, न कोई स्वांग करता हूं और न कोई मुझे देखकर यह कह सकता है कि यह साधु–महात्मा है। मैं तो साधारण आदमी हूं, साधारण गृहस्थी हूं। अर्थात् मेरी स्थिति कबीर के इस शब्दानुसार है –

सन्तों सहज समाधि भली।

1. **गुरु प्रताप भयो जा दिन से**
   सुरत न अन्त चली
   गृह उद्यान एक सम देखूं

   भाव मिटाऊं दूजा। सन्तो .....

2. **जहां–2 जाऊं करु परिक्रमा**
   खाऊं पीऊं सो पूजा
   जब सोऊं तब करुं दण्डवत्
   पूजूं और न देवा। सन्तो.....

3. **आंख न मूंदूं कान न रुंधूं**
   काया कष्ट ना धारुं
   खुले नयन से हंस–2 देखूं
   सुन्दर रुप निहारुं। सन्तो.....

4. **शब्द निरन्तर मनवा राता**
   मलिन वासना त्यागी
   उठत बैठत कबहूं न विसरे
   ऐसी ताड़ी लागी । सन्तो.....

5. **सुख–दुख से एक परे परम पद**
   तेहि सुख रहा समाई
   कहे कबीर यह उनमुन रहनी
   सो प्रगट कर गाई। सन्तो.....

तो आज के सत्संग में मैंने आपकी सेवा में योग के विषय में बताया है, जो भिन्न–2 प्रकृति व स्वभाव वाले लोगों के लिए भिन्न–2 प्रकार के योग साधन हैं। यह संस्कार और अधिकार की बात है। तो सबसे उत्तम योग वह है, जिसको आनन्द योग कहा है। साफ शब्दों में यह सुरत–शब्द योग है, जिसको पुरुष, स्त्री, जवान, बूढ़ा या किसी भी उम्र का आदमी कर सकता है। बस यहां पूरे गुरु की आवश्यकता है। गुरु कृपा से गुरु के बताए हुए तरीके से किसी भाग्यशाली को वह धार प्रकट हो जाती है, जिससे मस्ती, खुशी, बेफिकरी बनी रहती है। आज का सत्संग इतना ही काफी है। सबको राधास्वामी।

(12)

स्थान : दांदू

दिनांक : 12.5.98

शब्द – गुरु जी इतनी सी दया कर दो, हमको भी तुम्हारा प्यार मिले।
कुछ ओर भले ही मिले ना मिले, गुरु दर्शन का अधिकार मिले।।

राधास्वामी। प्यारे सत्संगी भाई–बहनो। अभी आपने डा0 कमला से यह शब्द सुना। यह भक्तों की अवस्था है। भक्त लोग जब इस चीज़ की तरफ चलते हैं तो केवल मालिक का दर्शन करना चाहते हैं लेकिन सबकी स्थिति ऐसी नहीं है। आप स्वयं अपने–2 मन में सोच कर देखें कि क्या आप सभी इसी काम के लिए आए हैं कि गुरु के अन्दर में दर्शन हो जाये, यानी हमारा इष्ट प्रकट हो जाये और हमारा मन ठहर जाये। हम तो इस दुनियां में काल कर्म के मारे हुए हैं, बेचैन हैं और मोह माया में ऐसे जकड़े हुए हैं कि हमें होश नहीं कि आखिर लेना क्या है? सत्संग में भी आते हैं तो सत्संग का महत्व नहीं समझते कि वहां से हमें क्या लाना है? अगर कोई बिना इच्छा के आता है तो उसे क्या लाभ हो सकता है? और यदि कोई दुनियां की तकलीफ, परेशानियां लेकर आता है तो वह मालिक इतना दयालु है कि उसकी वह इच्छा भी पूरी कर देता है, क्योंकि उसके घर में कोई कमी नहीं है। यह प्रार्थना तो उन भक्तों के लिए है जो निज घर जाना चाहते हैं, सदा रहने वाली शान्ति व परम आनन्द चाहते हैं। वैसे आनन्द तो हम यहां हर चीज में लेते हैं, क्योंकि आत्मा आनन्द स्वरुप है और जिसकी अनुभूति हमें होती रहती है – खाने में, पीने में, सोने में और इन्द्रियों के विषयों में। लेकिन यह आनन्द क्षणिक होता है और दुःख ज्यादा है। तो जिनको अन्तर में मालिक के दर्शन मिल जाते हैं, उनको इस लोक में किसी बात की कमी नहीं रहती, किसी चीज़ का अभाव नहीं रहता और परलोक में जाके जो कुछ प्राप्त करना है, वह इसी लोक में प्राप्त हो जाता है। जैसे हरियाणा के दिनोद गांव के सन्त महाराज कंवर सिंह जी का गाया हुआ एक

शब्द है – ''जिन पर सतगुरु हुए दयाल, वा घर काहे की कमी'' पूरा शब्द तो मुझे याद नहीं है, पर कहने का भाव यही है कि जिन पर मालिक की दया हो जाये, उनके यहां किसी चीज की कमी नहीं रहती। तो आज की इस प्रार्थना में उन भक्तों की पुकार है जो हमेशा के लिए अमर होना चाहते हैं व निज घर जाना चाहते हैं। बाकी लोग तो माया चाहते हैं, बेटा चाहते हैं, धन चाहते हैं, स्वास्थ्य चाहते हैं। लेकिन यह गलत नहीं है, क्योंकि यह मिलने पर ही हम आगे चलेंगे।

आगे कहा है – ''जिस जीवन में जीवन ही नहीं वह जीवन भी क्या जीवन है'' यानी जिस जिन्दगी के अन्दर जिन्दादिली नहीं, वह क्या जिन्दगी है। जैसे उर्दू शायरी है – ''जिन्दगी जिन्दादिली का नाम है, मुर्दे क्या खाक जिया करते हैं'' अर्थात् जिसके जीवन में उमंग नहीं, खुशी नहीं, कोई जबरदस्त चाह नहीं, कोई हौसला नहीं, वह जीवन तो मुर्दा दिल की तरह है ऐसे निराश आदमी की कोई जिन्दगी नहीं, क्योंकि आशा ही जीवन है और निराशा ही मृत्यु। तो गुरु के मिलने से आपको जीवन में आनन्द और खुशी का तरीका मिल जायेगा। इसीलिए कहा है – ''जीवन तब जीवन बनता है, जब जीवन का आधार मिले'' तो यह आधार कहां से मिलेगा? यह तो कोई जीवित पूर्ण अनुभवी महापुरुष हो, जो स्वयं उस आधार के साथ लगा हुआ हो। जब आप उसकी शरण में जाओगे, नेह लगाओगे, सेवा करोगे तो उसकी Radiation से, उसके दर्शन व सेवा से आपको लाभ होगा। आपको वह जीवन का आधार मिल जायेगा, जिससे आपका जीवन अति सुन्दर, उमंग, उत्साह व बेफिकरी का बन जायेगा। तो आदमी की जिन्दगी में प्यार व खुशी तभी रहती है, जब उसे कोई जीवन का आधार मिल जाये। जिसकी गृहस्थ की जिन्दगी व दुनियां की जिन्दगी बड़ी उमंग व खुशी की हो तो समझ लेना चाहिए कि उस को जीवन का आधार मिला हुआ है। वह कभी निराशा की बात नहीं करेगा। उसे देख कर, मिल कर खुशी मिलेगी। तो ऐसा महापुरुष जो खुद उस आधार के साथ लगा हुआ है, उमंग से भरा

हुआ है, वह आपको कोई टेढा–मेढा रास्ता न बताकर ऐसा सहज व सरल रास्ता बतायेगा, जो उसने खुद साधा हुआ है। वह आपको कोई इधर उधर की या शास्त्राों में लिखी बातें नहीं बतायेगा। यह तो कथाकारों का काम है। हालांकि गलत ये भी नहीं है, क्योंकि इनको सुनने से उसके संस्कार जागते हैं। परन्तु यदि पूरी उम्र ही कथा सुनते रहे और इस जीवन का आधार न देखा तो उससे कल्याण नहीं होगा। कल्याण तो आपका तभी होगा जब आपको इसी जिन्दगी में जीवन का आधार मिल जाये यानी ढंग मिल जाये, तरीका मिल जाये प्यार का, रहने का, साधन का।

आगे कहा है –''सब कुछ पाया इस जीवन में, बस एक तमन्ना बाकी है। हर प्रेम पुजारी को अपने मन मन्दिर में दातार मिले'' अर्थात् यह रास्ता उन लोगों के लिए है, जिनको इस जीवन में खाने का, पीने का, रहने का कोई अभाव नहीं है। दुनियावी किसी चीज का उन्हें कोई शौक नहीं है। सब भोग भोगें हुए हैं और यह समझ लिया है कि अति भोग रोग का घर है और जिन्हें निज घर जाने की चाह है। गीता में अर्जुन को भगवान कृष्ण ने कहा है कि हे अर्जुन। यह योग जो आज मैं तुम्हें देने जा रहा हूं। यह आदिकाल में मैंने अपने पुत्रा सूर्य को बताया था, सूर्य ने अपने पुत्रा मनु को बताया था और मनु के अपने पुत्रा इक्ष्वाकु को बताया था। यह ज्ञान अब लुप्त हो गया है। इसलिए आज मैं तुम्हें वही ज्ञान दे रहा हूं। यह योग राजऋषियों ने जाना है अर्थात् बड़े लोगों ने जिनको किसी चीज का अभाव नहीं था। तो यह ज्ञान उन लोगों के लिए ही है। सर्वसाधारण को तो अपनी दुनियां बनानी चाहिए। ''सब कुछ पाया इस जीवन में'' यहां यह बात विशेष है कि जिसकी दुनियां की जिन्दगी नहीं बनती और वह जब गुरु के पास जाता है तो गुरु उसको दुनियां बनाने का तरीका बताता है। सीधा यह नहीं कहता कि नाम ले ले और चलो सतलोक। यह तो पन्थ बढ़ाने की बात है। अरे भाई। तकलीफ तो है सिर में और पट्टी बांधी जा रही है पैर

में। जैसे आजकल हम महात्मा यही काम कर रहे हैं। चाहे जीव को इच्छा है या नहीं। हम तो हजारों की संख्या में उन्हें लाईन में बिठा देते हैं और उन्हें नाम दे देते हैं। अब उसे नाम की होश नहीं है और वह दुनियां के जाल से, दुःखों से दुखी है। अतः जीव को पहले सत्संग सुनाया जाये, उसमें नाम की भूख पैदा की जाये, उसे किसी भ्रम में न डाला जाये। तब तो यह ठीक है। इसलिए यह नाम उनके लिए है जो निज घर जाना चाहते हैं, जो प्रेम में मग्न हैं और जो इस चीज को जन्म–जन्मान्तरों से ढूंढते आ रहे हैं और जिन्हें यह विश्वास है कि गुरु की कृपा से ही यह काम हो सकता है। और जो यह कहा है –''प्रेम पुजारी के अपने मन–मन्दिर में दातार मिले'' यहां मन–मन्दिर में गुरु के नाम की, प्यार की व दर्शन की मांग की जा रही है, धुरध् ााम की बात नहीं है। क्योंकि भक्त को होश ही नहीं है कि शान्ति कहां मिलेगी? उसने गुरु को साकार रुप में माना हुआ है और त्रिाकुटी में उसके दर्शन करना चाहता है। यदि उसे गुरु स्वरुप से प्यार है, श्रद्धा और विश्वास है तो उसकी त्रिाकुटी बन जायेगी। माथे के बीच में प्रकाश या गुरु स्वरुप के प्रकट होने को त्रिाकुटी कहते हैं। यह सिद्धि का स्थान है और ज्ञान का भण्डार है। आध्यात्मिक शिक्षा–दीक्षा या दुनियां की शिक्षा यही से चलती है। जैसे वैज्ञानिक अकेले प्रयोगशाला में किसी लक्ष्य को सामने रखकर जब सोचता रहता है तो अनजाने में उसका ध्यान माथे के बीच में एकाग्र हो जाता है और उसे सहज में वह जो चाहता है उसका ज्ञान हो जाता है। अतः यह स्थान ज्ञान का केन्द्र है। यहां पर जीव जो कुछ जानना चाहता है, जान सकता है।

आगे कहा है ––''जिसने तुमसे जो कुछ मांगा, उसने है वही तुमसे पाया, दुनिया को मिले दुनिया लेकिन, भक्तों को तेरा दरबार मिले'' कहने का भाव यह है कि जो जीव सच्चे मन से उससे पुकार करता है, जो कुछ मांगता है, जो इच्छा करता है तो वह इतना दयालु है कि उसकी इच्छित वस्तु उसको बख्श देता है, उसके घर में कोई

कमी नहीं है। जैसे कहा है ––''नानक बख्शे बेपरवाह''। इसलिए कहा है कि हे मालिक। हे गुरु दाता। जिसने तुमसे जिस चीज की इच्छा रखी या पुकार की, उसने उसी चीज को सहज में तुमसे प्राप्त कर लिया। आगे भक्त कहता है कि 'दुनिया को भले ही दुनिया मिले' यानी जो दुनिया लेने जाते हैं, धन लेने जाते हैं, मान लेने जाते हैं, इज्जत लेने जाते हैं या दुनियां की अन्य वस्तुओं की इच्छा लेकर जाते हैं, उन्हें भले ही ये चीजें मिल जाए परन्तु मुझे तो आपका दरबार, आपका दर्शन ही प्राप्त हो, जिससे मुझे सुख–शान्ति मिले और मेरी जिन्दगी सुन्दर बन जाये। कहने का भाव यह है कि यहां अधिकतर लोग दुनिया से दुःखी हैं, काल–कर्म के मारे हुये हैं। इसलिए वे अधिकतर अपनी ही बात लेकर जाते हैं और किसी की बात को नहीं सुनते हैं जैसे – ''आर्त्त के मन रहे न चेतु, फिर–2 कहे अपना हेतु'' अर्थात् वे अपने ही दुःख को सामने रखते हैं और उसे ही गाते रहते हैं और इनमें से जो दुनियादार गुरुभक्तों के मुख से गुरु की महिमा सुन लेते हैं कि वह आदमी नहीं है, साक्षात् मालिक का स्वरुप है, तो इस संस्कार से जब वो दुनियां से, अपनी युक्ति से निराश होकर गुरु का सहारा ले लेते हैं तो उनकी इच्छाएं पूरी हो जाती हैं, लेकिन भक्त तो गुरु का द्वार, उसका दर्शन, उसकी सेवा ही चाहता है, जिससे उसे सदा रहने वाली शान्ति मिले।

आगे कहा है ––''हम जन्म–2 के प्यासे हैं और तुम करुणा के सागर हो, करुणानिधि से करुणा रस की एक बून्द हमें एक बार मिले''। यहां पर भक्त कह रहा है कि हे मालिक। हम उस शान्ति की इच्छा के लिए, आपके दर्शन के लिए, आपके दरबार के लिए कई जन्मों से प्यासे हैं। हमारी प्यास बुझी नहीं है। लेकिन यह प्यास बुझे कैसे? हम चाहते तो हैं परम शान्ति और शान्ति देखते हैं बेटे में, स्त्री में, जमाने में, खाने–पीने में, इन्द्रियों के भोग–विलासों में और दुनिया की ऐयाशी में। तो इनसे यह प्यास बुझने वाली नहीं है। अब वह पुकार करता है कि हे दयालु, हे करुणा के सागर। यदि आपके

करुण रस की मुझे एक छोटी सी बून्द भी मिल जाये, उसका रस मिल जाये तो मेरी जिन्दगी बन जाये। वह करुण रस क्या है? अन्दर से राम नाम की धार है, एक नाद है, एक शब्द है, सार शब्द है। यदि एक बार उसकी झलक मिल जाये, वह धार प्रकट हो जाये, वह द्वार खुल जाये, अन्तर में वह अनुभव हो जाये तो जीव अन्तरमुखी हो जाता है। लेकिन यह होता तभी है जब गुरु कृपा करके हमें नाम दान दे और उसका अनुभव कराये। वैसे बुद्धि मानती नहीं है। योगियों का जब यह द्वार खुल जाता है तो उन्हें अन्दर में रस आने लग जाता है और वे अन्तर में धंसते चले जाते हैं तथा उस धारा के साथ अपनी सुरत लगा लेते हैं। तो गुरु कृपा करके अपनी दया से उस अमी रस की धार को जीव के अन्दर चुआ देता है और जो गुरु से नाम का तरीका सीखे बिना ही साधन करते हैं तो उनके अन्दर विचारों का, माया का और काल का जाल चलता रहता है और वह अन्दर का रस उन्हें नसीब नहीं होता।

आगे कहा है – ''कब से प्रभु दर्शन पाने की हम आस लगाए बैठे हैं, पल दो पल भीतर आने की अनुमति अनुपम सरकार मिले'' यहां पर भक्त कहता है कि हम आज से नहीं जन्म–जन्मान्तरों से आस लगाए बैठे हैं, अपने निज घर जाने कि इच्छा कर रहे हैं, जिससे हमको सुख व शान्ति मिले, लेकिन हमारे कर्म का ऐसा जाल फैला हुआ है कि हम वहां पहुंच ही नहीं सकते। उस दरबार के अन्दर दाखिल नहीं हो सकते। क्योंकि हमें गुरु की होश ही नहीं है। हमारे अशुभ कर्म हमें गुरु धारण नहीं करने देते। एक तो हम प्रारब्ध कर्म लेकर आए हैं और दूसरा नए–2 कर्म का जाल बनाते रहते हैं। हम जो सोचते हैं, बोलते हैं, कहते हैं, वो नए कर्म बन जाते हैं और हम उन्हीं में उलझे रहते हैं। अतः वह प्रार्थना करता है कि हे मालिक आप हम पर ऐसी दया करे कि ज्यादा नहीं तो थोड़ी देर ही सही हमारा मन आपके ध्यान, सुमिरन, भजन में ठहर जाए। क्योंकि यदि यह मन एक बार भी ठहर जाता है और अन्दर का अनुभव हो जाता

है तो फिर यह अन्तरमुखी हो जाता है और मीरा जैसी स्थिति हो जाती है। ''म्हारे घट में सांवरिया थारो नाम, इब नहीं विसरै''। अतः यदि गुरु कृपा से दस मिनट भी यह अन्दर का साधन बन जाये तो आप पूरे दिन शेर बने रहोगे। कोई चिन्ता, फिकर, भय आप को नहीं रहेगा। और सिद्धियां आपके आगे–2 भागती रहेंगी, ऐसा कहा गया है।

आगे कहा है ––''इस मार्ग पर चलते –2 सदियां ही नहीं युग बीत गए, मिल जाए पथिक मंजिल अपनी, हमको जो तुम्हारा द्वार मिले'' अर्थात् हे मालिक ! इस मार्ग पर आपके दर्शन की इच्छा से, अपने निज घर जाने की इच्छा से कई युग बीत गए हैं। मैं युग–युगान्तरों से चला आ रहा हूं। अब आपसे यही प्रार्थना है कि मुझे आपके दरबार में आने का, आपके दर्शन का या नाम का अनुभव हो जाये। यह सब आपकी दया पर निर्भर है। यदि आपकी दृष्टि मुझ पर हो जाये, थोड़ा ध्यान मेरी तरफ हो जाये तो मेरा काम बन जाये और यह जीवन सफल हो जाये। तो इस ज्ञान के लिए कुछ करना धरना नहीं है। यह प्रेम का मार्ग है। तो यह बेटी डा0 कमला यहां आई हुई है। इसे अपने जिन घर जाने का, अमर होने का परम सुख व आनन्द पाने का शौक है और इसका मुझ पर विश्वास है तो आज के सत्संग में जो कुछ मैंने बताया, उसका सार आपने समझ लिया होगा। क्योंकि सत्संग करते समय मेरे पास ज्यादा संस्कृत के शब्द नहीं हैं। मैं विद्वान् नहीं हूं। असलियत यह है कि जब भक्त की यह निश्चयात्मिका बुद्धि बन जाती है कि उस मालिक के सिवाय कुछ है ही नहीं। सब खेल, सब आनन्द जो कुछ लोक–लोकान्तर में चल रहा है, वह सब उसकी दया का खेल है, तो वह किसी अनुभवी सतगुरु की शरण में जाए, उसके दर्शन करे, सेवा करे और वचन सुने, तभी उसके अन्दर का दरबार खुल जाता है और उसे परम शान्ति मिल सकती है।

राधास्वामी।

(13)

स्थान : दांदू

दिनांक : 13.5.98

शब्द – म्हारे जगे पूर्वले भाग री, पिया आन मिले फाल्गुन में

.....

राधास्वामी। प्यारे सत्संगी भाई–बहनों। अभी आपने डा0 कमला से यह शब्द सुना। शब्द से पहले इसने वन्दना गाई ''वन्दनम् सतज्ञान दाता, वन्दनम् सतज्ञानमय'' यानी सतगरु जो सच्चा ज्ञान देता है, उसके लिए यह वन्दना है। यह आत्मज्ञान पुस्तकों से व शास्त्राों से नहीं मिलेगा, यह तो सतगुरु की कृपा से ही प्राप्त होगा। ''वन्दनम् निर्वाण राता, वन्दनम् निर्वाणमय'' अर्थात् जो सतगुरु निर्वाण में मस्त रहता है या जीवित अवस्था में मुक्त है, उसे निर्वाण राता कहा है, उसे नमस्कार कीजिए। आगे कहा है –''भोग मुक्ति योग युक्ति, आपके अधीन सब'' यहां पर भक्त प्रार्थना करता है कि हे सतगुरु महाराज। हम अज्ञानी हैं, हम भक्ति नहीं जानते। अतः आप कृपा करके ऐसी भक्ति, ऐसी युक्ति बतायें, जिससे हमें इस संसार से छुटकारा मिले और हम स्वतन्त्रा हो जायें, तो सतगुरु भक्त को वह योग का तरीका बतायेगा, जिसको साधने से उसे वह मुक्ति या शान्ति मिली हुई है। यहां कुछ पढ़ने–लिखने की या शास्त्राों में सिर मारने की कोई जरुरत नहीं है, क्योंकि वह सतगुरु स्वयं उस रंग में रंगा हुआ है। अतः उसकी संगत से, दर्शन से, वचन सुनने से हमारे को सीधा रास्ता मिल जाता है। ''बच गया बहु दुख से, जो आया शरण में आपकी'' बहु दुख अर्थात् संसार के दुःख। इस संसार के दुःखों का कोई अन्दाजा नहीं, गिनती नहीं। केवल वही इस संसार के दुःख व परेशानियों से बच सकता है, जो आपकी शरण में आ जाता है, आपके वचन सुनता है व आपके कथनानुसार चलता है। ''आप गुरु सतगुरु दया प्रेम के भण्डार हैं, ''गुरु अर्थात् ज्ञान देने वाला और सतगुरु सत् में ठहरने वाला। तो वह सतगुरु अन्दर

सच्चाई को पकड़ने वाला, ज्ञान देने वाला तथा दया व प्रेम का भण्डार है। आगे कहा है ––''आप ही है सिन्ध सद्गति जीव जन्तु मीन सब'' यानी आपकी स्थिति समुद्र जैसी है। जैसे नदी–नाले सब समुद्र में जाकर समा जाते हैं , उसी तरह सब जीव–जन्तु आपके अन्दर आकर समा जाते हैं और जैसे मछली समुद्र में रहती है, उसी में तैरती है, उसी में खाती है, उसी में जीती है और उसी में मर जाती है, उसी प्रकार हे सतगुरु। आप सब जीवों के आधार हैं, कुल मालिक हैं। अब कुल मालिक तो किसी ने देखा नहीं सिवाय अनुभव के और वह अनुभव भी किसी विशेष–2 ने किया है। तो वह सतगुरु जिसको हम देखते हैं, जिसकी रहनी, जिसका जीवन व साधन अभ्यास देखते हैं, उसको साक्षात् कुल मालिक के रुप में मान लेते हैं। आगे कहा है ––''आप कर्त्ता धरता हैं, करतार जगदाधार सब'' अर्थात् सब कुछ करने वाले आप ही हैं, आपकी आज्ञा के बिना एक पत्ता भी नहीं हिल सकता और आप ही सारी सृष्टि के आधार हैं। ''आप ही के चरण कमल में सद्गति निर्वाण है'' अर्थात् आपके चरण कमल में आने से या सहारा लेने से जीव के अशुभ विचार हट जाते हैं और सुन्दर विचार बन जाते हैं। जिससे अन्त में उसे निर्वाण या मुक्ति मिल जाती है। अन्त में कहा है ''राधास्वामी भक्ति दीजे, राधास्वामी धाम दे'' यहां पर जो महापुरुष उस मालिक के साथ जुड़ा हुआ है, उसे राधास्वामी के नाम से सम्बोधित किया गया है। राधा–आत्मा और स्वामी–परमात्मा। तो जो आदमी आत्मा को, सुरत को अन्दर के शब्द ब्रह्म के साथ जोड़े रखता है, राधास्वामी मत में उस महापुरुष का नाम राधास्वामी कहा है। राधास्वामी कोई पंथ नहीं है। यह जीव की एक गति है, जिसको अजर, अमर गति कहा है। ऐसे पुरुष को हमेशा मस्ती, खुशी, बेफिकरी की अवस्था प्राप्त होती है। तो इस प्रार्थना के बारे में मोटे तौर पर मैंने बता दिया है, ताकि आपको कोई शंका न रहे। यह एक सत्संग है। सत्संग के अन्दर आपको कुछ शेष नहीं रहना चाहिए, किसी बात में शंका व भ्रम नहीं रहना चाहिए। जो कुछ गाया जाता

है, जो कुछ कहा जाता है, उसके विषय में आपको समझना है और समझ करके अन्दर चलना है। इसी का नाम यह सत्संग है।

आगे शब्द में बेटी कमला ने गाया है – म्हारे जगे पूर्वले भाग पिया आन मिले फाल्गुन में'' यहां पर भक्त का विशेष भाव है कि जन्म–जन्मान्तरों के मेरे कोई शुभ कर्म आगे आए हैं कि वह मालिके कुल मुझे सतगुरु के रुप में मिल गया है। फाल्गुन क्या है? जैसे इस लोक की सांसारिक जिन्दगी में भारत के कुछ भागों में, फाल्गुन के महीने में लोग अच्छा गाते हैं, बजाते हैं और हंसी–खुशी मनाते हैं, अतः फाल्गुन का महीना अच्छा माना गया है। तो उसी प्रकार जब मनुष्य का शरीर स्वस्थ है, उसके सब अंग काम कर रहे हैं, उसके मन में उमंग है, उत्साह है, तभी वह साधन–अभ्यास करके नाम का अनुभव कर सकता है। यानी सतगुरु हमें फाल्गुन में, जब हमारी तन्दरुस्ती ठीक थी, उस समय आकर मिले। यदि वह बिल्कुल आखिरी समय में मिले, जब जीव बीमार हो, बूढ़ा हो, चल–फिर न सकता हो तो उस वक्त वह पूरा लाभ नहीं उठा सकता। पिया का मतलब यहां मालिके कुल से है। जैसे बहन–बेटियों के लिए पिया उनका पति है और वे उसके आने पर खुशी मनाती हैं, अच्छा खाती हैं, पीती हैं और पहनती हैं उसी प्रकार भक्त सतगुरु की खुशी मनाता है, उसके दर्शन कर प्रसन्न हो जाता है?

आगे कहा है ––''पिया मेरे पाग रंगेगे रंग में, मैं भी चीर रंगूगी संग में'' भक्त कहता है कि जैसे फाल्गुन का रंग अर्थात् गाना–बजाना, खुशी देता है, उसी प्रकार गुरु मुझे नाम के रंग में रंग देंगे। और जो मेरा चीर यानी जो मन की चादर है, उसे मैं भगवान् की भक्ति में, विश्वास में, भजन–कीर्तन में लगा दूंगा। अभी तक तो यह गलत रास्ते पर व सांसारिक भोग–विलासों में लगा हुआ था, अब यह असली गुरु के रंग में रंग जायेगा। गुरु जी मुझे ज्ञान, ध्यान, शब्द वाणी, रहनी–सहनी कह करके, योग–अभ्यास करा करके सत्संग के रंग में रंग देंगे, भगवां कपड़े से नहीं। जिससे सोते– जागते,

खाते–पीते मेरा मन उसी रंग में रंग जायेगा। और फिर ''दोनों हो जा एक रंग में'' अर्थात् गुरु जी जिस भक्ति भाव, साधन– अभ्यास की अवस्था में रहते हैं, मैं भी उसी अवस्था में चला जाऊंगा। जिससे ''कोई धब्बा रहे न दाग री'' अर्थात् जैसे किसी कपड़े को रंग से रंगते हैं और उस पर ठीक रंग नहीं चढ़ता तो उसमें धब्बा रह जाता है, उसी तरह जो भक्त गुरु की संगत करता है और पूरी बात नहीं समझता तो उसमें धब्बा रह जाता है। और जो गुरु ने कहा है, मन उसी पर अमल करता है तो फिर किसी तरह का कोई दाग नहीं रहता। कहने का भाव यह है कि जो गुरु के आदेशानुसार उस मालिक के नाम में ही लगे रहते हैं, सुमिरन – ध्यान–भजन करते हैं वह अन्दर का अनुभव करते हैं तो वे उसी रंग में रंग जाते हैं अर्थात् उसी के बन जाते हैं।

आगे कहा है – ''इत्रा गुलाल ज्ञान की रोली, पिया मेरे फैंकें भर–2 झोली'' अर्थात् गुरु, भक्त को ऐसी ज्ञान की रोली देगा, ऐसी समझ व विवेक देगा, जिससे उसे अपने अन्तर में नाम का अनुभव हो जायेगा और वह अपनी हालत में ऐसा मस्त हो जायेगा कि सब लोग उसे प्यार करेंगे और देखना चाहेंगे। जैसे एक सुहागिन को रोली लगाने से आनन्द रहता है और उसे खुशी, मस्ती बनी रहती है। आगे कहा है – ''जागो ए मेरी संग की सहेली, सोवन के लगा दो आग री'' यहां पर गुरु भक्त कहता है कि मेरे प्यारे साथियों, प्रेमियों तुम जागो अर्थात् सचेत हो जाओ कि यह चार दिन की जिन्दगी है यहां सदा रहना नहीं है। अतः अपनी अज्ञानता को खत्म करो और उस मालिक को याद करो, ताकि तुम्हारी जिन्दगी सुन्दर बन जाए। तो जो आदमी जागता रहता है या सचेत रहता है, वह सुमिरन, ध्यान से मालिक को याद करता रहता है और जो सोया रहता है या अज्ञानता में रहता है वह मकड़ी के जाल की तरह दुनियां के चक्करों में ही उलझा रहता है जैसे मकड़ी अपना जाल बनाती है और जाल में ही फंसकर मर जाती है। इसी तरह हम लोग मकड़ी के जाले की

तरह अपने विचारों के जाल में ही उलझे रहते हैं। कोई घटियां विचारों में तो कोई बढ़िया विचारों में। इन विचारों को छोड़ने का नाम ही जागना या सावधान होना है। अतः आप लोग जागो और मालिक के नाम की भक्ति से अपना काम बनाओ और इस जिन्दगी को लाभदायक बनाओ। इसे व्यर्थ में नष्ट मत करो।

आगे कहा है ––''मृदंग ताल पखावड़ बाजे, गुरुमुख के मुख मुरली साजै, अनहद नाद गगन में बाजै'' अर्थात् जैसे फाल्गुन में लोग मृदंग, पखावड़, झांझ आदि तरह–2 के साज–बाज बजाते हैं और खुशी से नाचते हैं, उसी तरह गुरु से ज्ञान लेकर भक्त जब साधन करता है तो उसे अन्तर में तरह–2 के राग सुनाई पड़ते हैं। किसी को ओम् की ध्वनि सुनाई पड़ती है तो किसी को बादल की गड़गड़ाहट, किसी को मुरली की धुन सुनती है तो किसी को अनहद नाद। अनहद नाद वह नाद है, जो जीव को निज धाम तक ले जाता है। 'अनहद नाद गगन में बाजे' गगन का यहां अर्थ खोपड़ी है। अर्थात् जब गुरुमुख जो गुरु को माथे में रखता है, वह जब गुरु के बताए तरीके से आंख–कान–नाक तीन बन्ध लगाकर अन्दर में साधन करता है और जब उसकी एकाग्रता बन जाती है तो उसे खोपड़ी के अन्दर यह नाद सुनाई पड़ता है। यह चोटी तक का साधन है और इसी नाद के सहारे वह निज घर पहुंच जाता है। आगे कहा है ––''बाजे छत्तीसों राग री, सुन हो जा वैरागन में'' अर्थात् अन्दर की तरफ एक राग से ही जब जीव की सुरत जो स्थिर हो जाती है और आनन्द आता है, तो छत्तीस राग जहां बजते हैं, वहां अन्दाजा लगा लो कि कितना आनन्द आता होगा। लेकिन यह है किसके लिए, जिसे दुनिया से वैराग हो जाताहै। जिसकी दुनियां की तरफ सुरत झुकी हुई है और जिसे दुनियां से प्यार है, उसको यह अनुभव नहीं होगा अर्थात् अन्दर की तरफ जो शब्द होते हैं, जो नाम खुलता है, वह केवल वैराग में ही खुलता है, जिसको इन दुनियां की चीजों में कोई रुचि न रहे। राधास्वामी वाणी में इसके लिए कहा गया है –

विषयन से जो होए उदासा, परमार्थ की जा मन आशा।
धन सन्तान प्रीत नहीं जाके, जगत पदार्थ चाह नहीं ताके।
तन इन्द्री आसक्त नहीं होई, नींद भूख आलस जिन खोई।
विरह बाण जिन हृदय लागा, खोजत फिरे साध गुरु जागा।

अर्थात् जिसमें ये गुण हैं, वो इस राग को, अन्दर वाले नाम को पकड़ सकता है और अन्दर का अनुभव कर सकता है।

यहां वैराग का मतलब घर छोड़ने से नहीं है। पूर्ण अनुभवी गुरु कभी आपको घर छोड़ने के लिए नहीं कहेगा। वह तो यही कहेगा कि भाई। अपने घर में रहते हुए, रोजी रोटी कमाते हुए तू इस ज्ञान को प्राप्त कर। जैसे आपने सुना होगा कि गुरु कबीर एक साधारण जुलाहे थे और वह अपने हाथ से कपड़ा बुनते थे। उनकी छोटी सी गृहस्थी थी। वह चार आने का सूत लाते और उसे बुनकर एक रुपये में बेच आते थे। एक बार की बात है कि कबीर जी जब थान बेचने के लिए बाजार में जाकर बैठे तो किसी ने आकर पूछा – बाबा जी इस थान की क्या कीमत लोगे? कबीर ने कहा – भाई एक रुपया, तो आने वाला कहने लगा – एक रुपया तो ज्यादा है, आप बारह आने ले लो। कोई दूसरा आया वह बोला आठ आने ले लो। इस तरह कबीर उसकी कीमत एक रुपया बताते गए और किसी ने भी एक रुपये में वह थान नहीं लिया। तो सामने कोई कपड़े का व्यापारी बैठा था, जो जानता था कि बाबा जी बड़े सच्चे आदमी हैं। वह बाबा जी के पास जाकर कहने लगा कि ––बाबा जी। यह थान एक रुपये में मुझे दे दो, मैं इसे बेच देता हूं। और वह थान लेकर अपनी दुकान में जाकर बैठ गया। किसी ग्राहक के आने पर उसने इसकी कीमत सात रुपये बताई। आखिर मोल–तोल करने पर उसने वह थान पांच रुपये में बेच दिया। तब कबीरदास जी ने इसका अनुभव कर यह लिखा कि –

साचा कोई न पतिजिए, झूठा जग पतियाय।
एक रुपये का थान था, पांच रुपये में जाय।।

तो सन्त महात्मा यह काम बड़ी सच्चाई के साथ करते हैं।

और इस नाम को पकड़ने के लिए लोगों को जो वैराग होता है, उसके भी कई कारण होते हैं। कुछ सज्जन तो पूर्व जन्मों के संस्कार लेकर आते हैं। पूर्वजन्म में उन्होंने कमाई करी हुई होती है और जहां पर उनकी कमाई छूट जाती है या उनके शरीर का अन्त हो जाता है तो अगली कमाई उसकी आगे शुरु हो जाती है। उन लोगों को कुछ विशेष करने– धरने की जरुरत नहीं है। और कुछ लोगों को परमात्मा ऐसा धक्का देता है कि उनका इस दुनियां से मन हट जाता है और वे इस जिन्दगी को फीका समझते हैं अर्थात् किसी का भाई, किसी की औरत, किसी का पति जब धोखा दे जाता है तो उन्हें चोट लगती है और चोट लगने से उनको वैराग हो जाता है। तो यह वैराग किसी एक कारण से नहीं होता। जैसे आप शास्त्राों में देखते हैं कि महात्मा बुद्ध को यह वैराग दुनियां में किसी वृद्ध, रोगी व मृतक पुरुष को देखकर हुआ। गोपीचन्द भरथरी के वैराग का कोई ओर ही कारण था तथा शुकदेव को मां के पेट से ही वैराग था। अतः वैराग का तरीका एक नहीं है। लेकिन यह वैराग बड़े तरीके से करायेंगे और आपको संसार से भागने नहीं देंगे। जैसे यह डा0कमला है, जो मुझ पर विश्वास रखती है और मेरी शिष्या है। एक बार इसे किसी घरेलू मामले में पूछा नहीं गया तो यह बड़ी दुःखी हुई और इसे वैराग हो गया। कारण यह था कि यह कहीं बाहर गई हुई थी और पीछे से इससे बिना पूछे घरवालों ने इसकी छोटी बहन की शादी तय कर दी। जो शादी की तारीख थी, उसी दिन दिल्ली में दशहरे का सत्संग था, जिसमें यह जाना चाहती थी। जब इसे पता चला तो यह बहुत दुखी हुई और इसने मुझे पत्रा लिखा व टेलिफोन किया। मैंने इसे समझाया कि बेटे। वैराग का यह मतलब नहीं कि घर छोड़ दे। तूने बड़े सन्तों की संगत की है। अतः इस दुनियां में ऐसे रहना चाहिए जैसे गुरुनानक ने कहा है –

जैसे जल में कमल निरालम्, मुर्गाई निशानिये।

सुरत शब्द भवसागर तरिये, नानक नाम बखानिये।।

अर्थात् जिस तरह से पानी के अन्दर कमल का फूल होता है वह पानी जितना चढ़ता जाता है, उतना ही ऊपर चला जाता है और पानी में डूबता नहीं। तो तुम दुनियां में इस तरह रहो कि डूबो मत। तुम मालिक को माथे में रखते रहो और चलते–फिरते दुनियां में रहो। यह दुनियां समुद्र है, यह संसार सागर है। इसके अन्दर रहो लेकिन डूबो नहीं अर्थात् लोगों की बात सुनकर उसमें बहो मत और जैसे पानी में बतख अपने पर इकट्ठे करके दूसरी तरफ जाकर अपने पंख झड़का लेती है और उनको भीगने नहीं देती इसी तरह तुम दुनियां में सुमिरन, ध्यान करते रहो और इसे सत्य मत समझो, जिससे तुम संसार में डूब न सको। फिर संसार में रहने का तरीका बताया है कि तुम अपनी सुरत को अन्दर की तरफ जो राम नाम आता है, उसके साथ जोड़े रखो। इस तरह से तुम संसार सागर से तैर जाओगे और यह वैराग का सबसे ऊंचा तरीका है। तो सतगुरु जीव को ऐसा वैराग करा देते हैं तो संसार में रहते–2 उनका कल्याण हो जाता है।

आगे कहा है ––''फाल्गुन के दिन सुख से बीते, हम हारे, म्हारे सतगुरु जीते'' अर्थात् फाल्गुन क्या जवानी के अच्छे दिन खुशी के साथ बीत गए। अर्थात् हमने समय पर गुरु से ज्ञान ले लिया, जिससे हमारी जिन्दगी मस्ती–खुशी से बीत गई और हमारे आगे का रास्ता खुल गया। आगे कहा है ''हम हारे, म्हारे सतगुरु जीते'' अर्थात् सतगुरु ने हमे अपने रंग में रंग दिया और हमारी जो खाने–पीने की रहने–सहने की पुरानी आदतें थी, जिनसे हम दुखी होते थे, वह छुड़वा दी। अर्थात् गुरु ज्ञान से हमारी स्थिति ऊंची हो गई। फिर कहा – ''खेल चले हैं फाग री, के करै हंस कागन में'' अर्थात् हमने अपनी जिन्दगी का खेल अच्छा खेला है, जिससे मन पर कोई बोझ नहीं है। पहले हम कौवे थे, क्योंकि कभी हम अच्छे विचार रखते थे तो कभी बुरे। हमारी आदत दूसरों में कमजोरी देखने व चुगली–करने की थी। लेकिन गुरु ज्ञान से हमारे अन्दर हंस गति आ गई। अर्थात्

गुरु ने अपार कृपा करके हमें वह नामदान दिया, जिससे हमारा कल्याण हो गया।

तो आज का सत्संग जो मैंने आपको दिया, उसे आप ध्यान से समझ लीजिए। क्योंकि सत्संग का अर्थ है, बात को समझना, ताकि सत्संग समझ करके सत् जो आपके अन्दर है, उसका आप अच्छी तरह से संग कर सकें। यदि सत्संग में किसी प्रकार की शंका या भ्रम रह जायेगा, तो सत्संग आपका बनेगा नहीं और साधन के समय वह भ्रम या विचार आपके सामने आकर खड़ा हो जायेगा। इसलिए सत्संग में बैठ कर, गुरु महाराज जी के सामने टकटकी लगाकर देखते रहो और उनके वचन सुनते रहो। कोई शंका हो तो सत्संग खत्म होने के बाद नम्रता से शंका का समाधान करवाओ, तब जाकर आप अन्दर के शब्द के साथ संग कर सकेंगे। तो गुरु ज्ञान ऐसी चीज है, जिसके हो जाने पर आदमी के मन पर जो जन्म–जन्मान्तरों के घटिया संस्कार पड़े होते हैं, वह सब के सब धुल जाते हैं और बढ़िया व सुन्दर संस्कार बन जाते हैं, जिनसे वह मुक्त हो जाता है। इसलिए इस गुरु ज्ञान से जिन्दगी का जो फाल्गुन है, वह सुन्दर खेल चलो, ताकि तुम्हारी जिन्दगी सुन्दर, खुशी व मस्ती की बन जाए। आज का सत्संग काफी है। सबको राधास्वामी।

(14)

स्थान : दांदू
दिनांकः 13.5.98

शब्द – साधो, गुरु का रुप लखाऊं.....

राधास्वामी। प्यारे सत्संगी भाई–बहनो। अभी आपने डा0 कमला से गुरु कबीरदास जी का यह शब्द सुना। इस शब्द में कबीर ने साधुओं को सम्बोधित किया है। साधु वो जो सुमिरन ध्यान करते हैं, गुरु से नाम लेकर गुरु के नाम की कमाई करते हैं और अपने अन्दर के रास्ते से चलते रहते हैं, अनुभव करते हैं। तो गुरु कबीर

साधुओं के लिए यह कह रहे हैं, क्योंकि गुरु का रुप साधारण के लिए नहीं है। यह तो विशेष–2 आदमियों के लिए है, जो इसके अधिकारी हैं। यह सच है कि वह सुख– शान्ति सभी चाहते हैं, लेकिन काम करने के तरीके अलग–2 हैं। जिस तरह से कितने बच्चे स्कूल में पढ़ते हैं, उनमें डाक्टर, इजिनियर तो कोई गिनती के ही बनते हैं। तो क्या बाकी सब बेकार हैं। नहीं, अपनी–2 जगह सब काम करते हैं। जो जिस काम के योग्य हैं, वह वही काम करता है। कोई घटिया काम नहीं है। पर यह नकल करना कि वह अन्दर का साधन–अभ्यास करा जाये या अन्दर में वह गुरु का रुप देखा जाये, तो यह ठीक नहीं। यह ज्ञान तो उन लोगों के लिए है, जिन्होंने पूर्व जन्म में कोई शुभ कर्म किए हों और जिन्हें अन्दर में गुरु का रुप देखने की तड़फ हो। सर्वसाधारण के लिए तो यह तरीका है कि वह किसी महापुरुष को, जिस पर उसका विश्वास हो, मालिक का रुप मान ले, क्योंकि मालिक तो किसी ने देखा नहीं है। फिर उस रुप को वह माथे में रखता रहे, जब किसी चीज की जरुरत हो तो उस रुप के सामने प्रार्थना करता रहे व सत्संग सुनता रहे, जिससे वह आगे के लिए अधिकारी बन जाये, जिससे समय आने पर उसकी अन्दर के रुप को देखने वाली अवस्था बन जायेगी। तो कबीर ने यह शब्द उन लोगों के लिए कहा है जो निज घर जाना चाहते हैं, अमर रहना चाहते हैं और जो सदा रहने वाली शान्ति चाहते हैं। अन्य लोगों के लिए तो यही सही है कि वे सत्संग सुनते रहें, जिससे आज नहीं तो कल वे उस नाम के अधिकारी हो जायेंगे।

शब्द में आगे कहा है ––''सत् रज तम की हद के बाहर गुरु मूर्त्त दर्शाऊं'' सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण – ये तीन गुण हैं। सतोगुण– जिसमें परमात्मा के नाम की, भक्ति भाव की, उसके दर्शन की, प्रश्न की चर्चा की जाये। यानी सत् में रहने की जो अवस्था है, उस पर विचार किया जाए। रजोगुण – जिसके अन्दर तरह–2 के विचार उठे कि मेरा मकान बन जाए, मेरी दुकान बन जाए, मैं यह

करुं, वह करुं। यानी जो संकल्प–विकल्प हम संसारी लोग करते हैं, वह रजोगुण है। तमोगुण – जिसमें मन कुछ करना नहीं चाहता, आलस्य रहता है, नींद आती है, तरह–2 के घटिया विचार आते हैं तो यह तमोगुण है। ये तीनों गुण हर आदमी के अन्दर होते हैं। किसी में कम किसी में ज्यादा। तो गुरु कबीर कहते हैं कि मैं जो आपको गुरु का रुप दिखाऊंगा, वह सत–रज–तम इन तीनों विचारों की हद के बाहर है अर्थात् वहां पर संकल्प–विकल्प नहीं है। इन विचारों से आगे जहां पर विचार ठहर जायें, वहां पर गुरु की मूर्ति दर्शाता हूँ। पहले दर्जे की मूर्ति देखने वालों के लिए यह पहला दर्जा है कि गुरु का स्वरुप सामने आ जाता है। आगे का दूसरा तरीका है आत्म पद, फिर सुरत शब्द योग है।

फिर कहा है – ''निर्गुण सगुण देह नहीं जाके, अद्भुत भेद बतांऊ'' अर्थात् परमात्मा के दो रुप माने हैं – सगुण व निर्गुण। जो सगुण रुप से मनुष्य रुप में आए को मानता है, वह सगुण रुप है। आगे जो अन्दर का शब्द, प्रकाश वगैरा है, वह निर्गुण रुप है। आज कल अधिकतर लोग सगुण की भक्ति करते हैं। मूर्ति ले लेते हैं या मनुष्य रुप में आए हुए महापुरुष को गुरु रुप में धारण कर लेते हैं। उसकी भक्ति करते हैं और उसका सहारा लेते हैं और इसी पर ज्यादा जोर देते हैं कि सगुण रुप के बिना काम होता नहीं। निर्गुण रुप तो सदा ही अपने अन्दर जो तत्त्व हैं, वह हैं। जेसे यहां पर भक्ति के बारे में बताया गया है कि –

एक राम दशरथ का बेटा, एक राम घट–2 में बैठा।
एक राम का सकल पसारा, एक राम सभी से न्यारा।।

अर्थात् एक राम जो मनुष्य रुप में पैदा हुआ और जिसको हम साकार रुप में भगवान् मान कर पूजते हैं। उससे हम ज्ञान वगैरा लेते हैं। जैसे गुरु भक्ति में यह चलता है। ऐसे ही राम के भक्तों ने राम को माना है। कृष्ण के भक्तों ने कृष्ण को माना है और बुद्ध के भक्तों ने बुद्ध को माना है। अर्थात् उसको परमात्मा का रुप मान लिया।

'एक राम घट–2 में बैठा' अर्थात् दूसरा राम आपके घट के अन्दर वह आत्म–तत्त्व है। यह उस मालिक की तरफ से छोटी सी चिंगारी है, जो पूरे शरीर को इस तरह से क्रियात्मक रखती है कि उसी के बल पर आदमी चलता है, हवाई जहाज आदि चलाता है। तो यह अन्दर का आत्म राम है। 'एक राम का सकल पसारा' यह जो बाहर आप सूर्य देख रहे हैं, प्रकाश देख रहे हैं, चांद–तारा देख रहे हैं, यह सब उस जबरदस्त प्रकाश का खेल है। इसी से यह सब सृष्टि उत्पन्न होती है, इसी में खेलती है और इसी में समा जाती है। सब जगह जो भी ये लोक–लोकान्तर हैं, सब इसी का पसारा है। इस लोक में जो अन्न है, वह सूर्य के बिना उत्पन्न नहीं होता और अन्न से ही सब कुछ बनता है। अन्न से ही आदमी का मन बनता है, अन्न से ही आदमी शक्तिशाली बनता है और अन्न से ही उसका वीर्य बनता है। तो यह एक खेल उस प्रकाश का है, उस राम का है, जिसका यह सकल पसारा है। और वह आदमी के अन्दर है, जो आत्म–तत्व से मिलता–जुलता है। आत्म–तत्व एक छोटी सी चिंगारी है और वह विस्तृत रुप से प्रकाश का मण्डल है। फिर कहा ––''एक राम सभी से न्यारा'' अर्थात् वह राम अलग है। वह राम शब्द है, सतनाम है, जिसे योगी लोग अन्दर की तरफ अनुभव करते हैं। वह प्रकाश से आगे हैं और वह हर एक के अन्दर गूंजता है। उस शब्द के बिना कुछ होता ही नहीं है प्रकाश भी शब्द से ही पैदा होता है अर्थात् वह प्रकाश उत्पन्न करने वाला राम इस शब्द से ही प्रकाश लेता है। अतः यह सब जगह है और सबसे अलग है। तो यह राम सत–रज–तम की हद के बाहर है और न ही यह सगुण है, न ही निर्गुण। अर्थात् इसकी कोई देह नहीं, वजूद नहीं, जो देखा जा सके। इसका रुप गजब का है, इसको बयान नहीं किया जा सकता। इसको ब्यान करना इसकी तौहीन है। क्योंकि यह बुद्धि, जुबान और अक्ल से अलग विषय है। यानी न तो यह बुद्धि में आता है, न किसी की अक्ल के अन्दर रहता है और न कोई इसे जुबान पर ला सकता है। तो इसका खेल क्या

है? यह किसी अधिकारी के द्वारा अनुभव किया जा सकता है। तो प्यारे सत्संगी भाई–बहनो, जिसको बड़ा प्यार है, शौक है और जिसको बड़ी लग्न है कि मैं उसका अनुभव करुं, वह सतगुरु की शरण में जाए, उसके दर्शन करे, उसके वचन सुने और उस पर अमल करे, तब उसे यह लाभ हो सकता है। इसीलिए कबीर ने कहा है कि ''साधो गुरु का रुप लखांऊ, जो कोई आवे मेरी सभा में, गुरु का रुप लखांऊ'' अर्थात् जो कोई मेरे सत्संग में आयेगा, उसको मैं गुरु के स्वरुप का ज्ञान दूंगा, समझाऊंगा और दिखाऊंगा।

आगे कहा है –– ''हाड मांस नाड़ी नहीं जाके ताके रुप नवाऊं'' अर्थात् वह शरीरधारी नहीं है। इसलिए न तो उसके हाड मांस हैं और न ही वह जन्मता मरता है। ऐसे उस रुप को मैं आपको नमस्कार कराऊंगा और उसका सही रुप लखाऊंगा। जैसे सतगुरु की कृपा से वाल्मीकि जो लूटपाट करते थे, वह ब्रह्म के समान हो गए।

''उल्टा नाम जपत जग जानी, बाल्मीक हुए ब्रह्म समानी''।
कहां लग कहूं नाम प्रभुताई, राम न सकहि नाम गुण गाई।।

यहां पर उल्टे नाम का यह अर्थ है कि इस नाम में सुरत से उल्टा यानी ऊपर की तरफ चढ़ना पड़ता है।

आगे कहा है ––''सबका सबमें सबसे न्यारा, मरहम विचित्रा बताऊं'' अर्थात् वह मालिक सबका है और उसका स्वरुप सब में बैठा हुआ है। अगर वह नहीं रहे तो यह शरीर नहीं रहेगा और जो अन्दर से वह शब्द, वह राम–नाम आ रहा है, वह सबसे अलग है। 'मरहम विचित्रा बताऊ' अर्थात् यह भेद एक दिन में जानने की बात नहीं है। यह अवस्था एक दिन में बनने वाली नहीं है। जैसे कहा है – ''जल्दी करना शैतान का काम है''। हर चीज का समय होता है। फसल का समय होता है। हर फसल हर समय में नहीं होती। इसी तरह इस ज्ञान का तरीका है, ढंग है, समय है। जब मनुष्य इसकी तरफ चलता है तो परमात्मा देखता है कि यह योग्य बन गया है तो वह उसको बख्शीश कर देता है। क्योंकि अगर किसी को योग्यता से पहले कोई

चीज मिल जाए तो वह उसे हजम नहीं कर सकता। जैसे छोटे बच्चे को मां उसी हिसाब से खिलाती पिलाती है, जितना वह हजम कर सके। अगर वह ज्यादा खिलाएगी तो उसका पेट खराब हो जायेगा। इसी तरह से गुरु भक्तों के लिए है कि गुरु भक्ति के अन्दर का जो अनुभव है, उसके लिए जीव अधिकारी बनता है। सन्त दया करके उसको प्यार से धीरे–2 चलाते हैं, जिससे उसके दिमाग का, मन का सन्तुलन न बिगड़े। वह जीव को यह तरीका बताते हैं, कि अपनी दुनियां का जो प्रारब्ध लेकर आए हैं, उस कर्म को भोगते जायें और आगे के नए कर्म न बनाए यानी सब प्रकार के संकल्प–विकल्प छोड़कर उसकी मौज पर रहें। वह परमात्मा आत्म–तत्व के रुप में सबके अन्दर हैं और शब्द रुप में आगे हैं।

फिर कहा है ––''रुप अरुप स्वरुप अनूपा, निराकार ठहराऊं'' अर्थात् भक्त जब अपने इष्ट का प्रेम से सुमिरन ध्यान करने बैठता है तो उसके शरीर का ख्याल छूट जाता है और उसके मन में एकाग्रता आ जाती है। मन एकाग्र होते ही उसके सामने अपने इष्ट का स्वरुप आ जाता है। इसमें बड़ा अच्छा आनन्द है। अर्थात् यह त्रिकुटी का स्थान है और सब ज्ञान ध्यान यहीं से प्रकट होते हैं। यही से आगे चलने का रास्ता खुल जाता है और गुरु कृपा से उस मालिक का प्रकाश व शब्द रुप प्रकट होता है। तब उसका काम बन जाता है। आगे कहा है – ''राधास्वामी चरण शरण बलिहारी'' राधास्वामी मत में जो सुरत शब्द का साधन करता है, अन्दर की तरफ अपनी सुरत को उस धार के साथ लगाता है, राम नाम के साथ लगाता है, उस आदमी का नाम राधास्वामी है। वह राधा यानी आत्मा को स्वामी यानी परमात्मा के साथ मिलाता है। यहां चरण क्या है? साधन के समय अन्दर से जो जबरदस्त ज्योत आती है, वह गुरु के चरण हैं। जो प्यारा भक्त, साधक उस ज्योत का, प्रकाश का अनुभव अपने अन्दर करता रहता है, वह गुरु के चरणों तक पहुंचा हुआ है अर्थात् गुरु चरणों में पड़ा हुआ है। इस ध्यान से उसकी दुनियां बन जाती है।

इसलिए कबीर ने आम साधारण जीव के लिए यह नहीं कहा कि ''जो कोई आवे मेरी सभा में, गुरु का रुप लखाऊं'' क्योंकि साधारण लोग दुनियां के लिए जाते हैं। यह गुरु का रुप तो उन विशेष लोगों के लिए है, जो इसको देखना चाहते हैं और जो इसके अधिकारी हैं। अभी आप गुरु महिमा पर डा0 कमला से एक शब्द और सुनिए –

शब्द

मेरे सतगुरु परम दयाल, काग से हंस बनाते हैं।
लगा है गुरुओं का दरबार, भरा जहां भक्ति का भण्डार।
शब्द अनमोल सुनाते हैं कि मन का भ्रम मिटाते हैं
मेरे सतगुरु .....
गुरु जी दे रहे सत् का ज्ञान, वो रखते दीन–दुखियों का ध्यान
वो अमृत घोल पिलाते हैं कि मन की प्यास बुझाते हैं।
मेरे सतगुरु .....
गुरु जी लेते नहीं कुछ दाम, वो रखते दीन दुःखियों का मान।
वो अपना माल लुटाते हैं, खजाना खूब लुटाते हैं।
मेरे सतगुरु .....
कर लो गुरु चरणों का ध्यान, ये कर रहे भक्त तुमसे ब्यान।
वो सारे दुःख मिटाते हैं, कि भव से पार लगाते हैं।
मेरे सतगुरु .....

यहां बताया है कि गुरु क्या करता है? वह हमारे बुरे विचार छुड़ा कर अच्छे विचार बनाकर हंसगति दे देता है। जैसे शहद की मक्खी घरेलु मक्खी की तरह कभी गन्दगी पर नहीं बैठती। वह तो हमेशा फूल पर बैठती है और उसका रस ले लेती है। इसी प्रकार गुरु कृपा करके हमारे घटिया विचारों को हटा कर बढ़िया विचारों की कलम लगा देते हैं। उनके पास ज्ञान का भण्डार भरा पड़ा है। वह जीव को ऐसे अनमोल वचन कहते हैं, जिसकी कोई कीमत नहीं है। इससे उनके सब भ्रम, शंका मिट जाते हैं, और मन साफ हो जाता है। वह दुःखी जीवों को अपने गले लगाते हैं, उनको हौंसला देते हैं व

आशीर्वाद देते हैं जिससे उनकी जिन्दगी खुशी से भर जाए। वह जीव को सत्य और असत्य का भेद बताते हुए कहते हैं कि इस शरीर में जो यह बोलता है वह सत् और यह शरीर का ढांचा असत् है, जो नष्ट हो जाता है। फिर कहा है –''गुरु जी लेते नहीं कुछ दाम'' अर्थात् गुरु नाम भगवान् का है। वह देता है, कुछ लेता नहीं है। अगर लेता है तो वह भगवान नहीं, क्योंकि वह तो देने वाला है। यहां पर कहने का भाव यह है कि यदि ऐसे महापुरुष जो लोगों के पैसे अपने मन्दिर या आश्रम में सत्संगी की सुविधा के लिए लगा देते हैं, तो उन्हें कोई दोष नहीं। लेकिन अगर वो लोगों के पैसे का दुरुपयोग करते हैं, अपने ऐशो–आराम में लगाते हैं, तो यह घाटे की बात है। और आजकल ऐसे गुरुओं की भरमार है। वैसे गुरुओं को पैसे की जरुरत नहीं होनी चाहिए। वे ज्ञान देते हैं, जिससे पैसा सहज में आ जाता है और उस पैसे को यदि वे लोगों पर ही खर्च कर देते हैं तो उन्हें कोई दोष नहीं लगता। अगर कोई महात्मा चेले बनाने या पैसे लेने की इच्छा रखता है तो उसके वचन ज्यादा ऊँचे, स्वतन्त्रा या मुक्त नहीं हो सकते। यह तो कोई ऐसा निर्लेप महापुरुष ही हो सकता है, जिसमें किसी तरह की इच्छा या विचार न हो। ऐसे महापुरुष के वचन जीव पर सीधा प्रभाव डालते हैं। उसके यहां कोई भेद नहीं होता उसके लिए सब बराबर हैं, चाहे वह अमीर हो चाहे गरीब। तो आज का सत्संग, यदि इस पर अमल किया जाए तो इतना काफी है।

सबको राधास्वामी।

(15)

स्थान : दांदू
दिनांक : 14.5.98

वन्दना –

चरण शरण की वन्दना, नित कोई और न काम।
गुरु बसो चित्त आये मेरे, बख्श दो निज नाम।
तेरी शरणागात हुआ, अब राखूं किसकी आस।
आस तो मेरी दया की, जग से रहूं उदास।
रुप ध्याऊं नाम गाऊं, शब्द राता मन।
आठों याम तेरा ही सुमिरन, भाग्य मेरा धन।
शीश पर निज कर कमल धर, लिया चरण लगाये।
पतित पापी तर गया, गुरु शरण तेरी आये।
मुक्ति की नहीं चाह मन में, भक्ति प्यारी लाग।
राधास्वामी की दया से, भाग्य पूर्ण जाग।

राधास्वामी। प्यारे सत्संगी भाई–बहनो। अभी आपने डा0 कमला से गाई हुई यह प्रार्थना सुनी। यहां पर भक्त यह प्रार्थना करता है कि हे गुरु महाराज। आप हमेशा के लिए मेरे हृदय में आकर बस जाओ और मुझ पर ऐसी दया करो कि मैं आपको कभी न भूलूं और साथ ही मुझे वह नाम दे दो, जिससे मुझे परम शान्ति मिल जाये। यह नाम अन्तिम अनुभव है, जिससे जीव निज घर चला जाता है। शास्त्रों में इस नाम के बारे में बहुत कुछ लिखा है–

ध्यान प्रथम युग, मख युग दूजे, द्वापर प्रतोषित प्रभु पूजे।
कलि केवल एक नाम आधारा, श्रुति स्मृति वेद मत सारा।।

अर्थात् सतयुग में ध्यान करने से, त्रोता में यज्ञ दान आदि से और द्वापर में मूर्ति पूजा से परमात्मा मिलते थे। लेकिन कलियुग में तो केवल एक नाम का सहारा है, जो बहुत ही सरल व सहज है और इस नाम के लिए भक्त गुरु की शरण लेता है, उसके प्रति श्रद्वा व विश्वास रखता है। गुरु से दीक्षा लेकर वह उसके स्वरुप को माथे के बीच में

रखने की कोशिश करता है, लेकिन दुनियां के विचार उसे अपनी तरफ खींचते रहते हैं। वह बड़ा भाग्यशाली जीव है जो हर समय चलते–फिरते, खाते–पीते उस मालिक को याद रखता है। उस मालिक की शरण लेने पर बड़े से बड़ा जुल्म करने वाला भी पार हो जाता है। अतः जीव इस संसार के दुःखों से छूटने के लिए किसी जीवित महापुरुष को गुरु धारण करके, उसका सहारा लेता है और जब गुरु ज्ञान से बात समझ में आ जाती है तो वह अपने अन्तरमुखी बनता है और उसे अन्दर गुरु का रुप आ जाता है। उस समय उसने अन्दर के गुरु–स्वरुप का सहारा ले रखा है। साधन में थोड़ा सा और ऊपर चलने पर जब उसे प्रकाश प्रकट हो जाता है तो उसने उस आत्मपद या प्रकाश का सहारा ले रखा है और अगर अन्त में सुरत को शब्द के साथ लगा देता है तो यह आखिरी सहारा या अवस्था है। इस प्रकार महापुरुष इस संसार में जीवों के कल्याण के लिए काम करते हैं और उन्हें भेद बताकर अन्दर की तरफ लगा देते हैं। कहा है –

''घर में घर दिखलाय दे, सो सतगुरु पुरुष सुजान''

तो इस तरह का भाव इस प्रार्थना में बताया गया है अब आगे डा0 कमला से महर्षि शिवव्रत लाल जी का शब्द सुनिए –

उसकी हो जुस्तजू क्या, जो अपने रुबरु है।
ये जुस्तजू नहीं है, तौहीन जुस्तजू है
.....

तो अभी आपने दातादयाल जी का यह शब्द सुना। यह उर्दू शायरी है और थोड़े से इसमें फारसी उर्दू के शब्द हैं जुस्तजू कहते हैं – तलाश को। ''उसकी हो जुस्तजू क्या, जो अपने रुबरु है'' अर्थात् उसकी क्या खोज करते हो, जो अपने 'रुबरु' यानी हमेशा अपने पास है। यह मालिक की तलाश नहीं, अपितु उसका अपमान है। सन्त–महात्माओं ने यही एक बात विशेष निराली कही है कि मालिक जो है, वो तेरे से अलग नहीं। वह मालिक तो हरदम हाजिर हजूर

है। ऐ मालिक की तलाश करने वाले इन्सान ! वह तेरे अन्दर ही है। इसकी तलाश में कोई जंगलों में गया, कोई पहाड़ों में गया, कोई काशी गया तो कोई मथुरा गया और नए–2 तरीके जैसा किसी ने सुना, वैसा ही अपना लिए। यानी बिना गुरु के जीव ने बहुत धक्के खाए, लेकिन उसे सफलता नहीं मिली। इसलिए दाता दयाल जी फरमाते हैं कि वह मालिक तुम्हारे अन्दर बैठा है, तुम्हारे अंग संग है और तुम उसकी तलाश करते फिर रहे हो। यह उसकी तलाश नहीं, अपितु उसकी तौहीन है, अपमान है।

आगे कहते हैं – ''अन्धे बने हैं आबिद आंखें नहीं हैं खुलती, क्या ढूंढते हो उसको, जो अपने दुबदू है'' 'आबिद' कहते हैं 'पुजारी' को, जो केवल वाचक ज्ञानी होते हैं, पूजा–पाठ करते हैं, कर्मकांडी होते हैं। ''अन्धे बने हैं आबिद आंखें नहीं हैं खुलती'' अर्थात् जो पुजारी हैं, उसकी पूजा करने वाले हैं, कर्मकांडी हैं, वो अन्धे बने हुए हैं। उनकी आंख नहीं खुलती। जो अपने सामने हैं, उसकी क्या तलाश करते हो? वह तो हरदम साथ है।'' दायें हैं अपने बायें, इस जां और उस जां, जब आंख खुली तो देखा, वो अपने चार सू है'' अर्थात् वह मालिक अपने दायें भी है और बायें भी, यहां पर भी है और वहां पर भी है। यानी वो चारों तरफ फैला हुआ है। जैसे ईशोपनिषद में कहा है –– ''ईशा वास्यं इंद सर्व यकिचत् जगत्यां जगत'' अर्थात् इस संसार में जो कुछ भी जड़ चेतन है, वह उस मालिक से व्याप्त है। जब अन्दर की आंख अर्थात् तीसरा नेत्रा या ज्ञान चक्षु खुला तो देखा कि वह अपने चारों तरफ है। कोई जगह ऐसी नहीं, जो उससे खाली हो। कहते हैं कि एक बार गुरु नानक जी महाराज कहीं बसरा बगदाद चले गए और वहां जाकर वह किसी मस्जिद में आराम फरमा रहे थे वह मालिक के नाम में इतने चूर थे कि उन्होंने अपने पैर मक्का की तरफ कर दिए। यह देखकर वहां के भक्त बड़े नाराज हुए और उन्होंने नानक जी से कहा कि आप बड़े काफिर हैं जो अपने पैर मक्का की तरफ कर रखे हैं। नानक जी का ज्ञान चक्षु खुला हुआ था

और वे अपने चारों तरफ मालिक को देख रहे थे। उन्होंने कहा कि भाईयो। ऐसा करो कि जिस तरफ मक्का न हो, उस तरफ मेरे पैर कर दो। मुझे तो चारों तरफ मक्का ही मक्का नजर आ रहा है। जब भक्तों ने उनके पैर उठाकर दूसरी तरफ करे तो उन्हें वहां भी मक्का नजर आया। यानी वो जिस तरफ भी उनके पैर घुमाते, उधर ही उन्हें मक्का नजर आता। क्योंकि नानक जी फकीर थे और मालिक के ध्यान में लीन थे। हम तो वाचक ज्ञानी है, दुनियां के रीति रिवाजों में उलझे रहते हैं इसलिए हमको मालिक चारों तरफ नजर नहीं आता।

आगे कहते हैं कि ''क्या किलो ख्याल में है, क्या फर्जी हाल में है, जो है जुबां पे बैठा, क्या उसकी गुफ्तगू है।'' अर्थात् क्या वह मालिक वाद–विवाद में है या कल्पना में है? लोग मालिक के लिए वाद–विवाद करते हैं कि मालिक ऐसा नहीं ऐसा है और ज्ञानी लोग उसके लिए शास्त्रार्थ करते रहते हैं और कुछ लोग मूर्ति में उसकी कल्पना करके पूजा करते रहते हैं। तो कहा है कि आप उस मालिक की क्या चर्चा करते हो, वह तो हर आदमी की जुबान पर बैठा हुआ है। उसके बिना कुछ है ही नहीं। अगर वह जुबान पर न बैठे तो हमारी जुबान काम ही नहीं करेगी, बोलती बन्द हो जाएगी, आंख पर न बैठे तो नजर नहीं आएगा, पैर पर न बैठे तो चल नहीं सकेंगे। यानी वो सब जगह रोम–2 में रम रहा है। भाव यह है कि वो कहीं बाहर नहीं, हरदम हाजिर हजूर अन्दर है।

आगे कहते हैं ''दिलदार और दिलवर, दिलकश है दिलरुबा है, खुर्शिद ऊ अगर है, वह मेरा माहऊं है'' अर्थात् वह मालिक प्रेमी भी है और प्रेमिका भी। प्रेमी जो प्रेम करने वाला है उसमें भी वो है और जिससे वो प्रेम करता है (प्रेमिका), उसमें भी वो है और जिस पर दिल लगाया जाता है, उसमें भी वो है और जो दिल लगाते हैं, उसमें भी वो है। यानी वह सर्वव्यापक है। कहा है ––

''जिधर देखता हूं, उधर तू ही तू है।
हर शै में जलवा तेरा हूबहू है।।

अर्थात् जिधर देखो उधर मालिक ही मालिक है और हर चीज में उसी का नजारा है। लेकिन यह है उसी के लिए जिसका ज्ञान चक्षु खुल गया हो। आगे कहते हैं 'खुर्शिद ऊं अगर है, वह मेरा माहऊ है' खुर्शिद सूर्य को कहते हैं और माहऊं चांद को कहते हैं। अर्थात् वह मालिक सूर्य में भी है और चांद में भी है। कुछ लोग सूर्य रुप में उसे मानकर पूजते हैं तो कुछ उसे चांद में देखते हैं। तो यह सकल पसारा उसी का है।

फिर कहते हैं ––''वह दिल में खुद है कायम, दिलघर है जिसका दायम, दिल को सम्भल के देखा, वह दिल में मूल मू है'' अर्थात् वह मालिक दिल में खुद कायम या हाजिर है, लेकिन किसके? जिसके मन में यकीन है, विश्वास है और जिसके मन में स्थिरता है, लेकिन जिनका मन चंचल है, बाहर छलांगे लगाता है और जो दुनियां में उलझा हुआ है, उनको यह नजर नहीं आता। जब दिल को सम्भाल के देखा यानी जब अन्दर अनुभव किया तो वह दिल के अन्दर हाजिर है, मौजूद है। इसमें बड़ा जबरदस्त भाव भरा हुआ है और सन्त मत में भी यही कहते हैं कि ऐ इन्सान। तू क्यों दर बदर भटकता फिर रहा है? वह तेरे अन्दर है। लेकिन वह अन्दर तब तक नजर नहीं आता, जब तक किसी अनुभवी सतगुरु की शरण न ली जाए। वह सतगुरु ही कृपा करके ज्ञान देकर जीव को अन्दर का मालिक दर्शा सकता है।

आगे कहते हैं –– ''राधास्वामी की मेहर से कर सुगल जिकर सुलता, पहुंचेगा अपनी मसकिन, जहां तेरी जुस्तजू है'' अर्थात् जो पूर्ण अनुभवी महापुरुष है, वो मालिक को अपने अन्दर अनुभव करता रहता है। उसे ही राधास्वामी कहा है। वह अपने अन्दर ऊंचे दर्जे का सार शब्द का, सत् शब्द का अनुभव करता है आप उसकी शरण में जाओ, दण्डवत् प्रणाम करो और उसकी सेवा करो तभी वह दया करके आपको वह सुरत–शब्द योग सिखाएगा, जो उसने स्वयं साधा हुआ है। और आप उसकी मेहर से जहां आप जाना चाहते हैं,

जो आपकी इच्छा है, उसी मुकाम (स्थान) पर पहुंच जाओगे लेकिन यह सब अनुभव का विषय है, मुंह से उसकी व्याख्या नहीं की जा सकती और जो ये उस मालिक की चर्चा में रामायण, महाभारत, गीता आदि ग्रन्थ भरे पड़े हैं, वो गलत नहीं हैं। ये ग्रन्थ उस मालिक का अनुभव कराने में हमारे लिए प्रमाण स्वरुप हैं। कुछ महापुरुष समय के अनुसार आकर इसमें नई खोज कर जाते हैं। जैसे पण्डित फकीरचन्द जी महाराज ने इस युग के अन्दर नई खोज की और एक नई बात बताई कि भाई मुझे लोग जगह–2 देखते हैं और मुझे इसका ज्ञान नहीं होता। यह तो मन की एकाग्रता से उनको वह रुप भासता है, यह सत्य नहीं है। हालांकि यह चर्चा पहले के महापुरुषों ने भी की है लेकिन उन्होंने इस तरह नहीं कहा, जितना स्पष्ट प0 फकीरचन्द जी ने कहा है। जैसे यह चर्चा तुलसीदास जी ने की है –

''जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूर्त देखी तिन तैसी''।

अब इसे कोई समझने वाला अनुभवी समझ गया तो ठीक, नहीं तो नहीं। अर्थात् सैन–बैन का मामला है। जैसे कबीर जी कहते हैं –

सैन–बैन को जो लखे, तासू कहिए धाय।
सैन–बैन लखे नहीं, तासू कहे बलाय।

तो परम दयाल जी ने सैन–बैन नहीं किया, अपितु साफ शब्दों में लिखा है।

तो इस सत्संग में आपको कोई शंका नहीं रहनी चाहिए। इस शब्द में जीव को सचेत किया गया है कि तू क्यों दर–2 भटकता फिर रहा है? वह मालिक तो तेरे अन्दर ही है। लेकिन वह किसी अनुभवी सतपुरुष के बिना लखा नहीं जा सकता। जैसे पण्डित फकीरचन्द जी महाराज के संग से पहले ही दिन मुझे सुरत–शब्द का अनुभव हो गया था और उसको मैं आज तक करता आ रहा हूँ। यानी मेरे लिए वह मालिक हरदम हाजिर हजूर है। लेकिन मुझे कोई सींग पूछ नहीं लगा है और न ही सिद्धियों की तरफ मेरी कोई तवज्जह है। आजकल मेरी तबीयत ढीली चल रही है, लेकिन मुझे

इसका कोई दुःख नहीं। यह मेरा ही कोई अशुभ कर्म है, जिसको मैं भोग रहा हूं और सभी सन्त महात्मा भोगते रहे हैं। किसी ने इस बात को बता दिया और किसी ने इसे पर्दे में रखा। अरे, शरीरधारी को रोग लगेंगे और उसके अशुभ कर्म उसके सामने आयेंगे। चाहे वह सन्त हो या परमसन्त हो, उसको वह भोगना नहीं पड़ेगा। तो मैं उस सुरत–शब्द के साधन से इस बीमारी को मानता नहीं हूं और जब मैं अन्दर गोता लगा जाता हूं तो उसे भूल जाता हूं यह मेरी अवस्था है। मेरे अनुभव का सार यह है कि शरीर की असमता के लिए यानी शारीरिक रोग के लिए किसी डाक्टर या वैद्य से सलाह करके दवाई ली जाये और मन की बेचैनी, चिन्ता, फिकर, डर, भय के लिए किसी आध्यात्मिक अनुभवी पुरुष से योग सीखा जाए। आज का सत्संग इतना काफी है। सबको राधास्वामी।

(16)

स्थान : दांदू
तारीख :

शब्द – गुरु मोहे अपना रुप दिखाओ।
यह तो रुप धरा तुम सगुण, जीव उबार कराओ।

राधास्वामी – अभी आपने डा0 कमला से राधास्वामी वाणी का यह शब्द सुना। यहां पर भक्त जब गुरु धारण करके सत्संग सुनने लगा तो उसको होश आया कि गुरु का रुप आगे है। यह मनुष्य रुप में जो तू देख रहा है, इससे ज्ञान मिलना है अर्थात् जो मालिक मनुष्य के रुप में आता है और आकर मनुष्यों को ज्ञान देता है और जो उनसे ज्ञान लेकर उस पर अमल करते हैं, उनको इसी जिन्दगी में परम शान्ति व परम सुख मिल जाता है और जब गुरु यह देखता है कि जीव को दुनियां की हविश (चाह) है तो वह कृपा करके उसकी इच्छा शान्त कर देता है या जिस चीज की वह इच्छा करता

है, उसका कर्म भुगवा देता है अर्थात् जीव जो इच्छा करता है, वह उसका कर्म बन जाता है और वह उसको भोगना पड़ता है, चाहे उसमें सुख हो चाहे दुःख हो। गुरु के सहारे से, विश्वास से उसकी इच्छाएं तो पूरी हो जाती हैं, उसे जिन्दगी में सफलता मिलती है, सिद्धियां मिलती हैं, लेकिन उसे सदा रहने वाली शान्ति नहीं मिलती। इस जीव को यह होश नहीं है कि उसे यहां सदा नहीं रहना है। यह 60-70 साल का स्वप्न है। वह जो प्रारब्ध लेकर आता है, उसे वह भोगता है और जिस दिन यह कर्म समाप्त हो जाता है जिसको देना है, जिससे लेना है, जिसकी सेवा करनी है, जिस से करानी है, वह जिस दिन समाप्त हो जाती है, यह हंस चला जाता है। कोई निश्चित तारीख नहीं है। कोई बीस साल के लिए आता है, कोई चालीस साल के लिए तो कोई अस्सी साल के लिए आता है अर्थात् जब जीव के कर्म पूरे हो जाते हैं तो वह यहां से चला जाता है। इसके प्रमाण के लिए कई जीवित मिसाल देखने में आती हैं। परम दयाल जी कहा करते थे कि पंजाब का रहने वाला एक व्यक्ति हैदराबाद में ऑफिसर था। वह एक बार अपने गांव में छुट्टी पर आया हुआ था। एक दिन उसके पिता ने स्वप्न में आकर उससे कहा कि मेरी स्थिति खराब है और मैं उस स्थान पर उस आदमी के घर बैल की योनि में हूं। मुझसे उसका कर्जा चुकाया नहीं जाता अगर तुम मेरा यह कर्जा चुका दो और उसे इतनी कीमत दे दो तो मैं यह योनि भोग कर पार हो जाऊं और मेरा कल्याण हो जाए। सुबह के समय उस ऑफिसर के घर कोई नाई आया और उसने उस नाई से उस गांव के उस तेली के नाम के बारे में पूछा, जो उसके पिता ने रात को स्वप्न में बताया था। नाई ने उसे उस तेली के बारे में बताया और वह उस नाई के साथ वहां जाकर उस तेली से मिला और पूछा कि तुम इस बैल की क्या कीमत लोगे? तेली ने उसकी कीमत नौ रुपये बताई और यही कीमत उसके पिता ने स्वपन में बताई थी। उस ऑफिसर ने तेली को नौ रुपये दिये और उस बैल को लेकर चल पड़े रास्ते में बैल गिरा और

मर गया। यह इस जिन्दगी की कहानी है, शास्त्रों की नहीं। शास्त्रों में तो ऐसी बहुत सी बातें लिखी हैं। दूसरी मिसाल पण्डित फकीरचन्द जी कहते थे कि उनके चार–पांच लड़कियां थी। पहली लड़की की शादी में उन्होंने बहुत सोना दिया व काफी पैसे लगाए। दूसरी लड़की की शादी में कुछ कम लगाया। इस तरह से अलग–2 लड़कियों की शादी की और अलग–2 पैसा लगाया। एक बार उनकी छोटी लड़की की कुछ तबीयत खराब थी। उन्हें अनुभव था इसलिए उन्होंने अपनी पत्नी से कहा कि यह लड़की मुझसे तीन सौ रुपये मांगती है। अगर तुम कहो तो मैं इसे आज ही दे दूं, लेकिन फिर यह लड़की नहीं रहेगी। पत्नी ने मना कर दिया। वह लड़की बीमार हुई और उन्होंने उसे सौ रुपये दे दिए। थोड़े दिन बाद फिर सौ रुपये दे दिए अब सौ रुपये बाकी रह गए। एक दिन उनकी पत्नी कहने लगी कि लड़की की तबीयत ज्यादा खराब है, तो वह अपनी लड़की के पास गए और वह सौ रुपये दे दिये। जैसे ही सौ रुपये दिए, उसके दो–तीन दिन बाद वह लड़की अपने घर चली गई। कहने का भाव यह है कि हम यहां प्रारब्ध लेकर आते हैं और जिसके चुक जाते हैं, वो चला जाता है।

तो यहां शब्द में कहा है कि ''गुरु मोहे अपना रुप दिखाओ'' अर्थात् गुरु के बिना यह अन्दर वाला ज्ञान होने वाला नहीं है और वह मालिक समय–2 पर मनुष्य रुप में आता है और ज्ञान देता है। जैसे भगवान राम जब अवतार रुप में आए तो ऋषि मुनियों ने भीलनी शिवरी को बताया कि बेटी। राम आयेंगे, तुम्हें दर्शन देंगे और तुम्हारा इसी जन्म में कल्याण हो जायेगा। वह ऋषियों के आश्रम में सेवा करती थी और इच्छा रखती थी कि राम आयेंगे और मेरा कल्याण होगा। वह सेवा करते–2 बूढ़ी हो गई, लेकिन राम नहीं आए, फिर भी उसका विश्वास बना रहा कि ऋषि के वचन खाली नहीं जा सकते और अन्त में राम आए और उन्होंने भीलनी को दर्शन दिए। भीलनी ने राम के लिए बेर रखे हुए थे। वह बेर को चखती और जो बेर

मीठा होता उसे राम को दे देती तथा खट्टे को फैंक देती। यहां झूठन की बात नहीं है। यह प्रेम का मार्ग है, जब राम ने बेर खा लिए तो उन्होंने भीलनी को नवधा भक्ति बताई।

प्रथम भक्ति सन्तन कर संगा, दूजी रति मम कथा प्रसंगा।
गुरु पद पंकज सेवा तीसर भक्ति अमाना, मम गुणगान करहि तज कपट अभिमान।
मन्त्रा जाप मम दृढ विश्वासा, पंचम भक्ति भजन सो वेद प्रकाशा।
षष्ठ दम्भ, छल विरत बहु कर्मा, निरत मन्त्रा सज्जन धर्मा।
सम महिम जग देखा, मो ते सन्त अधिक करें लेखा।
यथा लाभ सन्तोषा, सपने नहीं देखे पर दोषा।
सरल सब सम छल हीना, मम भरोसे हिये हर्ष न दीना।

और यह नौ प्रकार की भक्ति बताकर जब भगवान् राम जाने लगे तो उन्होंने कहा–बहन। एक बात मेरी और सुनो ––

''मम दर्श फल परम अनूपा, जीव पावहिं निज सहज स्वरुपा''

अर्थात् हे शिवरी। जब मैं मनुष्य रुप में आता हूँ तो मेरे दर्शन अनुपम हैं, क्योंकि तब जीव को अपने स्वरुप का ज्ञान होता है कि मैं कहां से आया हूं और कहां जाऊंगा? यह ज्ञान तभी होगा जब मैं मनुष्य रुप में आता हूं। तो इससे यह बात स्पष्ट है कि मनुष्य का गुरु मनुष्य ही हो सकता है।

आगे कहा है ––**''रुप तुम्हारा अगम अपारा, सोई अब दर्शाओ''** अर्थात् गुरु का संग करने से जब जीव को होश आता है कि गुरु का यह सगुण रुप तो मुझे चिताने के लिए आया है। गुरु का रुप तो आगे है। अतः भक्त प्रार्थना करता है कि हे महाराज। आपका जो आन्तरिक व निज रुप है, वह मुझे दर्शाओ। ''देखूं रुप मग्न हो बैठूं, अभय दान दिलाओ'' अर्थात् आपके उस आन्तरिक स्वरुप को देखकर मुझ में मस्ती, खुशी आ जाए और मुझे कोई भय न व्यापे अर्थात् मालिक का वह स्वरुप देखने पर आदमी को अभयदान मिल जाता है और वह हर तरह से निर्भय हो जाता है।

जैसे मैं आपको कहता रहता हूं कि मैं हमेशा उस गुरु के रुप के साथ लगा रहता हूं और मुझे किसी तरह का भय, चिन्ता व डर नहीं है। कल की मैं कह नहीं सकता, क्योंकि वह मालिक बड़ा शक्तिशाली है। वह दो मिनट में आदमी को ऊपर चढ़ा सकता है और दो मिनट में धूल चटा सकता है जैसे नानक जी ने कहा है –**''नजरा पुट्ठी जे करे, सुल्ताना घास चराए जा''** अर्थात् अगर मालिक की नजर पुट्ठी (विपरीत) हो जाये तो वह आदमी को पता नहीं कहां गिरा देता है। इसलिए सन्त–महात्मा सब उसकी मौज पर रहते हैं, कोई अहंकार नहीं करते। क्योंकि ''तुमरी गत मित तुम ही जानी, नानक दास सदा कुर्बानी'' अर्थात् उस मालिक की मौज को कोई नहीं जानता।

आगे कहा है ––**''यह भी रुप प्यारा मो को, इसी से वो समझाओ''** यहां पर भक्त कहता है कि आपका यह मनुष्य रुप मुझे अति प्यारा लगता है और इसी से आप मुझे वह अन्दर वाला रुप समझाओ, यानी मुझे वह तरीका बतायें, जिससे मैं अपने अन्दर में रुप देख सकूं। तो रुप गुरु से ही समझा जा सकता है। फिर कहा – ''बिन इस रुप काज न होई, क्योंकर वो ही लखाओ'' अर्थात् आपके इस रुप के बिना वह काज होने वाला नहीं है। यानी गुरु के बिना वह अन्तर का अनुभव नहीं हो सकता। वह तो गुरु की कृपा से, गुरु के द्वारा बताए गए तरीके से भक्त के अन्दर वह स्वरुप प्रकट हो जाता है, जिससे भक्त को बड़ा आनन्द आता है और उसे बड़ी मस्ती खुशी मिलती है और वह समझता है कि मैं राम का, देवी का, अपने इष्ट का दर्शन कर रहा हूं। फिर गुरु उसे सचेत करता है कि यह स्वरुप सही नहीं है, यह तो मन बनाता है। अतः आप और आगे चलो और अगर यह साधन बिना गुरु के मार्गदर्शन से किया जाए तो उसे लाभ के स्थान पर हानि भी हो सकती है, क्योंकि इष्ट का स्वरुप आने पर भक्त की इच्छा शक्ति बढ़ जाती है और वह जैसा सोचता है, वैसा ही हो जाता है। अगर वह बुरा सोचेगा तो उसे नुकसान हो जायेगा। इसलिए इस ज्ञान की अत्यन्त आवश्यकता है। फिर भक्त

कहता है कि ''ता ते महिमा भारी इसकी, पर वह भी लखवाओ'' अर्थात् आपके इस रुप की बहुत बड़ी महिमा है। आप मनुष्य के रुप में गुरु अवतार धारण कर, लोगों को ज्ञान देकर उनका जीवन सुन्दर बना देते हो और उनका कल्याण कर देते हो। शास्त्रों में गुरु की बड़ी महिमा गाई है जैसे कहा है –

''गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवमहेश्वरः
गुरु साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवेनमः।।''

अर्थात् ऋषि–मुनियों ने सभी देवी देवताओं का ध्यान हटा कर केवल गुरु की पूजा बताई और कहा कि उसी के ध्यान से इन्सान की सब इच्छाएं इस लोक व परलोक की पूरी हो जाती हैं। इसी प्रकार गुरु कबीर साहब ने कहा कि –

गुरु गोबिन्द दोऊ खड़े, काके लागूं पांय।
बलिहारी गुरु देव की, जिन गोबिन्द दियो बताय।।

अर्थात् पहले जीव को पता नहीं था कि गोविन्द क्या है? अगर अन्दर मूर्ति प्रकट हो जाती थी तो वे उसी को भगवान् मान लेते थे, तो गुरु ने उसे चिताया कि भगवान् यह नहीं है, वह तो आपके अन्दर शब्द रुप में है। इसलिए गुरु का विशेष महत्व है।

आगे कहा है ––''वह तो रुप सदा तुम धारो, या ते जीव जगाओ'' अर्थात् आपका वह निराकार रुप तो हमेशा ही सब जगह है। आप हर जीव के अन्दर व हर पत्ते–2 में समाए हुए हो अर्थात् आप सर्वव्यापक हैं और यह जो मनुष्य रुप में जब आप आते हैं तो आप कृपा करके जीवों को चिताते हैं, जगाते हैं, समझाते हैं कि अरे भाई। तुम क्यों इस माया के पीछे फिर रहे हो? यह माया तुम्हारे साथ नहीं जायेगी। यह तुम्हारा घर नहीं है। यह तो एक छोटा सा स्वप्न है। घर तो तुम्हारा अलग है। इस तरह उन्हें मालिक की भक्ति की तरफ लगाते हैं।

आगे कहा है ––''यह तो भेद सुना मैं तुमसे, सुरत शब्द मार्ग नित गाओ'' अर्थात् हे गुरुदेव। आप जीवों को यह चेतावनी दे रहे

हो कि तुम सुरत शब्द योग सीखो और अपने निज घर चलो। सुरत यानी ध्यान और शब्द जो अन्दर राम नाम हो रहा है। यानी निज घर जाने के लिए, परम शान्ति पाने के लिए यही एक मार्ग है। आगे कहा है –– ''शब्द रुप जो रुप तुम्हारा, वा में भी अब सुरत पठाओ'' यहां पर भक्त प्रार्थना करता है कि आपका जो शब्द रुप है, उसके अन्दर मेरी सुरत को टिकाओ। यह सुरत टिकती नहीं है, क्योंकि संकल्प–विकल्प व अनेक नजारे सामने आते रहते हैं। अतः आप कृपा करके मुझे कोई ऐसा तरीका बताओ, जिससे मेरा यह मन ठहर जाये। आगे कहा है ––''डरता रहूं मौत और दुःख से, निर्भय कर अब मोहि छुड़ाओ'' अर्थात् जीव अज्ञानता में सोया हुआ है, उसे कल की खबर नहीं है कि तू चला जायेगा। उसे और तो मरते नजर आते हैं, लेकिन अपनी मौत नजर नहीं आती और वह काम, क्रोध, लोभ, मोह, झूठ, कपट आदि कार्यो में लीन है। इसलिए भक्त प्रार्थना करता है कि हे गुरु महाराज। मैं यहां मौत और दुःख से डरता रहूं अर्थात् इनके प्रति सचेत रहूं और कोई गलत काम न करुं। आप मुझे ज्ञान दो और अपने निज रुप का दर्शन कराओ, जिससे मेरा डर, भय, चिन्ता दूर हो और मैं मुक्त हो जाऊं। इस दुनियां में मौत और भय से वही डरता है, जिसको गुरु ने सचेत कर दिया है कि भाई। यह जिन्दगी छोटी सी है और उसका कोई भरोसा नहीं। इसलिए जो अच्छा काम करना है, वह आज ही कर ले। जैसे गुरु कबीर ने कहा है –

कल करे सो आज कर, आज करे सो अब।
पल में प्रलय होएगी, बहुरी करेगा कब।।

अर्थात् मेरा शरीर खत्म हो जायेगा और ''आप मरे जग प्रलय''। इसलिए आगे की बात मत कर।

आगे कहा है –– ''दीनदयाल जीव हितकारी, राधास्वामी काज बनाओ'' यहां प्रार्थना की जाती है कि हे दयालु। जीवों का हित करने वाले राधास्वामी। मेरा काज बनाओ। मुझे अपना रुप दिखाओ और मुझे परम शान्ति, परम सुख, परम आनन्द वाला ज्ञान

देने की कृपा करें, जिससे मैं इस लोक में मनुष्य जीवन का जो फल है, उसे सफल बना जाऊं। अब भक्त की प्रार्थना सुनकर गुरु उसे बताता है कि वह रुप क्या है? और वह कैसे नजर आएगा? उसे आप पहले शब्द रुप में डा0 कमला से सुनिये–

देख प्यारे मैं समझाऊ, रुप हमारा न्यारा।
वो तो रुप लखे न कोई, जब लग देऊं न सहारा।
करनी करो मार मन डालो, इन्द्री रोक द्वारा।
सुरत चढ़ाय गगन पर धाओ, सुन्न शिखर के पारा।
सत्त पुरुष का रुप दिखाऊं, अलख अगम दर सारा।
ताके आगे राधास्वामी, वह निज रुप हमारा।
धीरज धरो, करो सत्संगत, मेहर दया से लेओ सुधारा।
वह तो रुप दिखा कर छोड़ू, तुम जल्दी क्यों कर पुकारा।
तुम्हारी चिन्ता मैं मनधारी, तुम अचिन्त रह धरो प्यारा।
संशय छोड़ करो दृढ प्रीति, और परतीत संवारा।
यह करनी मैं आप कराऊं,और पहुचाऊं धुर दरबारा।
राधास्वामी कहत सुनाई, जब–2 जैसी मौज विचारा।।

यहां पर गुरु शिष्य को समझाते हुए कह रहे हैं कि मेरा यह मनुष्य शरीर वाला रुप नहीं है, यह तो तुम्हें ज्ञान देने के लिए रुप धारण किया है। मेरा रुप इससे अलग है और जो तुम साधन में त्रिाकुटी में मेरा स्वरुप देखते हो, वह भी मेरा वास्तविक रुप नहीं है, वह तो आपके ही मन की शक्ति से प्यार से बनाया गया रुप है। मेरा जो रुप है, वह अजर, अमर, अविनाशी है और मेरा वह रुप कोई तब तक नहीं लख सकता, जब तक मैं उसे उसकी प्रकृति के अनुसार सहारा न दूं। यह जो मन का जाल है, संकल्प –विकल्प है, यह खत्म नहीं हो सकते और जब तक संकल्प विकल्प समाप्त नहीं होते, सुरत आगे जा नहीं सकती। वह इनको छेद कर ही आगे जा सकती है और छेदने के लिए गुरु ही कृपा करता है। वह जीव को उसकी प्रकृति के अनुसार कोई ऐसा सहारा दे देता है, जिससे वह उस रुप का अनुभव

कर जाता है। तो गुरु जीव को उसकी प्रकृति के अनुसार किसी को अजपा जाप बताता है, किसी को ध्यान करना बताता है और किसी को सेवा करना बताता है और जो भक्त आगे जाना चाहता है उसे गुरु के कथनानुसार कार्य करना चाहिए और जहां तक मन मारने की बात है तो मेरे अनुभव में यह मन मरता मराता नहीं है। ''मन मरी न माया मरी, मर–2 गए शरीर''। हां गुरु कृपा करके इस मन के रुप को समझा देता है, जिससे जीव इस मन के पीछे नहीं दौड़ता। गुरु समझा देता है कि मन माया है, मोहिनी है। ''माया छाया एक सी भक्तों के पीछे चली'' अर्थात् माया छाया की तरह है। अगर आदमी आगे भागता है तो यह छाया उसके पीछे–2 भागती है और अगर वो छाया की तरफ भागता है तो यह सामने नहीं ठहरती। इसलिए ''मन के मते न चालिए, पलक–2 मन और'' इस तरह वह मन को वश में करने का तरीका बताते हैं और जीव यह समझ जाता है कि मन में जो तरंग उठती है, वह सच नहीं है यह उसी के शुभ–अशुभ कर्मो का फल है तो मेरी समझ में यह मन का मारना है और जब जीव को विवेक हो जाता है तो वह संकल्प विकल्प को छोड़ जाता है, जिससे उसकी सुरत सीधा प्रकाश व शब्द में जाकर ठहरती है। मन को वश में करने के उपाय बताने के साथ–2 गुरु जीव को यह चेतावनी भी देता है कि वह इन्द्रियों के विषयों को अधिक न भोगे। क्योंकि ये विषय भोग रोग है। जैसे अगर वह आंख से देखने का अधिक काम करेगा तो आंखों से दीखना कम हो जायेगा, कानों से करेगा तो कानों से बहरा हो जायेगा। खाने–पीने की तरफ अधिक ध्यान देगा तो उसका हाजमा बिगड़ जायेगा और उसे परेशानी होगी। इस तरह अधिक विषय भोगने से उसकी शक्ति नष्ट हो जायेगी और उसके पास रोग के सिवाय कुछ नहीं रहेगा। उसका स्वभाव चिड़चिड़ा हो जायेगा और उसे बात–2 पर गुस्सा आएगा।

जब भक्त गुरु ज्ञान से अपनी इन्द्रियों व मन के वेग को रोक लेता है तो गुरु उसे समझाता है कि अब अपनी सुरत को इकट्ठा

करके चोटी की तरफ यानी माथे से ऊपर सुन्न की तरफ चलो। सुन्न एक स्थान है, जो त्रिकुटी के बाद आता है। यहां पर साधन करने वाले साधुओं को बिना अफीम के नशा सा बना रहता है और बेफिकरी बनी रहती है। इससे थोड़ा ऊपर महासुन्न का स्थान है, जहां पर मन बिल्कुल खत्म हो जाता है। इसलिए कहा है ––''सुरत चढ़ा गगन पर धाओ, सुन्न शिखर के द्वारा'' अर्थात् सुरत अब मन को छोड़कर मन से ऊपर चली जाती है। अगर कोई योगी मन के अन्दर रहेगा तो वह उस रुप को नहीं समझ सकता और न ही उसकी सुरत ऊपर चढ़ेगी। महासुन्न से ऊपर जब सुरत जाती है तो वह भंवर है, जहां पर तेज रंग का प्रकाश है और उससे आगे वह शब्द रुप है जो जीव का निज मुकाम है। उसे ही अलख, अगम और अनाम कहा है अर्थात् उसे लखा नहीं जा सकता और न ही उसका कोई नाम है। वह तो अनुभव किया जा सकता है। और अन्त में जब सुरत शब्द को सुनती–2 उसमें लय हो जाती है और अपना वजूद (अस्तित्व) खो देती है तो यह राधास्वामी स्थिति कही गई है।

अब गुरु से ज्ञान लेने के बाद जब जीव उस रुप को देखने की जल्दी करता है तो गुरु उसे समझाते हैं कि आप धैर्य व शान्ति रखो, यह एक दिन का काम नहीं है। आप सत्संग सुनते रहो और उसकी दया पर भरोसा रखकर साधन करते जाओ। वह रुप तुम्हें अवश्य नजर आयेगा। यदि तुमने मेरा सहारा ही ले लिया है तो तुम्हारी चिन्ता मुझे है। तुम्हें चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं है और फिर भी तुम चिन्ता करते हो तो तुमने पूरा सहारा नहीं लिया है। तुम अपने मन में किसी प्रकार की शंका व भ्रम मत रखो। तुम तो बस पूरी तरह से शरणागत होकर गुरु के प्रति दृढ़ विश्वास व प्रेम रखो। यदि आप यह सब शर्त पूरी कर लेते हो तो मैं तुम्हें उस धुर धाम में पहुंचा दूंगा जहां से पुनः उत्थान नहीं होता और वह स्थान परम शान्ति व सुख का है। लेकिन यह सब उसकी मौज पर छोड़ दो। जब वह तुम्हारे हित में इसे समझेगा तो तुम्हारा कल्याण हो जायेगा।

तो आज के सत्संग में मैंने अपने अनुभव के अनुसार टूटे–फूटे शब्दों में इस शब्द की व्याख्या की। लेकिन यह जरुरी नहीं है कि जो मेरा अनुभव है, वह सही है। इसके साथ ही सत्संग समाप्त करता हूं। सबको राधास्वामी।

(17)

स्थान : दांदू
दिनांक : 17.5.98

गुरु स्तुति

गुरु चरण कमल में शीश झुका, दिन रात करुं पूजा सेवा।
गुरु स्तुति नित करुं मन से, गुरु सम कोई ओर नहीं दूजा
गुरुदेव दयाल ने की जो दया,भवसिन्धु से पार किया मुझको।
नहीं वार रहा नहीं पार रहा,सब भांति अपार किया मुझको
गुरु दाता दानी अपार महा, याचक जग जीव हुए सारे
गुरु अर्थ देत गुरु धर्म देत, गुरु काम मोक्ष देने हारे
गुरु महिमा जाने न ऋषि मुनि शिव शारद शेष की पार नहीं
संसार असार की प्रीति छूटी, गुरु भक्ति सम कुछ सार नहीं।
बहु व्रत किए, बहु दान दिए, बहु तीर्थ में जाकर भटके
गुरु चरण कमल से प्रीति नहीं, यमजाल में सो जिस दिन लटके।

राधास्वामी। प्यारे सत्संगी भाई–बहनो। अभी आपने डा0 कमला के द्वारा गाई गई यह प्रार्थना सुनी। इस प्रार्थना में गुरु की स्तुति, गुरु की बड़ाई की गई है। गुरु नाम परमात्मा का है और उससे हमें जो प्राप्त होता है, वह ज्ञान है, समझ है, विवेक है, अनुभव है। यह सब कुछ मुझे गुरु कृपा से प्राप्त हुआ और जिन्दगी में मैं किसी प्रकार की कमी महसूस नहीं करता हूँ। यह संसार एक सागर है। इसके अन्दर कोई जीव सुखी नहीं रह सकता। थोड़ी देर के लिए खुशी होती है तो गम ज्यादा। दूसरा आदमी अपने मन के

विचारों से अधिक दुःखी है। उसके मन में तरह–2 की तरंग व विचार उठते रहते हैं। यह मन अड़ियल घोड़े की तरह जीव को इधर–उधर भटकाता रहता है। तो गुरु ने मुझ पर ऐसी कृपा की, मुझे भवसिन्धु से ऐसा पार किया कि उन्होंने मुझे वो बात बता दी, वो भजन या नाम बता दिया, जिसके लिए लोग दिन रात तरसते हैं, यत्न करते हैं और अन्दर ठहरने की कोशिश करते हैं। गुरु कृपा से मेरी जिन्दगी इतनी हल्की–फुल्की व सहज में गुजर गई कि न मुझे घरवालों से कोई शिकायत रही और न घरवालों को मुझ से कोई शिकायत रही। यानी जिन्दगी प्रेम–प्यार से गुजर गई। नौकरी में रहा तो यार–दोस्तों के साथ आनन्द लेता रहा। बड़े–2 ऑफिसर चिन्ता, फिकर भूलने के लिए नशा करते थे, शराब पीते थे, लेकिन मैं तो वो अन्दर वाली शराब पीता था, मस्ती में रहता था और उनके साथ बातों का आनन्द लेता था। यानी जहां भी जाता था, मस्ती खुशी की बातों से आनन्द लेता था। यह दुनिया लेन–देन का व्यवहार है। जो देता है, वो लेता है। हम सब यहां पर याचक हैं और वह गुरु दातार है, देने वाला है। इसलिए कहा है ''गुरु अर्थ देत गुरु धर्म देत गुरु काम मोक्ष देने हारा'' अर्थात् मनुष्य के ये चार पुरुषार्थ हैं – एक तो उसके पास अर्थ (धन) होना चाहिए, क्योंकि बिना अर्थ के यह जिन्दगी नहीं। दूसरा धर्म यानी खुशी, यदि आप खुश नहीं हैं तो रुपये किसके क्या काम आयेंगे? तीसरी है कामना, इच्छा जो मन में उत्पन्न होती हैं। काम केवल स्त्री–पुरुष के संग को ही नहीं कहा है, अपितु जितनी मन की इच्छा है, वह काम है। जैसे कबीर ने कहा है –

काम–2 सब कहें, काम न चिन्हे कोई।
जेति मन की कल्पना, काम कहावे सोई।।

चौथा है मोक्ष। यानी सब प्रकार के विचारों से छुटकारा। जीवन्मुक्त अवस्था। तो गुरु अपने भक्तों को यह सब कुछ देता है। जैसे मैं अपने बारे में बताता हूं कि गुरु कृपा से मेरी अर्थ सम्बन्धी सभी इच्छायें पूरी हो गई, सरकारी नौकरी मिल गई, जूनियर कमीशन मिल

गया। गांव का आदमी था। इतने से बहुत सन्तुष्ट था। बड़े–2 ऑफिसर, सेठ इस पैसे के लिए न जाने क्या–2 काम कर जाते हैं, यानी उनकी भूख जाती नहीं। लेकिन गुरु कृपा से मेरी यह धन की भूख जाती रही और मैं सन्तुष्ट हो गया। मेरे लिए मिट्टी व सोना एक हो गया और धर्म, गुरु ने यह दिया कि यह जिन्दगी हंसते खेलते गुजर गई। घर में आया तो घर वाले मुझसे खुश और सेना में गया तो यार दोस्त मुझसे खुश रहते थे। यानी मैंने इस जिन्दगी का रस लिया है और बड़ा लच्छेदार जीवन बिताया है। लोग दुनियां में परेशान रहते हैं, लेकिन मुझे दुनियां की कोई शिकायत नहीं और जीवन में किसी तरह की कोई कामना शेष नहीं रही। यानी सब तरह से सन्तुष्ट हूं। मोक्ष यह है कि आखिरी संन्यास अवस्था में हूँ। जितने ख्यालात हैं, विचार हैं, कुछ भासते नहीं हैं। बस मस्ती, खुशी, बेफिकरी बनी रहती है। तो गुरु कृपा से मुझे यह सब कुछ मिला। कल की वह जाने। तो ऐसे गुरु की क्या महिमा गाई जाये? अर्थात् भगवान् की महिमा कौन गा सकता है? जैसे कहा है ––''खुदा की खुदाई खुदा ही जाने'' यानी ईश्वर की गति वो ही जाने,यह जीव के वश की बात नहीं है और प्रार्थना में जो यह गाया है ''बहु व्रत किए, बहु दान दिए, बहु तीर्थ में जाकर भटके'' अर्थात् लोगों ने इस राम नाम को पाने के लिए हो सकता है बहुत यत्न किए हों, लेकिन मेरा यह अनुभव नहीं है। मैंने कोई व्रत, नियम, तप नहीं किया अर्थात् मुझे कोई कष्ट नहीं उठाना पड़ा। मैं तो सहज में गया और गुरु कृपा से 10-15 मिनट में मुझे वह अमूल्य वस्तु मिल गई, जिसके सहारे आज तक यह जीवन मस्ती, खुशी से गुजरता आ रहा है और अब ऐसी अवस्था में रहता हूं कि चलते–फिरते, खाते–पीते मुझे कुछ करना नहीं पड़ता । जैसे –

सहजे ही धुन होत है, हरदम घट के माही।
सुरत शब्द मेला भया, मुंह की हाजत नाही।।

अब आगे डा0 कमला से कबीर जी का शब्द सुनिए–

शब्द – ऐसी रे दुनिया हुई रे दीवानी, भक्ति भाव नहीं बुझे जी ।
साचे का कोई ग्राहक नाहीं, झूठे जगत पतीजे जी।

.....

यहां पर कबीर जी कहते हैं कि यह दुनियां बड़ी दीवानी है, मुझसे भक्ति भाव यानी सुख शान्ति की बात नहीं पूछती। भक्ति कहते हैं सहारे को। मालिक का सहारा लेना ही ऊंची भक्ति है। वैसे तो भक्त हम सभी हैं। किसी को धन का सहारा है, किसी को पति–पत्नी का, किसी को बच्चों का तो किसी को हाट, हवेली, मकान, दुकान का सहारा है। लेकिन यह सब सहारे बाहर के हैं। यह जिस दृष्टि से बात कही गई है, वह मालिक का सहारा लेने की बात है। तो कबीर जी कहते हैं कि यहां सत्संग में लोग दुनिया के दुःखों से परेशान होकर आते हैं और कहते हैं कि हे महाराज मेरा यह काम नहीं होता, मेरा वह काम नहीं होता। यानी इस दुनियां में कोई खुश तो है नहीं। किसी को किसी चीज का अभाव है तो किसी को किसी चीज का अभाव है। तो वे सांसारिक इच्छाएं लेकर आते हैं। कोई सन्तान मांगता है, कोई धन मांगता है, कोई दुःख से बरी होना चाहता है, कोई मुकदमें में फंसा हुआ है तो किसी को काया का रोग है। क्या ऐसा होता है? हां मेरे साथ यह बीतती है। मैं तो कोई गुरुवायी करना नहीं चाहता था। लेकिन मेरे गुरु जी ने कहा था कि तुम अपना अनुभव जरुरतमन्द लोगों को बताना। इसलिए मैं जगह–2 सत्संग कराने चला जाता हूँ, जहां पर कई गुरुओं के शिष्य मेरे पास आते हैं और यही बातें मेरे सामने आती हैं। बूढ़े तोते हो जाते हैं, 50-60 साल के, फिर भी कोई इच्छा रखते हैं और कहते हैं कि हे महाराज। हमें प्रसाद दो। हमारे पास और तो सब कुछ है, केवल एक पुत्रा रत्न का अभाव है। यानी लोगों ने समस्याओं का जाल बिछा रखा है और वो उसी जाल के अन्दर उलझे हुए आते हैं। चाहे वे आर्थिक संकट में हैं, चाहे शारीरिक संकट में हैं और चाहे मन के संकट में हैं और आते ही अपनी समस्या आगे रख देते हैं और कोई भक्ति भाव,

सुख शान्ति वाली बात नहीं करते और अगर करते हैं तो ऊपर–2 की करते हैं कि महाराज ! आजकल हमको रुप नजर नहीं आता। कोई कहता है मुझे प्रकाश नहीं आता, क्योंकि ये सब सत्संगों में सुनी हुई बाते हैं और हम महात्मा लोग भी आम आदमी के सामने खूब भाषण करते हैं कि प्रकाश है, शब्द हैं, जबकि उनको उसकी जरुरत नहीं हैं। तो उन लोगों ने समझ लिया और वो कहानी कह देते हैं। लेकिन असली तकलीफ उन्हें संसार की है और वो अपनी बात सामने रख देते हैं और कहना भी चाहिए, क्योंकि जीव जिस चीज से दुःखी है, वो दुःख ही तो गुरु के पास लेकर जायेगा और अगर उसका वह दुःख न मिटे तो किसका भक्ति भाव? किसका राम रमैया? इसलिए कबीर ने कहा है –''साचे का कोई गाहक नाहीं, झूठे जग पतीजे जी'' तो जो कोई भी आता है, आम दौलत की बात करता है और हम महात्मा लोग खेल करते हैं? उसमें मैं भी शामिल हूं। जब मैं जाता हूं और मेरे पास कोई बच्चों की, ब्याह–शादी की, मकान की या धन के अभाव की समस्या लेकर आता है तो मैं भी यही कह देता हूँ कि लाओ भाई, तुम रुपया लाओ, मैं प्रसाद बना देता हूं, तुम्हें अभाव नहीं रहेगा। यह कहने की बात नहीं है और न ही कहनी चाहिए क्योंकि बड़े–2 महात्मा लोग यदि ऐसा कहेंगे तो लोग उन्हें जीने नहीं देंगे। मेरे पास कोई बड़ी संगत होती नहीं और मैं उनके विचारों के अनुसार खेल करता रहता हूं क्योंकि मेरे को रहस्य का पता चल गया। मैं तो सभी को बेटा देता हूं, बेटी नहीं और दूसरी बात, अगर वो लाभ होगा तो उसके अपने विश्वास से होगा, उसकी श्रद्धा से होगा। मैं कोई लाभ देने वाला नहीं हूं। न मेरे में कोई सिद्धि है। अगर किसी का विश्वास होता है तो उनका काम हो जाता है और जब वह मुझसे दोबारा मिलते हैं तो मेरा गुणगान करते हैं कि आपकी कृपा से हमारा यह काम हो गया। यानी काम तो उनके विश्वास से होता है और श्रेय मुझे मिल जाता है। यह तो वही बात है कि 'अहमद की टोपी मोहम्मद के सिर'' और मैं उसकी तरफ ध्यान नहीं देता क्योंकि मैं कुछ करता

नहीं हूं और वह झूठे ही खुश होते हैं। इसीलिए कबीर ने कहा है कि ''साचे का कोई गाहक नाही, झूठे जग पतीजे जी''। मेरे गुरु पण्डित फकीरचन्द महाराज जी भी ऐसा ही करते थे। उनके पास जब कोई दुःखी आता था तो वे कहते थे कि मेरी फोटो ले जा और मेरा ध्यान कर लिया कर, काम हो जायेगा। तो जीव चला जाता और जब दोबारा मिलता तो खुश होता कि महाराज जी आपकी कृपा से मेरा वह काम हो गया। तो वह उत्तर देते हां, ठीक है ठीक है भई, बहुत अच्छा। और अगर कोई शिकायत करता कि महाराज। आपने प्रसाद दिया और मेरा यह काम नहीं हुआ तो वह कहते कि क्या मेरा ध्यान बना? वह कहता महाराज। ध्यान तो नहीं बना। तो वह पंजाबी में कहते हैं कि मैं कि करां? यानी तुम्हारा विश्वास ही नहीं तो गुरु क्या करेगा? विश्वास होता तो ध्यान बन जाता और तुम्हारा काम हो जाता। यही बात मेरे साथ होती है। मैं उनका विश्वास देखता हूं तो आशावादी विचार दे देता हूं और कह देता हूं कि प्रसाद ले जाओ, तुम्हारा काम हो जायेगा तो मैं उनको झूठी बात कह देता हूं। जबकि मुझे पता नहीं कि उनका काम होगा या नहीं। मैं जानता हूं कि अगर उनका विश्वास होगा तो काम हो जायेगा। कहा भी है 'विश्वासम् फलदायकम्' लेकिन नीयत मेरी यह है कि इस काम के लिए मैं दुनियां को पीछे नहीं लगाना चाहता और न ही किसी से कोई पैसे लेना चाहता हूं।

तो इस शब्द में कबीर जी का कहने का भाव यही है कि यह दुनियां झूठी है। यहां सच्चाई का कोई गाहक नहीं है, क्योंकि सच्चाई, वह राम नाम, भजन सुमिरन, जिसको लेकर जीव को परम शान्ति व परम सुख मिलना है, वो तो कोई पूछने के लिए आता नहीं। सभी अपना–2 स्वार्थ लेकर आते हैं और झूठी बातों से प्रसन्न होते हैं। अगर किसी गुरु में यह शक्ति होती तो वह खुद ही धनवान बन जाता। कबीर जी की क्या स्थिति थी? जुलाहा थे। सूत लाकर ताना बुनते थे और उसे बेचकर अपनी गृहस्थी चलाते थे। लेकिन

उनके पास वह राम नाम का धन था, जिससे वह सन्तुष्ट थे और अपनी मस्ती की अवस्था में थे और यही राम नाम की मस्ती वह लोगों को देना चाहते थे, लेकिन उन्होंने देखा कि दुनियां इसकी गाहक नहीं है, तभी उन्होंने यह शब्द कहा है। आज का सत्संग इतना काफी है। सबको राधास्वामी।

(18)

स्थान : दांदू
दिनांक : 17.8.98

शब्द – खुल गया मोक्ष द्वारा, म्हारे गुरु ने बाण शब्द का मारा जी

.....

राधास्वामी। प्यारे सत्संगी भाई बहनो। पहले आपने डा0 कमला से राधास्वामी की प्रार्थना सुनी और उसके बाद यह कबीर जी का शब्द सुना। तो अब सत्संग शुरु होता है, ध्यान से सुनना। सत्संग में जो मतलब की चीज हो, उसे गांठ बांधकर ले जाना और बाकी यहीं छोड़ जाना। प्रार्थना में प्रभु की इच्छा यानी मालिक की मौज पर रहने की बात है। इसके लिए सीधा तरीका यही है कि तू मालिक का नाम जपता रह और उसकी शरणागत हो जा। जैसे राधास्वामी योग में कहा है कि –

गुरु की मौज रहो तुम यार, गुरु की रजा संभालो यार,
दुःख सुख देंगे हिम्मत न हार।

लेकिन जहां रहनी का सम्बन्ध है, मन महा चंचल है, मौज पर रहता नहीं है। मौज को छोड़कर अपनी मौज चाहता है कि जैसे मैं कहता हूं, वैसे हो जाये और यह मार्ग शरणागत का है कि जो तू करे, वहीं मेरे लिए प्यारा है। जैसे नानक जी ने कहा है –**''तेरा भाणा मीठा लागे, नाम पदार्थ नानक मांगे''** अर्थात् जो वो करता है, अच्छा करता है। लेकिन यह होता नहीं है। जैसे हम महात्मा लोग ये भाषण तो करते हैं, लेकिन हमारी खुद की स्थिति हल्की है, यानी रहनी नहीं

है। जैसे कहा है ––''औरों को नसीहत, आप मिया फजीयत'' तो यह रहनी वालों का मार्ग है, जो खुद ऐसा रहता है। उसकी संगत, उसके दर्शन, उसके वचन से सीधा गोली की तरह असर होता है। मेरी जिन्दगी रहनी की बनी, लेकिन मैं यह नहीं कह सकता कि मैं सौ प्रतिशत साधू या महात्मा बन गया हूं। हां अस्सी–पिचासी प्रतिशत मैं इस रहनी में रहता हूं। शरणागत की अवस्था के लिए सन्तों का सहज साधन यह है कि ''हथ कार वल, दिल यार वल'' यानी उनका ध्यान तो हर समय मालिक की तरफ रहता है और हाथ काम की तरफ। इसी तरह भक्त को मन ही मन गुरु का नाम जैसा गुरु ने बताया है वह सुमरना चाहिए और हाथ से जो काम करे, वो गुरु की सेवा समझ कर करनी चाहिए लेकिन यदि हम कोई आशा लेकर, फल की इच्छा लेकर काम करते हैं तो बन्ध जाते हैं और उसका फल भोगते हैं और जो मुक्त होना चाहते हैं, सदा रहने वाली शान्ति चाहते हैं, उनके लिए तो यही तरीका है कि वो काम करता जाए और फल के लिए उसकी मौज पर रहे, यानी जो हो जाए अच्छा, न हो जाए अच्छा। यही गीता का समत्व बुद्धि योग है। इसलिए यह चेतावनी दी गई है कि काम रस को त्याग कर नाम रस को लो। वैसे काम रस में विशेष आनन्द है, लेकिन यह क्षणिक है और जीव इसमें ऐसा फंसता है कि निकल ही नहीं सकता। जैसे स्त्री, पुरुष क्षण भर के लिए काम अंग में जाते हैं। जबरदस्त आनन्द आया और फिर मान लो कोई सन्तान उत्पन्न हो गई तो पूरी जिन्दगी उसके जाल में फंस गए तो काम के अन्दर सुरत नीचे चली जाती है, जो दुःख का कारण है और वही सुरत जब नाम के अन्दर, माथे में खोपड़ी के अन्दर सूक्ष्म अवस्था में पहुंच जाती है तो जीव के अन्दर मस्ती,खुशी आनन्द बना रहता है। जैसे सन्तों ने कहा है–

जहां काम तहां नाम नहीं, जहां नाम तहां नहीं काम।
रवि रजनी दोऊं ना मिले, एक ठोड़ एक ठाम।।

इसलिए एक मालिक का भरोसा रखो और आशा रखो कि वह जो

करेगा, मेरे हित में करेगा, क्योंकि दुनियां की आशा में, दुनियां के प्यार में जगह–2 धोखे के सिवाय और कुछ है ही नहीं। जैसे आप हर रोज देखते हो कि मां बच्चे को कितनी उम्मीद से पालती है, उसके मैले कुचैले कपड़े धोती है, नहलाती है, खिलाती है, पहनाती है कि उसका बेटा बड़ा होकर उसके लिए यह करेगा, वह करेगा और वह बड़ा होकर मां–बाप के एहसान को भूल जाता है, यानी धोखा दे जाता है। इसलिए कहा है कि केवल एक मालिक से नाता रखने पर उसे दुःख नहीं आयेगा और उसकी जिन्दगी का सफर आसानी से गुजरता जायेगा और ज्यों–2 बुढ़ापा आता जायेगा, त्यों–2 शान्ति, खुशी व बेफिकरी उसे मिलती जायेगी। मैं इस बात का प्रमाण हूं। मेरे परिवार है, बाल–बच्चे हैं, घर–गृहस्थी सब कुछ है। मेरी 80-85% अवस्था कुछ और है, यानी उस मालिक के सिवाय और किसी से नाता नहीं है और मैं अपनी हालत में मस्त, खुश व बेफिकर हूं। तो डा0 कमला ने यह प्रार्थना गाई और उसका भाव यही है कि मालिक को हमेशा याद रखो और उसकी मौज पर रहो। इससे तुम्हारा जीवन सुन्दर बन जायेगा।

इस प्रार्थना के बाद डा0 कमला ने जो कबीर का शब्द गाया –''खुल गया मोक्ष द्वारा, म्हारे गुरु ने बाण शब्द का मारा जी'' है, उसमें यही बताया है कि मोक्ष का द्वार केवल उन्हीं का खुलता है, जो गुरु के बताए तरीके से उस नाम का सुमिरन भजन करता है। कुछ गुरु इस मन को ठहराने के लिए अजपा जाप वगैरा देते हैं, कुछ जप भी देते हैं। लेकिन जप से अन्दर का साधन कम बनता है, क्योंकि जुबान चलती रहती है और मन कहीं घूमता रहता है, साधन बनता नहीं, समाधि लगती नहीं। जिस तरह गुरु कबीर ने कहा है कि –

माला तो कर में फिरे, जिहवा फिरे मुख माही।
मनवा तो चहूं दिशा फिरे, यह तो सुमिरन नाही।।

अर्थात् माला तो तुम्हारे हाथ में फिर रही है, जीभ से तुम राम–2 कर रहे हो और मन तुम्हारा चारों दिशाओं में घूम रहा है, यानी कभी कुछ

याद आ रहा है और कभी कुछ, तो यह सुमिरन करने का सही तरीका नहीं है। ऐसे तो सारा गांव जपता रहता है, लेकिन शान्ति किसी को नहीं। आजकल गुरु लोग हजारों लोगों को एकत्रित करके नाम दान दे देते हैं। नाम दान बड़ी चीज है। यह केवल एक संस्कार दिया जाता है। दूसरी बात किसी जगह किसी जीव को श्रद्धा विश्वास से दाखला दिया जाता है, ताकि वो शब्द–वाणी सुनता रहे, गुरु का वचन सुनता रहे, जिससे उसके अज्ञान का अन्धकार दूर होता जाएगा और उसे अपने अन्दर समझ, विवेक व ज्ञान हो जायेगा। इस प्रकार अनुभवी पुरुष जीव की प्रकृति के अनुसार नाम बताता है। वह भेड़ चाल में नहीं चलता। जैसे एक भेड़ चली तो सब भेड़ पीछे चल पड़ी। आजकल इन डेरों के अन्दर, इन गद्दियों के अन्दर लोगों को ऐसा उल्लू बनाया जाता है कि वो पूरी जिन्दगी बोझा ढोने के जानवर बन जाते हैं और उन्हें समझ, विवेक, अनुभव, ज्ञान नहीं होता। क्योंकि वह लकीर के फकीर हो जाते हैं। यह समझदारी का काम नहीं। यह मोक्ष का द्वार तो तभी खुलेगा जब गुरु की संगत में बैठकर समझ ली जाए कि बात क्या है? दूसरा, विवेक ले कि सही क्या है? और गलत क्या है? तीसरा, अनुभव किया जाए कि किस चीज की चर्चा कर रहे हैं, वो है या नहीं और यह काम किसी पूर्ण अनुभवी गुरु से ही होगा। जैसे मैंने पहले सत्संगों में कहा है कि मैं गुरु जी के पास पहले दिन गया और पहले ही दिन वह मोक्ष का द्वार खुल गया, जिसे शान्ति कहते हैं। तो शब्द का वाण क्या है? जब सत्संगी गुरु के सामने जाकर बैठता है तो गुरु जिस अवस्था में रहता है, उसे जुबान से शब्द के तौर पर कहता है, जो जीव के सीधे हृदय पर जाकर चोट करती है। लेकिन सबके लिए वह एक तरीका नहीं है। उनके शब्द से, उनकी वाणी से जो उनके सामने जाकर बैठते हैं तो गुरु बेहतर जानता है कि इसका मोक्ष द्वार कैसे खुलेगा और किस तरह से अन्दर से इसको अनुभव होगा? तो मोक्ष का द्वार क्या है? शब्द और प्रकाश के खुल जाने का नाम मोक्ष के द्वार का खुलना है। गुरु की वाणी,

वचन सुनने से सब बन्धन ढीले हो जाते हैं और अन्दर वाला जो नाम, धुरधाम ले जाने वाला है, वह उस कुल मालिक से मिला देगा। यह मोक्ष के द्वार का खुलना है। किसी ओर का खुला या नहीं खुला, मुझे पता नहीं, लेकिन मेरा गुरु के शब्द बाण से यह मोक्ष का द्वार खुल गया, जिसे राधास्वामी वाणी में सार शब्द कहा है और सनातन में जिसे उल्टा नाम कहा है। तो मुझे गुरु ने कौन सा बाण मारा? उन्होंने एक छोटे से इशारे में बताया कि मैंने अपने गुरु को जब वह मनुष्य रुप में थे, पूर्ण ब्रह्म का अवतार माना और मैं वहां पहुंच गया। अगर आप नहीं मानते हो तो आपका कोई नुकसान नहीं, क्योंकि धर्म केवल विश्वास का विषय है। तो मेरे मन में आया कि तू कई जगह धक्के खाकर आया है, मैं इन्हीं को पूर्ण ब्रह्म का अवतार मान लेता हूं और मैं आंख बन्द करके बैठ गया। उनमें वो नाम, वो शब्द गूंज रहा था, जिसकी चर्चा है ––''म्हारे गुरु ने मारा शब्द का बाण'' तो एक तो बाहर से बाण मारा या बात बताई कि छोटी सी बात है। यह धर्म विश्वास का विषय है। मैंने ऐसे माना, तू माने तो मान, नहीं तो कुछ नहीं होगा। यह तो बाहर जुबान से बाण मारा और दूसरा वो जिस धार या नाम के अन्दर थे, समाधि में चले गए, वह नाम उनके अन्दर गूंज रहा था। इधर मैं भी आंख बन्द करके बैठ गया और वो जो शब्द था, वो आकर मेरे अन्दर धार टकरा गई। यह मेरे गुरु के मेरे लिए शब्द बाण थे, जिससे मेरा मोक्ष का द्वार खुला और यही बात मैं अपने सत्संगों में अनुभव करता रहता हूं। मैं सत्संग देता रहता हूं और इस नाम के अनुभव में रहता हूं। तो जिनको इस नाम की सच्चे मन से तड़फ होती है, वो मेरे सामने आ जाते हैं और बाद में मुझे कहते हैं कि हमारे अन्दर आपकी कृपा से शब्द प्रकट हो गया, नाम प्रकट हो गया। तो क्या मैं वो शब्द का बाण मारता हूं। नहीं भेद यह है कि मैं सत्संग में उस सच्चाई का अपने टूटे फूटे शब्दों में बयान करता हूं। दूसरा मैं उस अन्दर के नाम में रहता हूं, जो गुरु जी ने बताया था। लोग सच्चे मन से आते हैं और उनका काम हो जाता है,

लेकिन मेरा उसमें हाथ नहीं है। यह उनका ही विश्वास होता है। जैसे चुम्बक कच्चे लोहे को खींचता है, पत्थर को नहीं। तो यह मोक्ष का द्वार आपके अन्दर है, जो गुरु कृपा से खुलता है।

शब्द में आगे कहा है –''यो मन योद्धा लड़े लड़ाए, ना जीता ना हारा'', मारे से वो कबहु न मरता, जन्म–मरण से न्यारा'' अर्थात् ये जो मन नाम का सुमिरन, ध्यान करता है, यह न जीतता है, न हारता है और न यह मारने से मरता है। मेरे अनुभव में मन का मारना यह है कि मन में समझ आ जाती है, विवेक हो जाता है और वह सम हो जाता है। यह न जन्मता है, न मरता है। फिर कहा है ––''मान गुमान छोड़ सब मन का, घट में हो उजियारा'' अर्थात् जब मनुष्य अपना मान गुमान छोड़ देता है, तभी वह आत्मपद में ठहर सकता है और प्रकाश का अनुभव कर सकता है। लेकिन इस मान गुमान का छुटना बड़ा मुश्किल है, क्योंकि यह सबका दुश्मन है। जैसे कहते हैं ––

''कंचन तजना सहज है, सहज त्रिाया का नेह।
मान बड़ाई ईर्ष्या, दुर्लभ तजना यह।।

यानी अहंकार जबरदस्त रोग है। जैसे नानक जी ने कहा है –

''होंमे दृग रोग है, दारु भी इस माही''

और यह घमण्ड जब तक रहता है, आदमी आगे नहीं जा सकता। जैसे कहा है ––''सर्व की रैन जा का मन होई नानक जाप जपे सोही''। अर्थात् जिसका मन सबके चरणों की धूल बन जाता है, सबसे छोटा बन जाता है, वही यह जाप जप सकता है और मालिक का सुमिरन ध्यान कर सकता है। शब्द में आगे कहा है ––''मूर्ख मानस पढ़–2 गावै, खुले नहीं पटशाला'' अर्थात् मूर्ख लोग हर जगह पढ़–2 कर गाते रहते हैं और थोड़ी देर उस आवाज का आनन्द लेते हैं, लेकिन उनका वो अन्दर का रास्ता मोक्ष का द्वार, शब्द, प्रकाश का नाम नहीं खुलता। फिर आगे कहा –''अजपा का तू सुमिरन कर ले, निःअक्षर से न्यारा'' यहां 'अजपा' उस अवस्था को बताया है, उस

नाम की चर्चा की है जो बिना अक्षर से आता है। यानी एक तो हम राधास्वामी या राम नाम जिसका जो विश्वास है, वो नाम जपते हैं और दूसरा अजपा जो मुंह से नहीं बोला जाता अपितु अपने आप अन्दर से आता है। और यह गुरु बेहतर जानता है कि किसको क्या देना है? क्योंकि एक ही ज्ञान सबके लिए नहीं है। जिस तरह डाक्टर एक ही दवाई सबको नहीं देता, रोग को देखकर ही दवाई देता है, इसी तरह अनुभवी पुरुष जीव को देखकर सही रास्ता बता देता है। फिर कहा ––''ब्रह्मा विष्णु दया महेश्वर, ये तो उर आई न गंवारा'' अर्थात् ब्रह्मा विष्णु महेश्वर ये तीन देवता माने जाते हैं। कबीर जी के अनुभव में ये तीनों नीचे रह जाते हैं। जिस तरह गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं –

गो गोचर जहां लग मन जाई।
सो माया करत जानो भाई।

यानी जहां रंग रुप रेखा है वहां पर मन माया की मिलौनी है और कबीर का यह अनुभव बहुत ऊंचा है, मेरे अनुभव से मिलता है क्योंकि मेरे अनुभव में सार शब्द और सुरत के सिवाय कुछ नहीं है। फिर कहा – ''ओहं सोहं आवे जावे, ये नहीं करतारा, कहे कबीर सुनो भाई साधो, सत् शब्द लिया धारा'' यहां कबीर जी कहते हैं कि कई साधुओं का यह ओहं सोहं का साधन हैं यानी प्राणायाम योग है। यह आता है और जाता है, यानी स्थिर नहीं है और न ही यह करतारा यानी कुल मालिक है। लेकिन मैंने तो उस सत् शब्द का आधार ले लिया है, उसका सहारा ले लिया है, जो न कभी आता है और न कभी जाता है। वह अजर अमर है, यानी हमेशा कायम है और उसी के अन्दर समा करके परम शान्ति और परम आनन्द को प्राप्त होता है।

तो आज के सत्संग में मैंने अपनी टूटी–फूटी भाषा में कबीर के इस शब्द को समझाने का प्रयास किया है कि वो मोक्ष का द्वार क्या है और क्या गुरु ने बाण मारा? गुरु जीव को उस रास्ते पर लाने के लिए अपने ज्ञान से उसकी प्रकृति को देखकर वह बात

बताता है, जिससे उसका मन धुल जाता है और फिर जब उसे यकीन हो जाता है और उसके मन में तड़फ उठती है तो गुरु ज्ञान से उसके अन्दर का शब्द या प्रकाश खुल जाता है। आज का सत्संग इतना ही काफी है। सबको राधास्वामी।

(19)

स्थान : दांदू
दिनांक : 18.5.98

शब्द– तेरा दर्श पाने को जी चाहता है। खुदी को मिटाने को जी....
पिला दे ओ साकी राम नाम की मस्ती.....
जब अपने ही दिल में खुदाई है, काबे में सजदा कौन करे...

राधास्वामी। प्यारे सत्संगी भाई–बहनों। अभी आपने डा0 कमला से ये छोटे–2 नगमें या शब्द सुने, जो उर्दूनामा है। यानी जिसमें उर्दू के शब्द हैं। यहां पर भी वही गुरु भक्ति या मालिक से मिलने की बात है। यह विशेष बात है कि भक्त जब भक्ति शुरु करता है तो उसके अन्दर धार्मिक भावना उत्पन्न होती है मालिक के प्रति श्रद्धा, विश्वास बनता है, वह गुरु धारण कर लेता है तो उसको इष्ट बनाता है और उस इष्ट से प्यार करता है। क्योंकि प्यार हम अपने जैसे इन्सान से ही कर सकते हैं, बुत से प्यार करना मुश्किल है। वो अलग बात है कि हजारों करोड़ों में कोई एक दो मीरा जैसी हो, जो मूर्ति को सब कुछ समझ करके नाचती हैं, गाती हैं, उससे प्यार करती है। पर आमतौर पर ऋषि मुनियों ने, सन्तों ने इस का अनुभव किया कि किसी जीवित महापुरुष को इष्ट मान कर उससे प्यार किया जाये तो लाभ होगा। तो यहां कहा है ''तेरा दर्श पाने को जी चाहता है'' यानी भक्त ने गुरु बनाया और उससे इतना प्यार हो गया कि उसको कुल मालिक मानकर उससे मिलने को जी चाहता है, दर्शन करने को जी चाहता है, खुदी को मिटाने को जी चाहता है। खुदी का मतलब समाधि लगने से है और यह खुदी तभी मिटती है

जब हमारी बुद्धि से ये जितने संकल्प–विकल्प उठते हैं, वो सब समाप्त हो जायें और खुदी मिटने के बाद ही अन्दर का अनुभव और अन्तर का वो सुख देने वाला परम शान्ति का रास्ता खुल जाता है और यदि रिवाज के तौर पर गुरु बना लिया, उससे प्रेम नहीं किया तो कोई लाभ नहीं होगा। यह तो प्रेम का मार्ग है और यह प्रेम ऐसा हो कि ''दिलों जां लुटाने को जी चाहता है'' यानी ऐसी तड़फ, प्यार, उमंग न हो तो काम बनता नहीं। फिर कहा –''उठी राम तेरी मुहब्बत की दरिया, मेरा डूब जाने को जी चाहता है'' यानी मैं आप के प्रेम के अन्दर, आपकी भक्ति में, आपके प्यार में डुबकी लगाना चाहता हूं। जब भक्त को ऐसी तड़फ हो, तब जाकर अगला रास्ता खुलता है। फिर कहा –''गमी जीस्त देकर जुदा करने वाले, तेरे पास आने को जी चाहता है'' अर्थात् यह काल भगवान् की लीला है, यहां जो माया है, वह मनुष्य को आपके रुप से अलग कर देती है, यानी मालिक से अलग कर देती है। यहां माया का पर्दा है। यदि यह माया का पर्दा हट जाए तो जीव को साक्षात्कार हो जाता है। इसलिए भक्त कहता है कि हे महाराज। ये जो आपने पर्दा डाल कर मुझे अपने से अलग कर दिया है, इसे आप कृपा करके हटा दें, क्योंकि मेरे अन्दर आपके दर्शन की तीव्र इच्छा है। फिर कहा – ''ये दुनिया है सारी नजर का ही धोखा, इसे ठुकराने को जी चाहता है'' अर्थात् जब तक भक्त को दुनिया की तरफ से वैराग नहीं हो जाता, उसका अगला रास्ता खुलता ही नहीं है। यानी अन्दर जो वज्र का दरवाजा है, पर्दा पड़ा हुआ है, वह हटता नहीं है और वह दुनिया के नजारों में अपने घर का रास्ता भूल जाता है तथा मोहा जाता है। जो भक्त बाहरमुखी से अन्तरमुखी बनना चाहता है तो अन्तरमुखी बनने के लिए किसी महापुरुष की, उसकी संगत की व दर्शन की अत्यन्त आवश्यकता है। फिर कहा है –''न ठुकराओ मेरी फरियाद अब तुम, तुम्हीं में समाने को जी चाहता है'' अन्त में भक्त अपने इष्ट से विनती करते हुए कहता है कि हे मालिक। आप मेरी फरियाद या प्रार्थना अस्वीकार न

करें। आप से ही अलग हुआ मैं आपके अन्दर ही समाना चाहता हूं, आपके अन्दर ही मिल जाना चाहता हूं। बात यह बहुत ऊंची है और शुरु का बुनियादी दर्जा है और जो भक्त इस तरह से अपने सतगुरु से प्यार नहीं करता और यह सब कुछ नहीं समझता तो उसका अगला रास्ता खुलता नहीं है। वो ज्ञान ले ही नहीं सकता।

अगले नगमें में भक्त मालिक से प्रार्थना करता है कि हे मालिक। आप मुझे वह राम नाम की मस्ती या शराब पिला दें, जिसका नशा मुझे चढ़ा रहे और वह खुमारी कभी न उतरे। इसके लिए मैं आपकी शरण आया हूं और मैंने अपना सब अहंकार समाप्त कर दिया है। मैंने अपने आपको आपके चरणों में समर्पित कर दिया है। आप कृपा करके मुझे उस नाम की अधिक नहीं तो एक ही बूंद पिला दें, ताकि मेरा मन ठहर जाए और मैं आपके दर्शन कर सकूं। आप मुझे उस नाम दान की बख्शीश करें और मेरी प्यास बुझाए। इस राम नाम की बूंद को पाने के लिए मैं हर प्रकार की कुर्बानी देने को तैयार हूं। उसे पाने के लिये मेरा मन तरस रहा है। सभी जिज्ञासु भक्तों को नाम की ऐसी ही प्यास रही है। जैसे राजा जनक ने इस नाम को पाने के लिए अपना तन–मन–धन सब कुछ समर्पित कर दिया। इसी प्रकार राम नाम की बूंद पीने वाले सभी महात्माओं ने बड़ी–2 कुर्बानियां दी हैं। इसीलिए भक्त कहता है कि सिर देने से भी अगर वह राम नाम की बूंद मिल जाए तो भी मैं इसे सस्ती ही जानता हूं। मुझे इसके रंग की कोई फिकर नहीं है, चाहे कैसा भी रंग हो, आप मुझे उस राम नाम की बूंद को एक बार चखा दें। जैसे शराब पीने वालों को शराब पीने में आनन्द आता है और उनमें वह नशा देर तक बना रहता है, उसी प्रकार साधकों को अन्दर में उस राम नाम की बूंद पीने का आनन्द आता है और उनमें वह नशा बना रहता है। अन्तर केवल इतना है कि शराब का नशा थोड़ी देर रहता है और वह राम नाम का नशा उतरता नहीं। जैसे गुरु नानक देव जी ने कहा है कि –

राते पी नानका उतर गई प्रभात।
नाम खुमारी नानका चढ़ी रहे दिन रात।।

अब इस शब्द का तो मुझे पता नहीं। मेरा इसका अनुभव है। मैं अधिक समय इस नशे में रहता हूं। जहां भी जाता हूं मोटर या गाड़ी में, इस नशे के बिना मुझसे रहा नहीं जाता। सिर झुकाता हूं और फट नशा हो जाता है।

नगमें में भक्त दीन होकर मालिक से प्रार्थना करता है कि हे मालिक। केवल एक बार मुझे उस राम नाम की बूंद को चखा दो जिससे मेरी वृत्ति टिक जाए। अर्थात् एक बार आप मेरी समाधि लगा दो। आपकी कृपा से एक बार मैं अन्दर गोता लगा जाऊं तो नशा कर लूं। उस अन्तर के अनुभव से मुझे पता चल जाए कि वह क्या है? उसका क्या स्वाद है? यहां भक्त को इतनी तड़फ है कि वह एक बार उस राम नाम की मस्ती में डूबना चाहता है और उसके लिए वह हर कीमत चुकाने को तैयार है तथा उसे दुनियां की कोई परवाह नहीं है। अब प्रश्न उठता है कि वह राम नाम की बूंद कैसे प्राप्त हो? कैसे हमारी समाधि लगे? इसके लिए जरुरत है कामिल मुर्शिद की, जो हमारे संकल्प–विकल्प को ज्ञान से छुड़वा देते हैं। जो खुद अनुभवी हैं वह गुरु कृपा करके जीव का जैसा संस्कार है, वैसा उसको इशारा करके उस दलदल से निकाल देते हैं और विचारों से मुक्त कर देते हैं और उनको राम–नाम की बूंद का चस्का मिल जाता है। फिर वो अन्तरमुखी बन जाते हैं और जब अन्दर उनको राम नाम की बूंद का रस आने लग जाता है, तो उनकी आदत पड़ जाती है और उनकी हालत मछली जैसी हो जाती है कि बिना राम नाम की बूंद पिए उनको चैन नहीं आता। जैसे यह डा0 कमला बैठी है। यह कहती है कि जिस दिन मेरी समाधि न लगे, उस दिन मुझे बड़ी बेचैनी रहती है। ऐसा लगता है जैसे मैंने सब कुछ खो दिया है। क्योंकि इसने गुरु कृपा से वो चीज चख ली है और यह उसकी तरफ चलती रहती है। यह बताने की बात नहीं है, अनुभव करने की है। इसके अनुभव

से ही जीव को परम सुख, शान्ति व आनन्द मिल सकता है।

अगले नगमें में गाया है – ''जब अपने ही दिल में खुदाई है, काबे में सजदा कौन करें''? सजदा का अर्थ है पूजा या प्रार्थना। यहां पर भक्त को अनुभव हो गया है और वह कहता है कि जब अपने ही अन्दर वह मालिक बैठा है तो मैं बाहर काशी, मथुरा, द्वारका कहां जाऊं? क्यों बाहर जाकर मैं पूजा करुं? यहां पर भक्त का बड़ा ऊंचा भाव है। वह उस मालिक के अन्दर ही समा जाना चाहता है, उसी में लीन होना चाहता है। वह कहता है कि हे मालिक, आप कृपा करके मुझे अपने अन्दर मिला लें, जिससे मैं कोई पाप कर्म न कर सकूं और मुझे आपसे अपने गुनाहों की माफी मांगने का अवसर ही न मिले अर्थात् मैं सदा के लिए आपके अन्दर ही मिल जाऊं। आगे भक्त कहता है कि मैंने अपने आपको पूरी तरह आपके हवाले कर दिया है। मैं आपकी शरणागत हूं। आप मेरे सब कुछ हैं। आप मेरे सामने आओ और मैं आपकी पूजा करुं तो उस सेवा का आनन्द ही कुछ और है। लेकिन यहां तो पूजा की यह स्थिति है कि सुमिरन, ध्यान तो आपका कर रहा हूं और मन मेरा चारों तरफ घूम रहा है। जैसे कबीर जी ने कहा है –

माला तो कर में फिरे, जिह्वा फिरे मुख माही।
मनवा तो चारों दिशि फिरे, यह तो सुमिरन नाही।।

अर्थात् यह सच्ची पूजा नहीं, दिखावा है। और ज्यादातर लोगों की हालत ऐसी ही होती है। पूजा करने वालों की पूजा बनती नहीं, क्योंकि मन एकाग्र नहीं होता। यह तरीका गुरु बताता है, जिससे जीव का मन इकट्ठा हो जाता है और वह अन्दर डुबकी लगा जाता है। और उसका इष्ट उसके सामने आ जाता है। तब गुरु उसे भेद देता है कि बेटा, बेटी। यह जो इष्ट तेरे सामने प्रकट हुआ है, यह तो तेरा मन ही है, जो तेरे अन्दर प्रकट हुआ है। यह रुप वह मालिक नहीं है। और गुरु ज्ञान से जब साधक का पर्दा उठ जाता है, भेद खुल जाता है और उसे रहस्य समझ में आ जाता है कि यह तो मैं

खुद आप ही था। वो अपना मन आप ही होता है तो वह दोबारा मन पर नहीं ठहरता और साधन में ऊपर चला जाता है, जहां जबरदस्त प्रकाश और शब्द आ जाते हैं, वो प्यारा आ जाता है। इसके बाद वह गैर की पूजा नहीं करता। भाव यह है कि सतगुरु कृपा करके जीव के अज्ञान का पर्दा हटा देता है और उसे सच्चा ज्ञान देता है, तब जीव को यह विवेक हो जाता है कि मालिक उसके अन्दर है, उसके साथ है और वह अपने अन्दर डुबकी (गोता) लगाता रहता है। उसकी बाहर की भटकन छूट जाती है और वह अपने आप में ठहर जाता है। यही परम शान्ति की अवस्था है। आज का सत्संग इतना ही काफी है। सबको राधास्वामी।

(20)

शब्द

सत्संग करत बहुत दिन बीते, अब तो छोड़ पुरानी बात।
कब लग करो कुटिलता गुरु से, अब तो लो गुरु को पहचान।
गुरु को तुम मानुष मत जानो, वह है सतपुरुष की जान।
जैसे तैसे मन समझाओ, धर प्रतीत करो नित ध्यान।

.....

राधास्वामी। प्यारे सत्संगी भाई–बहनो। अभी आपने यह राधास्वामी वाणी का शब्द सुना। इसमें कहा गया है कि किसी जीते जागते महापुरुष को परमात्मा मान कर उसका ध्यान करो। आप क्या चाहते हो, वही प्राप्त होगा। इससे पहले जितने सत्संग आपने सुने हैं, मैंने महापुरुषों के अनुभव के शब्दों के साथ अपने जीवन का अनुभव मिलाते हुए जैसा मैंने समझा, वैसी व्याख्या कर दी। वास्तव में मैं नहीं जानता कि उन महापुरुषों का क्या भाव था? परन्तु जैसे मैंने समझा और अपने जीवन में अनुभव किया वैसे कहा है। हो सकता है उन महापुरुषों का कोई और भाव हो, परन्तु मैंने अपने अनुभव के साथ

जैसा मेल खाता था, वैसी व्याख्या की है। अतः कोई दावा नहीं कि जो मैंने कहा है, वही सत्य हो।

इन सत्संगों में मैंने ज्यादा साधन–अभ्यास और आन्तरिक योग सम्बन्धी बातें लिखी हैं। परन्तु अधिक आदमियों का जीवन कुछ और तथा कठिनाइयां व समस्याएं कुछ और हैं, जिसके कारण उनका ये जीवन रसदार, खुशी और प्रसन्नता का नहीं है। हो सकता है कि पिछले महापुरुषों का इस लोक का जीवन दुःख, कष्ट का रहा हो या उनको यहां से पूरा वैराग रहा हो, जिसके कारण उन्होंने परलोक की बातें और वहां के सुख आनन्द की चर्चा अधिक की है और इस दुनिया के जीवन को दुःख, कष्ट व क्लेश का माना है।

प्यारे सज्जनो। मेरा अनुभव इसके प्रतिकूल है। मैंने यह समझा है कि यह लोक परमात्मा ने मनुष्य के लिए सभी प्रकार के सुख, आनन्द का अनुभव करने के लिए बनाया है। मेरे साथ ऐसा गुजरा कि शुरु से लेकर आज अस्सी साल की आयु तक मैंने अति आनन्द, अति प्रसन्नता का जीवन बिताया है और मैं इस दुनियां को परमात्मा का अति सुन्दर बगीचा आज समझ रहा हूँ और दुःख नाम की वस्तु मेरे अनुभव में नहीं आई है। ये दुःख सुख मनुष्य के स्वयं बनाए हुए हैं। यानी जैसा विचार या कर्म उसने किया है, वैसा ही फल उसको मिल रहा है। इसलिए धन्य है हमारे पहले महापुरुष जिन्होंने परम शान्ति व परम आनन्द इस शरीर को छोड़ने के बाद भोगने के बारे में लोगों को बताया है और अपने सत्संगों में अधिकतर परलोक की ही चर्चा की है। मेरा अनुभव यह है कि शरीर छोड़ने के बाद किसी महापुरुष ने आकर यह नहीं कहा कि वो कहां गए हैं और क्या सुख भोग रहे हैं?

जिन सुखों की चर्चा महापुरुषों ने की हैं, उनका मैं इसी जीवन में शुरु से लेकर आज दिन तक इसी लोक में शारीरिक, मानसिक व आत्मिक रुप से अभी अनुभव कर रहा हूं और जो साधन–अभ्यास की बातें लिखी हैं यानी समाधि का सुख व आनन्द

बताया है जिसका शिखर व अन्तिम मंजिल 'ऊँ शान्ति शान्ति' है, उसका अनुभव अभी कर रहा हूं। और जिस मुक्ति की चर्चा शास्त्रों में महापुरुषों ने की है, उसकी अनुभूति लगभग दिन और रात के समय जब मैं होश में होता हूं यानी चेतनता में होता हूं, खाते–पीते, उठते–बैठते सहज में बिना किसी परिश्रम या यत्न के करता रहता हूं। कल का मुझे पता नहीं कि उस मालिक की क्या मौज हो? दूसरा, शरीर छोड़ने के बाद भी नहीं कह सकता कि कहां जाऊंगा और क्या मेरे साथ गुजरेगी? और न मुझे इस बात की फिकर है, क्योंकि ये सब मालिक की मौज का खेल है, जिसको कोई नहीं जान सकता है। कहा गया है कि ''खुदा की खुदाई को खुदा ही जाने''।

यदि मुझे वापिस आना पड़ा तो मैं अपने प्यारे गुरु महाराज जी का मिशन 'मानवता' का प्रचार करुंगा और मनुष्य जाति को किस तरह से इस दुनियां को स्वर्ग बना कर रहें, यह बताऊंगा। अभी तो मैं बताने की तैयारी ही कर रहा था कि तैयारी–2 में ही मेरी उम्र अस्सी साल की हो गई। लेकिन आज भी मेरे मन में बहुत ही उमंग है, प्रसन्नता है कि मैं मनुष्य जाति को मेरे गुरु महाराज परम दयाल (पं0 फकीरचन्द) जी का ज्ञान समझा कर इस लोक का जीवन सुख, शान्ति व आनन्द से जी सकें, ऐसा बताऊं। तो आप समझ गए होंगे कि मेरे दोनों हाथों में लड्डू हैं। यदि अन्त समय सार शब्द या निज नाम का अनुभव जिसे मैं हर समय कर रहा हूं, यही रहा तो ये बूँद रुपी मेरी आत्मा उस समुद्र स्वरुप परमात्मा में मिल जाएगी और यदि मालिक ने मेरे से और काम लेना है तथा मुझे वापिस इस लोक में आना पड़ा तो मुझे बेहद खुशी होगी क्योंकि इस लोक का जीवन ही मैंने स्वर्ग जैसा समझा है और ऐसा ही मैं अनुभव कर रहा हूँ। इसका अर्थ यह नहीं कि मुझे कोई शारीरिक कष्ट नहीं आता है। मेरी स्थिति यह है कि जब कोई कष्ट आता है तो मेरा खून बढ़ जाता है और मैं बीमारी का आनन्द लेता हूं तथा उस मालिक का धन्यवाद करता हूं।

कहने का भाव यह है कि यह लोक विचारों का है। जैसे जिसके विचार हैं, वैसे ही उसका जीवन बन जाता है। यानी परमात्मा पूर्ण है और उसने ये जो दुनियां बनाई है, यह भी पूर्ण है। जैसा ईशोपनिष्द में कहा है–

ऊँ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।।

अर्थात् उस मालिक के दरबार से मनुष्य क्या चाहता है? वही उसको मिल जाता है। यह सिद्धान्त है कि जैसा तुम बोओगे, वैसा ही काटोगे। जैसे किसान अपने खेत में यदि गेहूं बोएगा तो गेहूं, चने बोएगा तो चने और ईक्ख बोयेगा तो ईक्ख ही काटेगा। बात साफ है कि मनुष्य चाहता तो है सुख और देता है वह दुख। यह बात एक परिवार से लेकर पूरी दुनियां के मनुष्यों पर लागू है। परन्तु पहले हम घर से शुरु करते हैं, जिसको कहा है – ''Charity begins at home'' यानी दान घर से शुरु होता है। यदि हम मन–वचन–कर्म से जिनसे हमारा सम्पर्क है, उनको सुख देंगे तो हमारे ऊपर सुख की वर्षा होती रहेगी। परिवार पति–पत्नी से शुरु होता है। यदि वह इस बात को समझ जाए कि हम एक दूसरे से प्रेम करें और मन–वचन–कर्म से सुख दें तो उनका जीवन सुन्दर बन सकता है। उसके बाद मां–बाप, भाई–बहन तथा और कोई आश्रित सम्बन्धी तथा घर के नौकर इत्यादि शामिल हैं। मन से हमें भला सोचना चाहिए, जुबान से मीठा बोले और यत्न करें कि हमें सेवा का मौका मिले। लोग आश्रमों में जा–जाकर तथा तीर्थ स्थानों में जाकर गुरु–पीरों की व संगत की सेवा करते हैं, परन्तु जिनके पास रहते हैं जैसे अपने मां–बाप, भाई–बहन, पति–पत्नी उनकी तरफ ध्यान नहीं देते और उनका मन दुखाते रहते हैं तथा वैसे धर्मात्मा बन कर साधन–अभ्यास योग इत्यादि करते हैं। इससे कोई लाभ नहीं होगा। जैसे गुरु नानक देव जी ने कहा है –

घर सुख बसिया तो बाहर सुख पाया।

कहे नानक गुरु मन्त्रा दिलाया।।

तो जो चीज आप चाहते हो, वो चीज पहले दो। प्रेम चाहते हो तो प्रेम करो, सेवा चाहते हो तो सेवा करो, सुख चाहते हो तो सुख दो, धन चाहते हो तो दान दो। यह काम पहले अपने घर में करो। बाहर कहीं जाने की जरुरत नहीं है। लेकिन हमारी हालत यह है कि हम चाहते तो हैं आम और बोते हैं बबूल। देते तो हैं दुख और चाहते हैं सुख। बात साफ है कि जो चीज हम चाहते हैं, वही बोएं। जैसे घरों में बहुएँ सास को दुख देती हैं या सास बहुओं को दुख देती हैं, बेटे बाप को दुख देते हैं। अतः मन–वचन–कर्म से शुद्ध रहे और इस लोक को ही स्वर्ग बनाएं। अगला लोक है, परन्तु देखा तो नहीं। इसलिए कहा है कि –

जाको दर्शन इत है, वाको दर्शन उत।
जाको दर्शन इत नहीं, वाको इत न उत।

यहां जो कुछ मैं कहना चाहता हूं या बताना चाहता हूं, बता नहीं सकता हूं। परन्तु यदि कोई इस रहस्य को जानना चाहता है और अनुभव करके सन्तुष्टि चाहता है, वह इच्छा लेकर यदि मेरे सत्संग में पूरे ध्यान से मुझे देखता रहे और सुनता रहे तो यह बात अनुभव में आ सकती है। यह मेरा अहंकार नहीं है। आज विज्ञान ने इस बात को सिद्ध किया है कि हर आदमी एक Radio Station है और उससे Radiation (धारे) निकलती रहती हैं और जो उस विचार का आदमी है, वह यह Radiation (धारें) ग्रहण कर लेता है। जैसे मैंने पहले लिखा है कि मेरे खुद के साथ यह बात बीती है और जो भाई–बहन मेरा विश्वास करके ध्यान करते हैं, उनके अन्दर मेरा स्वरुप प्रकट होकर उनकी मदद करता है और नई–2 बातें बताता है, जिनका मुझे ज्ञान नहीं। तो प्रमाणित यह हुआ कि यह शक्ति आदमी के मन में है। सिद्धियां, सुख, प्रसन्नता जो कुछ भी वह चाहता है, अपना इष्ट बना कर उसका ध्यान करने से उसका मन एकाग्र हो जाता है और जो कुछ वह चाहता है, उसको सहज में ही प्राप्त हो

जाता है। बात साफ है कि शक्ति इष्ट में नहीं, शक्ति इष्ट को मानने वाले में है। यदि यह बात महापुरुष अपने सत्संगों में साफ बता दें तो मनुष्य की भटकन छूट जाये और वह आज इस गुरु के पास, कल उस गुरु के पास या देवी–देवताओं के स्थानों पर धक्का न खाए। आज का सत्संग इतना ही काफी है।

सबको राधास्वामी।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] ।

॥ [illegible] ॥

[illegible] ।।।